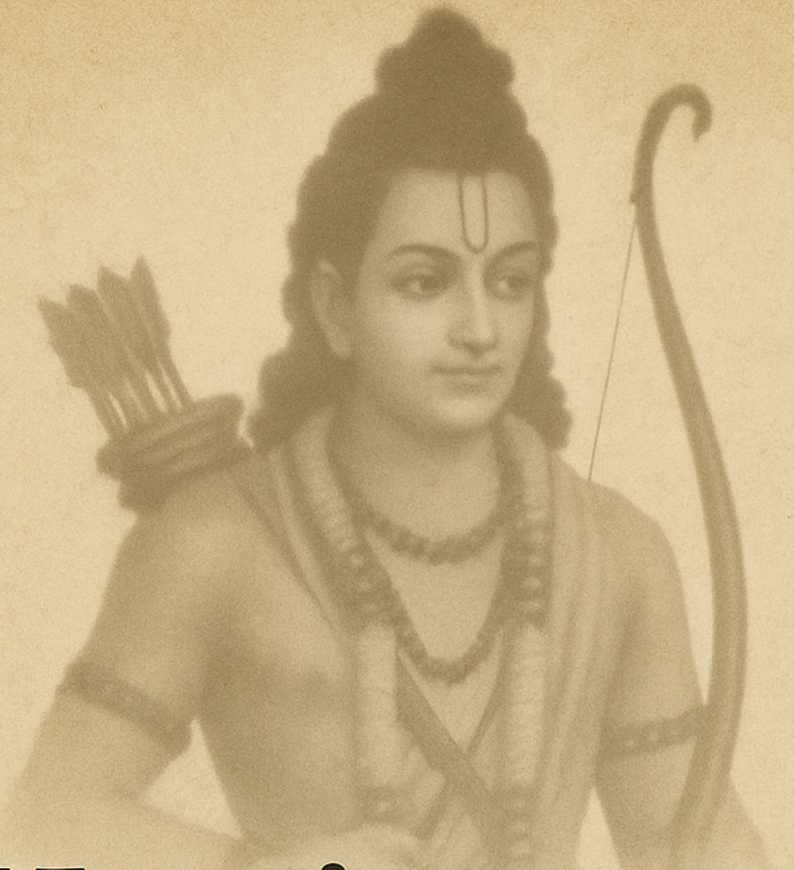

Kavitavali

OF

GOSWAMI TULSIDAS

Commentary by

MAHATMA BAIJNATH KURMI

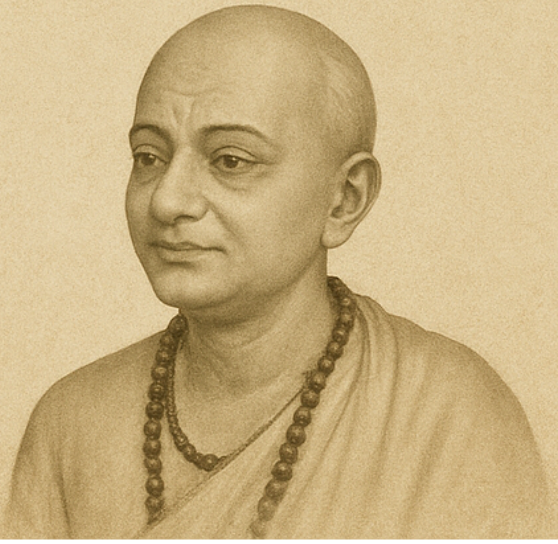

東京外國語大學
157383
47.3.31
図書館蔵書

कवितावलीरामायण सटीक।

वन्दना।

शीर्षे दिव्यकिरीटमक्षममलं गण्डस्थले कुण्डलम्
श्यामाभामरविन्दकोमलतनुं पीताम्बरालंकृतम् ॥
पाणौ कार्मुकशायकं कटितटे तूणीरभारान्वितम्
कान्तं पापभयापहं सुखकरं तं जानकीशं भजे १
नगाग्न्यङ्कचन्द्रेसितेषाढमासे त्रिदश्यां रवौ रोहिणीमध्यकाले ॥
विदेहात्मजानाथपादाब्जयाहं कवित्तावलीरत्नदीपं करोमि २

दोहा। श्रीजानकि जानकिरमण गुरु पद करौं प्रणाम ॥
जिनकी कृपा कटाक्ष ते सब पूरण मनकाम ३
गुरु सिय वल्लभ शरण कहि बैजनाथ पितुधाम ॥
रसिकलता सिय कल्पतरु सेवित आठौयाम ४
कीरति सुयश प्रताप गुण प्रभु के वेद सुगाव ॥
सबके रूप उदाहरण बरणौं सहित सुभाव ५

कीरति यथा।

होत जु अस्तुति दानते कीरति ताहि बखान ॥
दीनन जीते दान दै गुरुजन करि सनमान ६

यश यथा।

धर्मनीति बल बाहुते प्रकटत यशको थोक ॥
बाणन ते जीते बली सत्यानन सों लोक ७

昭和46年度特定研究経費・図書
寄贈
東外大・東洋文化研
合同海外学術調査団 氏

प्रताप यथा।

शत्रु डरै सुनि कीर्त्ति यश ताको नाम प्रताप ॥
खग सुकंठ खर बालि सुनि डरे निशाचर आप ८

गुण यथा।

चाहत व्यापक वशिकरन जग प्रशंस गुण सोइ ॥
विभुप्रेरक मोहन शरणपाल शीलनिधि होइ ९
तीनि भांति लीला सगुण गातक चारि विधान ॥
मागध बन्दी सूत अरु अर्थी चौथ प्रमान १०
प्रकृति मयी माधुर्य है साम्रस्ती ऐश्वर्य ॥
मिश्रित लीला तीसरी मिलि ऐश्वर्य मधुर्य ११
मागध मधुरी कीर्ति की ऐश्वर्य बन्दि प्रताप ॥
पौराणिक मिश्रित यशै सब गुण स्वारथि आप १२
त्रैलीला कीरति सुयश गुण गण सहित प्रताप ॥
सबको वर्णन जासुमें रामचरित त्यहि थाप १३

भूमिका।

पौराणिक भावकरि गोसाईंजी रामचरितमानस प्रथम वर्णन करेउ॥ पौराणिक भाव यथा॥ कहौं रामकी कथा सुहाई। सादर सुनहु सुजन मनलाई॥ तहां श्रेष्ठ वक्ता अधिकारी करे॥ यथा॥ रामचरित मुनिवर्य बखानी। सुनी महेश परमहित मानी॥ पुनः॥ भरद्वाज मुनि प्रश्न किय याज्ञवल्क्य मुनिपाइ॥ याज्ञवल्क्य जो कथा सुहाई। भरद्वाज मुनिवर प्रति गाई॥ पुनः॥ सुनु शुभ कथा भवानि रामचरितमानस विमल। कहा भुशुण्डि बखानि सुना बिहँगनायक गरुड़॥ लीला यथा॥ गुरु गृह गये पढ़न रघुराई॥ इति माधुर्य॥ जाकी सहज श्वास श्रुतिचारी॥ इति ऐश्वर्य॥ सो प्रभु पद यह कौतुक भारी॥ इति मिश्रित॥ निज निज रुचि सब लेहिं बुलाई। सहित सनेह जाहिं द्वौभाई॥ इति माधुर्य॥ निमिषमात्र महँ भुवन निकाया। रचै जासु अनुशासन माया॥ इति ऐश्वर्य॥ भक्ति हेतु सोइ दीन दयाला। चितवत चकित धनुषमखशाला॥ इति मिश्रित॥ स्तुतिते कीरति यथा॥ गुरु आगमन सुनत रघुनाथा॥ अरु॥ राम कस न अस कहहु तुम॥ इति॥ दानते कीरति यथा॥ मुनि दुर्लभ जो परमगति तोहिं दीन भगवान॥ इति यश यथा॥ रिपुरण जीति सुयश सुरगावत॥ इति प्रताप यथा॥ जबते राम प्रताप खगेशा॥ अरु॥ जातहु मनहिं सुनी अस रामचन्द्र के राज॥ इति गुण यथा॥ जहँ तहँ नर रघुपतिगुण गावहिं॥ अरु॥ भजहु प्रणत प्रतिपालक रामहिं। शोभा शील ज्ञानगुण धामहिं॥ इति॥ अरु सिद्धान्त यह है नाम-रूप लीलाधाम परात्पर है ता प्रभुका भक्ति विना जीवको कल्याण नहीं॥ नाम यथा॥ राका रजनी भक्ति तव रामनाम सोइ सोम।

अपर नाम उडुगण विमल बसहु भक्तउर व्योम ॥ इति रूप यथा ॥ शंभु विरंचि विष्णु भगवाना । उपजहिं जासु अंशते नाना ॥ इति लीला यथा ॥ विधि हरि शंभु नचावनहारा । तेउ नहिं जानहिं मरम तुम्हारा ॥ इति धाम यथा ॥ अवध सरिस प्रिय मोहिं न सोऊ ॥ इति भक्ति यथा ॥ भक्तिहीन विरंचि किन होई ॥ इति मानसरामायण रोजनामा रामचरित को है ताके खाता विनयपत्रिका गीतावली कवितावली हैं तहां कुन्दनसे जिनके मन निर्मल प्रेमापरा भक्ति में प्रौढ़ तिनके अनुरागयुत माधुरी अवलोकन हेतु रूप की माधुरी माधुर्य लीला माधुर्य गुण मधुर कीर्ति मंगलीक मागध गायक भावकरि गोसाईंजी गीतावली गान करै हैं तहां श्रेष्ठ अधिकारी हैं शृङ्गाररस है गायक भाव यथा ॥ तुलसिदास प्रभु सोहिलो गावत उमँगि उमँगि अनुराग ॥ इति श्रेष्ठ गायक अधिकारी यथा ॥ गावत विबुध विमल वरबानी ॥ इति रूपकी माधुरी यथा ॥ रहे यकटक नरनारि जनकपुर लागत पलक कलप बितयेरी ॥ अरु ॥ निरखहु तजि पलक सफल जीवन लेखौरी । माधुर्य लीला यथा ॥ माधुरी विलास हास गावत यश तुलसिदास ॥ इति मधुर गुण यथा ॥ या शिशुके गुण नाम बड़ाई औ रूपशील गुण धामराम ॥ इति मधुर कीरति यथा ॥ कलकीरति गावत तुलसिदास ॥ इति शृङ्गाररस यथा ॥ ललित लता जाल हरति छबि वितानकी ॥ अरु ॥ मधुकर पिकवरहि मुखर ॥ इति विभाव ॥ निजकर राजीव नयन पल्लवदल रचन सैन ॥ इति अनुभाव ॥ सियाअंग लिखै धातुराग सुमन न भूषण विभाग ॥ इति चंचरी ॥ प्यास परस्पर पियूष प्रेम पानको ॥ इति अस्थायी॥ प्रभुके अनूप रूपकी माधुरी को अवलोकन सिद्धांत है यथा ॥ सखि रघुनाथ मुख छबि देखु । सखि रघुनाथ रूप निहारु ॥ इति गीतावली ॥ अथ विनय ॥ मध्या भक्तनकी आश पूर्ण करिबेको अरु कलियुग की भय निवारण अर्थ स्वार्थी भाव करि गोसाईंजी गुणन को गानयुत बिनती करै हैं तामें श्रेष्ठ स्वार्थी अधिकारी करे हैं वात्सल्य अरु शान्त रस की अधिकारता है नवधा भक्ति शरणागत हेतु है स्वार्थी भाव यथा ॥ कबहुँक कर कृपाल रघुनायक धरिहौ नाथ शीश पर मेरे ॥ इति अधिकारी यथा ॥ जाके चरण विरंचि सेइ सिधि पाई शंकरहु ॥ इति कलियुग को भय यथा ॥ कोपि तेहि कलिकाल कायर मोहिं घालत घाइ ॥ इति दादिपाइबो यथा ॥ दई दीनहिं दादि सो सुनि सुजन सदन बधाइ ॥ इति ॥ इहां सात भूमिका में विनय कीन्हीं यथा दीनता १ केहिविधि देउँ नाथहि खोरि ॥ इति मानमर्षता २ काहेते हरि मोहिं बिसारे ॥ इति भयदर्श ३ राम कहत चल ॥ इति भर्त्स ४ ऐसी मूढ़ता या मनकी ॥ इति आश्वासन ५ ऐसे राम दीन हितकारी ॥ इति मनोराज ६ कबहुँकहौं यहि रहनि रहौंगो ॥ इति विचारना ७ केशव कहि न जाइ का कहिये ॥ इति ॥ अथ गुणउदार ॥ ऐसो को उदार जगमाहीं ॥ सौहार्द ॥ जानत प्रीति रीति रघुराई ॥ दया ॥ देव दूसरो को दीनको दयाल ॥ प्रीति ॥ पुनीत परिहरि पाँवरन पर प्रीति ॥ सौशील्य ॥ सुनि सीतापति शील सुभाऊ ॥ इति नवधा यथा ॥ श्रवण कथा मुखनाम हृदयहरि शिर प्रणाम सेवा करु अनुसरु ॥ इति हेतु यथा ॥ कस मन मूढ़ राम बिसराये ॥ वात्सल्य रस यथा ॥ सुतकी प्रीति प्रतीति मित्रकी ॥ इति शांतरस यथा ॥ जो निज मन परिहरै विकार ॥ इति सिद्धान्त यथा ॥ हरिहि हरिता विधिहि विधिता शिवहि शिवता जेहिं दई ॥ सो जानकीवर मधुर मूरति ॥ इति विनयपत्रिका ॥ अथ कवितावली ॥ तहां मुग्धा भक्तनको मन दृढ़ता हेतु नाम प्रताप रूप प्रताप गुणन

को प्रताप भक्ति को प्रताप ऐश्वर्य लीला में बन्दी भावकरि कवितावली में कहे तहां उत्तम कवि अधिकारी कहे वीररसको अधिकार है बंदीभाव यथा ॥ जय जय जय जानकिरमण ॥ जय जयकार बंदीजनकी सम्प्रदाय है ॥ आशीर्वाद यथा ॥ रंकके निवाज रघुराज राजा राजनि के उमिरि दराज महाराज तेरी चाहिये ॥ इति कवि अधिकारी यथा ॥ वाणी विधि गौरि हर शेषहू गणेश कही सही भरी लोमश भुशुण्डि बहुवारषी । दशचारि भुवन निहारि नरनारि देखे नारदको परदा न नारदसो पारषी ॥ तिन कहेउ जग में जगमगात जोड़ी एक दूजी को कहैया को सुनैया चष चारषी । कहेउ रमारमण सुजान हनुमान कही सिया सी न तिया न पुरुष रामसारषी ॥ इति शोभाको प्रताप ऐश्वर्य यथा ॥ राम विरोध न राखि सकै तुलसी विधि श्रीपति शंकर सौरे ॥ इति नाम को प्रताप यथा ॥ रामनाम रावरो दाम चामकी चलाई है ॥ अरु ॥ स्वारथको परमारथको कलि रामको नाम प्रताप बली है ॥ इति रूपको प्रताप यथा ॥ लायकहैं भृगुनायकसे धनुशायक सौंपि सुभाय सिधाये ॥ इति गुणन को प्रताप यथा ॥ मति भारति पंगुभई जो निहारि विचारि फिरी उपमा न फबै ॥ याही कबित्त में गुणन को प्रताप कहब ताते इहां उदाहरण नाहीं लिखे भक्ति को प्रताप यथा ॥ जनको प्रण राम न राखे कहां ॥ इति वीररस यथा ॥ युद्ध वीर यथा ॥ राम शरासन ते चले तीर ॥ इति दानवीर यथा ॥ सो समाज महाराजजी के एक दिन दानभो ॥ इति त्यागवीर यथा ॥ राजिवलोचन राम चले तजि बाप को राज बटाऊ की नाईं ॥ इति दयावीर यथा ॥ तौलौं न दाप दल्यो दशकन्धर जौलौं विभीषण लात न मारे ॥ इति हेतु यथा ॥ जोपै जानकी नाथसों प्रीति न लाई ॥ अरु ॥ गरीबनिवाज न दूसर ऐसो ॥ औ कृपाल न दूजो

सिद्धांत यथा ॥ मनसों प्रणरोपि कहै तुलसी रघुनाथ विना दुख कौन हरै ॥ अथ चारित्र ग्रंथन को प्रयोजन गोसाईंजी को मानस को यथा ॥ मोसम दीन न दीन हित तुम समान रघुवीर ॥ अस जिय जानि कृपानिधि हरहु विषम भवपीर ॥ गीतावली ॥ तुलसिदास जिय जानि सुअवसर भक्तिदान तब मांगि लियो ॥ विनय यथा ॥ मुदित माथ नावत बनी तुलसी अनाथकी पीर रघुनाथ सही है ॥ कवितावली यथा ॥ तुलसी निहारि करि दिये सरखत है ॥

इति श्रीरसिकलताश्रितकल्पद्रुमसियवल्लभशरणागतबैजनाथकृत-कवितावलीरामायणेरत्नदीपिकाटीकायां भूमिका समाप्ता ॥

मङ्गलाचरण ।

दशस्यन्दनाङ्केस्थितानन्दधाम-
स्फुरन्नीरगात्रेतडिद्दाभवासः ॥
किरीटप्रभारत्नकेयूरहार-
श्शरण्योदयागार राम प्रसीद १

कबित्त ॥ धूमउड़ि अगर अबीर आसमान भानु झांपिगे विमानन सवारडर डारिभे । अमर मुनीश नाग मनुज सुजान साधु अनल अनिल व्योम भूमि मोद वारि भे ॥ अवउतपात कर्म तामस अनीति द्वैत मिटिगै असाधुता मलिन दैतधारिभे । धूमधाम बैजनाथ आजु कौशलेश द्वार सुवरी सुवार में कुमार सुनि चारि भे २ ॥

यहां वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण है या ग्रन्थ में प्रताप ऐश्वर्य लीला को अधिकार ताते बाललीला पंचवर्ष छांड़ि कुमार-अवस्था सों वर्णन करे कवि की उक्तितें सरस्वतीजी गईं अर्थात् सखी प्रति सखी की उक्तिः—

बालकाण्ड ।

अवधेश के द्वार सकार गई सुत गोद कै भूपति लै निकसे । अवलोकिहौं शोचविमोचन को ठगिसी रहि जे न ठगे धिकसे ॥ तुलसी मनरंजन रंजित अंजन नैन सुखंजन जातकसे । सजनी शशि में समशील उभै नवनील सरोरुह से विकसे १ ॥

हे सखी ! मैं प्रभात गई आजु महाराज कुमार के द्वार दरशावन का शुभ मुहूर्त है ताको जानि प्रभातही अवधेश महाराज के द्वार पर गई ताही समय भूपति श्रीचक्रवर्तीजी श्रीरघुनन्दन को गोद लै मन्दिर ते निकसे शोचविमोचनहारे श्रीरघुनन्दन की छवि देखतही ठगी सी रहिगई अर्थात् जिन रघुनन्दन ने मोहिनी चितवनि चितै दृगनसों ठगे कैसे हैं नेत्र तुलसी के मनरंजन कहे मन को आनन्ददायक अंजन करिकै रंजित कहे विराजमान हैं यथा खंजन के बालक पक्षिन के बालक शोभायमान नहीं होते ताते नवीन अवस्था के खंजन ऐसे अथवा हे सजनी ! सम शील के भरे दोऊ नयन मुखचन्द्र में कैसे शोभित होत यथा नील कमल नवीन कहे प्रभात कालके ऐसे लहलहे प्रफुल्लित से यामें अवधेश शब्द प्रथम कहि ऐश्वर्य प्रताप को दर्शाये यथा ॥ अयोध्यामाहात्म्ये ॥ श्रूयते महिमा तस्या मनोदत्त्वा च पार्वती॥अकारोवासुदेवः स्याद्यकारस्तु प्रजापतिः १ उकारो रुद्ररूपस्तु तान्ध्यायन्ति मुनीश्वराः ॥ सर्वोपपातकैर्युक्तैर्ब्रह्महत्यादिपातकैः २ न योध्या सर्वतो यस्मात्तामयोध्यां ततो विदुः ॥ ऐसी जो अयोध्या ताके ईश कहि प्रताप सूचित करे सो प्रताप यश कीर्ति

ते होत यथा ॥ होत जु अस्तुति दानते कीरति कहिये सोइ ॥ होत बाहुबल ते सुयश धर्म नीति सह होइ १ कीरति सों अरु सुयश सों होत शत्रु उर ताप ॥ जग डरात सब आपही कहिये ताहि प्रताप २ द्वार आयेते प्रतापवान् प्रसिद्ध सबको देखिपरे पिता को गोद कहिबो दासभाव उपासकन को ध्यान की संप्रदाय है यथा सनत्कुमारसंहितायाम् ॥ पितुरङ्कगतं राममिन्द्रनीलमणिप्रभम् ॥ इहां मन चित्तादि की वासना सोई शोच ताको सौंदर्यता बलते प्रभु छुँड़ाइ दियो अरु नेत्रन की चितवनि ठगौरी डारि मनको ठगि लियो ताते शोच विमोचन को अवलोकत ठगी सी रहगई जे न ठगे जे या रूप में मनको न लगाये ते धिक्कार योग्य अभागी हैं इहां जीवनपर दया करि शोच शत्रु को विमोचन करे यहि बलते सुयश भयो तुलसी मनरंजन तुलसी के मनको आनंद दान देबे ते कीरति भई मुख को उपमान शशि याते कहे कि चन्द्रमा शीतल है समशील कहे शत्रु मित्र दोऊपै शीलमान यथा ॥ निर्वाणदायक क्रोध जाकर भक्तिवश अवसहकरो ॥ यह सौशीलताते स्तुति सूचित करि कीर्ति भई इत्यादि कीर्ति यश सुनि शरणागत जीवन के शत्रु काम क्रोधादि आपही दबि जाइँ याते प्रताप वर्णन भयो अंजन अंजित नयन खंजन जातक से नयन उपमेय खंजन उपमान से वाचक याते धर्मलुप्तोपमालंकार है को शशि केवल उपमान कहे याते अतिशयोक्ति रूपकालंकार है उभय नवनील सरोरुह से विकसे सरोरुह उपमान से वाचक नवनील विकसे धर्म याते उपमेयलुप्तोपमालंकार है प्रथम खंजन से नेत्र कहि पीछे कमलसे कहे द्वै उपमा याते दिये कि यशमें बल चाहिये ताके हेत खंजनकी उपमा दिये भाव नख चोंच पक्षन करि समर्थ है कीर्ति में दानसुशीलता चाहिये ता हेतु मकरंद सुगन्ध-

दायक कोमल कमल की उपमा दिये याही हेतु प्रथम अवधेश फिरि भूपति भाव अयोध्या पातकादि जीतिबे में प्रबल ताके ईश यह बली नाम सुयश हेतु पृथिवी सब पदार्थकी दानी क्षमावान् ताते भूपति नाम कीर्ति हेतु कहे या कवित्त बिषे नाम रूप लीला धाम चारिहू प्रतापवान् कहे तहां अवधेश नाम रघुनाथहूजी को है सो सुनतही में प्रतापवान् है धाम में मुख्यद्वार कहि धाम प्रतापवान कहे शोचविमोचन यह लीला प्रतापवान् कहे सूर्य प्रतापवान् ते प्रभुके नेत्र हैं ताते नेत्र कहि रूपको प्रतापवान करि वर्णन करे यामें रूप माधुरी गुण है १ ॥

पगनूपुर औ पहुँचीकरकंजनि मंजु बनी मणिमाल हिये । नवनीलकलेवर पीतझँगा झलकैं पुलकैं नृपगोद लिये ॥ अरविन्द सों आननरूपमरन्द अनन्दितलोचन भृंग पिये । मनमों न बस्यो अस बालक जो तुलसी जग में फल कौन जिये २ ॥

कविकी उक्ति है पगन में सुन्दरि मणिन जड़ित पौंचा करकमल से कोमल अरुण तिनमें मनोहर पहुँची मञ्जु माणि कहे गजमुक्तन को माल हिये पर कैसी बनी है जो चित्त चोरलेत जरतारी कोर किरणी सोहत पीतरंगकी झंगुली में नव कहे कोमल श्यामलशरीर मेघ दामिनी से झलकि रहो है प्रेम ते पुलकांग सहित गोद में लिहे श्रीरघुनन्दन के मुखकमल को रूप जो मकरंद कहे रस ताको नेत्रभृङ्गन सों कहे आनन्द सों पान करत भाव नेत्र रूप में आसक्त है गोसाईंजी कहत कि ऐसो मनोहर बालरूप श्रीरघुनन्दन जाके मन में न बस्यो ताको जीवन जन्म मिथ्या है भाव जगत् फल

असार दुःखदायी है इहां करकंज में नेत्रकंज में रूप मकरंद उपमान उपमेयते रूपकहै मुख उपमेय कंज उपमानसों वाचक य धर्मलुप्तोपमालंकार है इहां सर्वांग सुभग सुठौर वर्णन ते सौंद गुण वर्णन है २ ॥

तनकी द्युति श्याम सरोरुह लोचन कंजकी मंजुल ताई हरैं। अति सुन्दर सोहत धूरि भरे छवि भूरि अनं की दूरि करैं ॥ दमकैं दँतियां द्युति दामिनि ज्यों किल कल बालविनोद करैं। अवधेश के बालक चारि सद तुलसी मनमन्दिर में बिहरैं ३ ॥

कवि की उक्ति कोमल सचिक्कण सौगन्धित श्याम कमल सी द्युति श्याम शरीरकी है अरु नेत्र आपनी शोभा के आगे कमलकी सुन्दराई को हरत हैं अथवा अन्त में चारिउ बालक कहे ताते श्रीरघुनाथजी और भरतजी के तनकी द्युति श्याम कमल सी है अरु लक्ष्मणजी शत्रुहनजी के तनकी द्युति श्वेत कमलकी सुन्दराई को हरतहै अरु नेत्र कमलसे चारिहू भाइनके हैं बालकेलि ते देह धूरिसों भरी है ताहूपर काम को समूह छविको दूरिधरत भाव धूरि करिकै शोभा मूंदती नहीं काहेते अति सुन्दर हैं ताते धूरिहू भरे शोभित हैं बालक्रीड़ा में आनन्दित ह्वै जब किलकत हैं तब मुखते दँतियन की ज्योति दामिनि सी दमकि जात ऐसे अवधेश महाराजके चारौ बालक तुलसी के मनरूप मन्दिर में सदा विहार करौ तन उपमेय श्याम धर्म सरोरुह उपमान वाचक लुप्तोपमा है नेत्र उपमेय ते कंज उपमान को निरादर औ शोभा ते काम की शोभा को निरादर याते तीसरो प्रतीपालंकारहै दँतियां उपमेय दामिनि उपमान द्युति धर्म ज्यों वाचक ते पूर्णोपमालङ्कार है कांति गुण है ३ ॥

कबहूँ शशि मांगत आरि करैं कबहूँ प्रतिबिम्ब निहारि डरैं। कबहूँ करताल बजाइकै नाचत मातु सबै मन मोद भरैं ॥ कबहूँ रिसियाइ कहैं हठिकै पुनि लेत सोई जेहि लागि अरैं। अवधेश के बालक चारि सदा तुलसी मनमन्दिर में बिहरैं ४ ॥

कवि की उक्ति कबहूं खेलिबे हेतु शशि मांगत हठि करिकै मचलात भाव कि जाको मैं चाहत ताको छांड़त नहीं कबहूं परछाहीं देखि डरत याको भाव कि यथा परछाहीं तैसे जो कोऊ सदा मेरे समीप रहत ताको मैं याही भांति डरत हौं कबहूँ हाथन सों तारी बजाइ नाचत तब सब मातन के मन मों आनन्द नहीं अमात है यामें भक्तवत्सलता देखावत कि जो मेरो सेवक होत ताके मैं सदा अधीन हौं जो कहै सोई करौं यथा भगवद्वाक्य दुर्वासाप्रति । अहं भक्तपराधीनो ह्यस्वतन्त्र इव द्विज । साधुभिर्ग्रस्तहृदयो भक्तैर्भक्तजनप्रियः ॥ कबहूँ रिसाइ हठि करि कै जो मांगत सो मचलाइकै लै लेत हैं एक समय बांदर को बच्चा मांगे तब महाराजजी ने बहुत बच्चा मँगाइ दिये सो न लिये तब वशिष्ठजी बताये कि अञ्जनीपुत्र को मांगत हैं तब हनुमान्जी को मँगाइ दिये तब प्रसन्न भये यह पद्मरामायण में प्रसिद्ध है यामें सत्य प्रतिज्ञा गुण है जो कहैं सोई करैं ऐसे चारो बालक अवधेशके तुलसी के मनरूपी मन्दिर में सदा विहार करैं व गोसाईंजी कहत कि अवधेशके चारो बालक मणिमय मन्दिर में सदा विहरत हैं ४ ॥

वरदंतकीपंगति कुन्दकली अधराधर पल्लव खोलन की। चपला चमकैं घनबीच जगै छवि मोतिन माल

अमोलन की ॥ घुघुरारिलटैं लटकैं मुख ऊपर कुंडललोल कपोलन की । निवछावरि प्राण करै तुलसी बलिजाउँ लला इन बोलन की ५ ॥

अरुण कोमल मधुर दोऊ अधर नवीन पल्लव से ताके बीच सम शोभायमान सचिक्कण चमकदार दंतन की पांति यथा कुन्दकली निसरी है गोल आबदार अमोल गजमुक्तन को माल विशाल मनोहर उर श्यामपै कैसी छवि जागत यथा सजल घनमें चपला चमकत अरु चटकीली चमकीली रसीली श्यामली घुँघुवारी लटुरियां शोभा प्रकाशमान मुखचन्द्रपै लटकि रही हैं अरु रूप पानिके भरे मैन आरसी से चमकदार अमोल गोल कपोलनपै प्रकाशमान मकराकृत कुंडल चञ्चल है चमकत हैं अधर दंत उर मोतिनमाल मुख लटुरिया कुण्डल कपोल इत्यादि चारि अंगनकी छवि सहित श्रीरामललाकी तोतरी बोलनपर तुलसी बलिजाइकै प्राण निछावरि करत है तहां प्राण पांच हैं प्राण अपान उदान समान व्यान ताते पांच प्रकार की छवि पै वारन कहे वा ज्ञानेन्द्रिय पांचौ वा कर्मेन्द्रिय पांचौ इनको विषय रोंकि पांच जगह पर लगाये तब प्राणवारन भये वा पंच भूतात्मा सहित प्राण वारे बलिजाउँ यामें देह वारे निछावरि प्राण करे यामें रूपक अलंकार तीनि हैं ५ ॥

पदकंजनि मंजु बनी पनहीं धनुहीं शर पंकज पाणि लिये । लरिका सँग खेलत डोलतहैं सरयूतट चौहट हाट हिये ॥ तुलसी अस बालकसों नहिं नेह कहा जप योग समाधि किये । नर वै खर शूकर श्वान समान कहौ जगमें फल कौन जिये ६ ॥

अब पौगंड अवस्था वर्णन ताते पगमें पनहीं आदि कहे यथा लहलहे ललित चटकीले चमकदार चीकने बटगुलाब के कोमल आबदार दलसे अमल कमल से सुन्दर पांयन में पनहीं मंजु बनी कहे रेशमी मखमलपर सलमा सितारा कलाबत्तूतार गुखुरूडंक के बीजनयुत कारचोपी लदाऊ कामते बेलिबूटेनके बीच रंग रंग की मणि जटित ऐसी बनी मनोहर पनहीं पांयनमें शोभित हैं तैसे ललित ललाम काम तरुवार अमल करकमलन में जग मग विचित्र रंगदार बहुरंगयुत रोदा चढ़ा गोसन में किरण मोतिनके गुच्छा सहित ऐसी धनुहीं कहे अवस्था अनुहारि छोटा धनुष अरु शुद्ध चढ़ा उतार विचित्र रंगदार मनोहर पच्छचार गजदंत फोकवार तीखीफर चमकदार ऐसे मनोहर बाण धनुष लिहे शीशपै दिव्य मनोहर चौतनी भाल उच्चपै गोरोचन को तिलक काननमें प्रकाशमान कुण्डल अमल कपोलनपै श्यामली रसीली अलकैं झलकि रहीं सुघरकंबु कंठमें मोतिनकी माला जरकसी जामा कटि में पटुका सुन्दर तरकस से शोभित तैसे सम वयके सलोने काम कैसे छौने सिंहठवने गजगवने डारत से टोने सजे वसन मणि हारन धनुबाण कर धारन ऐसे स्ववंश राजकुमारन को साथ लीन्हे तीनिउ बंधुयुत श्रीरघुनन्दन सरयूतटमें बजार चौहट में विविध खेल खेलत फिरत हैं जे सुंदर सुहायक दरश जीवन फलदायक भुक्तिमुक्तिद सबलायक ऐसे रघुनायक नृपबालक खलघालक जनपालक में जिनने नेह नहीं करे अरु जप योग समाधि में मन लगाये तौ का प्रयोजन भयो गोसांईजी कहत कि ते नर कैसे हैं खर शूकर श्वान के समान अपावन जीवन मिथ्याहै यथा जप कहे ऋणी धनी सिद्ध साध्य सुसिद्धि अरि विचारि कूर्मचक्रते भूमिशोधि आसन शुभमुहूर्त में छिन्न रुद्र शक्तिहीनादि निवारणार्थ जनन

जीवन ताड़नादि संस्कार करि जितेन्द्रिय है पुरश्चरण करनेवाले कर्मकांडी श्रीरघुनाथजी में विना स्नेह करे खरकी तुल्य है भाव त्रिगुणात्मक वासना रस्सी में बांधे संसार भारवाहक विना भक्ति अपावन है योग कहे यम नेम आसन प्राणायाम प्रत्याहार ध्यान धारणा समाधि इति अष्टांग योगकरि चित्तकी वृत्ति रोंकि सातौ प्रज्ञनको त्यागि अपने निरुपाधिक स्वरूप में स्थित इत्यादिक योग के प्रत्याहार करनेवाले विना रघुनंदन के स्नेह शूकर सम हैं भाव आपनी कर्तव्यता अभिमान मल भक्षण देह सिद्धि करना पुष्टांग योग बिगरे तलफायके रोग मारत तथा शूकरभी मारे जात समाधि कहे वैराग्य विवेक मुमुक्षुता शम दम उपरति तितिक्षा श्रद्धा समाधानादि साधनकरि शांतचित्त जितेन्द्रिय श्रद्धावान् है व्यष्टि असार को त्यागि समष्टि सारको ग्रहण करि ब्रह्म सत्य और सर्व असत्य मानि माया को आवरण त्यागि ब्रह्म में लीन होना समाधि है ऐसे जो ज्ञानी हैं विना रघुनाथजी में स्नेह श्वान सम हैं भाव मतवाद करि अकारण भूकना ज्ञानबल मुख ते बरजोर देवादिकन को निरादर जीवहिंसक सवासिक होतही टूकार्थ घरघर मायाके ठोकर खाना विषय भोगमें परे तो ऐसा फँसे जो श्वानकी रति प्रसिद्ध है विषय ते छूटना मुश्किल है ६ ॥

सरयूवरतीरहि तीर फिरैं रघुवीर सखा अरु वीरसबै।
धनुहींकर तीरनिषंग कसे कटिपीत दुकूल नवीन फबै॥
तुलसी त्यहि औसर लावनिता दशचारिनौतीनि इकीस सबै। मति भारति पंगु भई जो निहारि विचारि फिरी उपमा न फबै ७॥

सरयूइति यामें किशोर अवस्था वर्णन तहां सखा चारि भांति

यथा अधिक वयस के सुहृद् सखा समवयस के प्रिय सखा कछु न्यून वयस के मधुरसखा कम वयस के नर्मसखा वीर यथा दयावीर त्यागवीर दानवीर युद्धवीर ऐसे वीरन को अरु सब भांति के सखा साथलीन्हे बिज्जुछटा सों चमकदार नवीन पीताम्बर अरु मनोहर जरी को तरकस कटि में शोभित करकमलन में शोभायमान धनुबाण धारण हरण जन पीर धीर वीर श्रीरघुवीर श्रेष्ठ सरयू के तीर तीर घूमि रहे यामें प्रतापवान् निश्शंकता दर्शाये गोसाईंजी कहत कि तासमय रूप की लावण्यता सर्वांग गुणन की अपार है दश यथा रूप जो विना भूषणौं भूषित है १ लावण्यता यथा मोती को पानी २ सौंदर्य सर्वांग सुठौर ३ माधुर्य देखनहार तृप्त न होइ ४ सौकुमार्य सुकुमारता ५ नौयौवन ६ सौगन्धित अङ्ग ७ सौवेष ८ भाग्यवान् ९ स्वच्छता नैर्मल्यता शुद्धता सुषमा दीप्ति प्रसन्नता इति षडंग औजलत्व उज्ज्वलता १० इति दश गुण। माधुरी के चारि तथा॥ ऐश्वर्यवान् १ वीर्यवान् २ तेजवान् ३ बलवान् ४ इति चारिगुण प्रताप के॥ नव यथा॥ आदश्च अनन्त १ नियतात्मा प्रेरक २ वशीकरण ३ वाग्मीसहज परावाणी जाकी ४ सर्वज्ञ ५ संहनन अजीत ६ स्थैर्य थिरता ७ धैर्य ८ व दान सत्य वचन ९ इति नव गुण॥ ऐश्वर्य के तीनि यथा॥ सौम्य समिता १ रमन सब में २ व्यापक ३ इति तीनि गुण॥ सहज इक्कीस यथा॥ सौशील्य शीलवान् १ वात्सल्य २ सौलभ्य सरल ३ गांभीर्य अगाध ४ क्षमा ५ दया ६ करुणा जन दुःख में दुःखी ७ आर्जव जन दुःखी देखि द्रवि उठै ८ उदार ९ आर्य सर्वपूजनीय १० शरण्यत्व शरणपाल ११ सौहार्द मित्र को अधिक मानना १२ चातुर्य १३ प्रीतिपालक १४ कृतज्ञ सलूक मानिबो १५ ज्ञान १६ नीति १७ लोकप्रसिद्ध १८ कुलीन १९ अनुराग २० निवर्हण लोकविजयी २१

इति इक्कीस गुण यश कीर्ति के इत्यादि दशगुण माधुरी के चारि गुण प्रताप के नवगुण ऐश्वर्य के तीनिगुण सहज के इक्कीस गुण यश कीर्ति के इत्यादि सब गुणन के भरे श्रीरघुनन्दन को निहारि समान उपमा देबे योग्य विचार में न आयो तब शारदा की मति भोरी भई ताते फिरिगई गुणन को प्रमाणं शिवसंहितायाम् ॥ तत्र हेतुस्त्वदीयन्तु रूपं सौन्दर्यमुत्तमम् ॥ माधुर्यं यौवनारम्भः सौगन्ध्यं सुकुमारता १ लावण्यं परमा कान्तिः सौशील्यं खलसौहृदम् ॥ सौलभ्यं परवात्सल्यं प्रसन्नं तं स्वभावतः २ शक्तिर्नानाविधासर्वक-लाभावीएयमाश्रमम् ॥ अन्येपि ते स्युः कल्याणगुणाः सर्वत्र पूजिताः ३ पुनः वाल्मीकीये ॥ इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रामो नाम जनैः श्रुतः ॥ नियतात्मा महावीर्यो द्युतिमान्धृतिमान् वशी १ बुद्धिमा-न्नीतिमान् वाग्मी श्रीमाञ्छत्रुनिबर्हणः ॥ विपुलांसो महाबाहुः कम्बुग्रीवो महाहनुः २ महोरस्को महेष्वासो गूढजत्रुररिन्दमः ॥ आजानुबाहुसुशिराः सुललाटः सुविक्रमः ३ समः समविभक्ताङ्गः स्निग्धवर्णः प्रतापवान् ॥ पीनवक्षा विशालाक्षो लक्ष्मीवाञ्छुभल-क्षणः ४ धर्मज्ञः सत्यसन्धश्च प्रजानां च हिते रतः ॥ यशस्वी ज्ञान-सम्पन्नः शुचिर्वश्यः समाधिमान् ५ प्रजापतिसमः श्रीमान्धाता रिपु-निषूदनः ॥ रक्षिता जीवलोकस्य धर्मस्य परिरक्षिता ६ रक्षिता स्वस्य धर्मस्य स्वजनस्य च रक्षिता ॥ वेदवेदाङ्गतत्त्वज्ञो धनुर्वेदे च निष्ठितः ७ सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः स्मृतिमान् प्रतिभानवान् ॥ सर्वलो-कप्रियः साधुरदीनात्मा विचक्षणः ८ सर्वदाभिगतः सद्भिः समुद्र इव सिन्धुभिः ॥ आर्यः सर्वसमश्चैव सदैव प्रियदर्शनः ९ स च सर्वगुणोपेतः कौशल्यानन्दवर्द्धनः ॥ समुद्र इव गाम्भीर्ये धैर्येण हिम-वानिव १० विष्णुना सदृशो वीर्ये सोमवत्प्रियदर्शनः ॥ काला-ग्निसदृशः क्रोधे क्षमया पृथिवीसमः ११ धनदेन समस्त्यागे सत्ये

धर्म इवापरः ॥ त्वमेव गुणसम्पन्नं रामं सत्यपराक्रमम् १२ इति बालकाण्डपूर्वार्द्धे ७ ॥

क्षोणीमेंके क्षोणीपति छाजैं जिन्हैं छत्रछाया क्षोणी क्षोणीछाये क्षिति आये निमिराजके । प्रबल प्रचण्ड बरिबण्डवरवेषवपु बरबेको बोले वैदेही वर काजके ॥ बोले बन्दी विरद बजाइ वरबाजनेऊ बाजे बाजे वीर बाहु धुनत समाजके । तुलसी मुदित मन पुर नर नारि जेते बार बार हेरैं मुख औध मृगराजके ८ ॥

क्षोणी कहे भूमि मेंके जे भूपति हैं जिनपै सदैव छत्र की छाया शोभित ते सब आइकै निमिराज की जोहै क्षोणी श्रीजनकपुरी ताके चारों तरफ अक्षौहिणी २ सेना लिहे वाक्षाण क्षोणी कहे ठौर ठौर छाय रहे हैं ते कैसे कैसे राजा हैं प्रबल कहे बलवान् हैं प्रचण्ड कहे प्रतापवान् हैं बरिबंड कहे तेजस्वी हैं ते वर वेष वपु कहे देहौं ते सर्वांग सुठौर उत्तम अरु निज जाति के वेद धर्म अनुकूल वेषौ उत्तम कीन्हें अथवा देहमें वरवेष कहे दूलह वेष किहे आयेहैं काहे ते उत्तम जो काजहै वैदेही को विवाहब ताके हेतु बुलाये आये हैं ताते वरवेष सजे आये ता समाज में बन्दीजन जो हैं ते राजन की वा विदेहजी की विरदावली उच्चारण करिरहे हैं अरु उत्तम बाजा जो हैं दुन्दुभी आदि ते बाजिरहे समाज में बाजे बाजे वीर बाहु धुनत अर्थात् ताल ठोंकि रहे हैं इत्यादि समाज को विभव कोऊ नहीं देखत गोसाईंजी कहत कि पुरके जे हैं नर नारी ते श्रीलषण-लालयुत श्रीरघुनाथ के मुखको बार बार सब हेरत भाव प्रताप-वान् रूपवान् सबते ज्यादा हैं वा जानकी योग्य येई हैं ८ ॥

सीयके स्वयंवर समाज जहां राजनको राजनके
राजा महाराजा जानै नामको । पवन पुरन्दर कृशानु
भानु धनदसे गुणके निधान रूप धाम शोभा कामको ॥
बाण बलवान यातुधानपै सरीखे शूर जिनके गुमान
सदा सालिम संग्रामको । तहँ दशरत्थके समर्थ नाथ
तुलसी के चपरि चढ़ायो चाप चन्द्रमा ललामको ९ ॥

श्रीजानकीजी के स्वयंवर में जहां राजनकी समाज में राजन के राजा अरु महाराजा जुरे हैं राजा एक मण्डल के मालिक ऐसे चालिस पचास राजन के ऊपर जाको अमल ते राजन के राजा जिनको अनेकन राजन पर अमल ते महाराजा इत्यादि अनेकन के तिनके नाम को जानै जे पवन से बलवान् इंद्रसम ऐश्वर्यवान् अग्नि सूर्य से प्रतापवान् चन्द्रमा सों गुणवान् रूपधाम ऐसे जिनके आगे कामदेव कौन है बाणासुर ऐसो बलवान् यातुधान पर रावण ऐसो शूर जाके सालिम कहे कठिन संग्राम करिबेको गुमान है भाव हमते युद्ध करि कोऊ पार ना जाइगो ऐसे ऐसे वीरनकी समाज में कोऊ न धनुष टारि सक्यो गोसाईंजी कहत कि ता समाजते चपरि कहे बिलगाइ कै चन्द्रमा भूषण जो शिव तिनको पिनाक दशरथ के लाड़िले समर्थ श्रीरघुनाथजी सहजही में चढ़ाइ लिये यामें अद्वितीय बल देखाये ९ ॥

मैन महनपुर दहन गहन जानि आनिकै सबै के
सार धनुष गढ़ायोहै । जनकसदसि जेते भले भले भूमि
पाल कियो बलहीन बल आपनो बढ़ायो है ॥ कुलिश

कठोर कूर्म पीठते कठिन अति हठि न पिनाक काहू
ने चपरि चढ़ायो है । तुलसी सो रामके सरोजपाणि पर-
छुवतही टूटो मानो बारेते पुरारिही पढ़ायो है १० ॥

मैनके महन कहे नाशक शिवजीने पुर जो त्रिपुरासुर ताको नाश करिबो गहन कहे महा कठिन जानि ताके हेतु जगत्में यावत् कठोर वस्तु रहीं तिन सबको सारांश आनिकै पिनाक धनुष को गढ़ायो है काहेते श्रीजनकपुर रंगभूमि स्वयंवर सभा में भले भले कहे बलवान् प्रतापवान् तेजवान् दिग्विजयी जेते राजा रहे तिन सबनको बल करि हीन करि दियो धनुष ने आपनो बल ऐसो बढ़ायो कि सब हारिगयो कैसो है धनुष जो टूटबे में वज्रते कठोर अरु चढ़ाइबे में कूर्म जो कच्छप ताकी पीठिते अति कठिन ताको हठि करिकै काहू ने चपरि कहे समाजते निकसि शीघ्रताते चढ़ाइ न सक्यो गोसाईं-जी कहत सोई कठोर धनुष श्रीरघुनाथजी के कोमल करकमलन सों छुवतही कैसो टूटिगयो मानो शिवजी ने बालपनही ते पढ़ाय राख्यो कि श्रीरघुनाथजी के छुवत ही टूटिजायो बालको पढ़ा पुष्ट रहत सरोजपाणि में रूपक अलंकार कठोर धनुष करकमलते छुवत ही टूटिबे में अत्यंत प्रतापवान् वर्णन करे १० ॥

छप्पै ॥ डिगति उर्वि अति गुर्वि सर्व पर्वै समुद्रसर ।
व्याल बधिर त्यहि काल विकल दिग्पाल चराचर ॥
दिग्गयन्द लरखरत परत दशकन्ध मुखरभर । सुर
विमान हिमभानु भानु संघटित परस्पर ॥ चौंके विरंचि
शंकर सहित कोल कमठ अहि कलमल्यो । ब्रह्माण्ड
खण्ड कियो चण्डधुनि जबहिं राम शिवधनु दल्यो ११ ॥

जोहि समय शिवजी को धनुष श्रीरघुनाथजी तोस्यो ताकी कठो घोरधुनि दशहू दिशा में ब्रह्माण्ड को फोरि गई ताते अतिगुर्वि क गरुई उर्वि जो पृथ्वी तापै यावत् पर्वै जो पर्वत समुद्र सर इत्या सब डिगत कहे डोलि उठे पातालमें सर्प बधिर भये चर जे चल अचर जे नहीं चलत अरु आठहू दिशन के दिग्पाल सब बिक है गये दिग्गयंद जो दिग्गज ते लरखराइ परे दशकंध जो राव सोऊ मुँहभरा भूमि में गिरा व्योम में देवन के विमान हिमभानु क चंद्रमा भानु सूर्य तिनके विमान परस्पर संघटत कहे ठोकर खा रहे हैं ऊपर ब्रह्मलोक में ब्रह्मा चौंके भूमिपै कैलास में शंकर चौं पाताल में कोल कहे वाराहजी कमठ कहे कच्छपजी अहि शेषज इत्यादि सब विकल है कलमलाइ उठे याते धनुभंगकी प्रचण्डधु ब्रह्माण्डको खण्डन कहे फोरि गई यामें ब्रह्माण्डभरे में प्रतापवा श्रीरघुनाथजी को यश भरिपूरि रह्यो सब जयजयकार करत हैं ११

लोचनाभिराम घनश्याम रामरूप शिशु सखी क सखीसों तू प्रेमपय पालीरी । बालक नृपालजी के ख्या ही पिनाक तोस्यो मण्डलीक मण्डली प्रताप द दालीरी ॥ जनकको सियाको हमारो तेरो तुलसीव सबको भावतो है है मैं जो कह्यो कालीरी । कौशला कोखि परतोखि तन वारियेरी राय दशरथकी बलै लीजै आलीरी १२ ॥

वातसल्य रसवाली सखिन के वचन हैं नेत्रन के अभिराम क आनन्ददाता घनसदृश श्याम जो श्रीरघुनन्दन को रूप सोई शि कहे बालभाव करिकै हे सखी ! प्रेमरूपी पय कहे दूध पान करा

पालनकरौ जो कठोर धनुष टूटवे को बड़ा शोचरहै ता पिनाक को चक्रवर्तीजी के बालक जो श्रीरघुनाथजी सो ख्याल ही कहे कौतुक-मात्रही में तोरिडारे यावत् भूमिमंडल ताके जेते मंडलीक राजा रहे तिनको प्रताप अरु दाप कहे अहंकार ताको दलिडारे मैं जो कालिह कह्यों रहै कि सबको मनभावतो है है सो भयो अर्थात् विदेहजी को जामात हैबो जानकीजीको पति होबो हमारो तेरो नेत्रनसों सुखदे-खिबो तुलसी को युगल उपासना पूर्ण हैबो अब कौशल्याजीकी कोखि पर अपनपौ ते सन्तोष करि तनको निछावरि कीजै दासी हूजिये औ श्रीदशरथजीकी बलाय अर्थात् रोग दोष आपने शिर लीजै जामें आरोग्य है बहुत काल जीवें १२ ॥

दूब दधि रोचन कनकथार भरि भरि आरती सँवारि वरनारि चलीं गावतीं । लीन्हे जयमाल करकंज सोहैं जानकी के पहिरावो राघोजी को सखियां सिखावतीं ॥ तुलसीमुदितमनजनक नगरजन झांकती झरोखेलागी शोभा रानी पावतीं । मनहुँ चकोरी चारु बैठीं निज निज नीड चंदकी किरण पीवैं पलकौ न लावतीं १३ ॥

वर नारी कहे स्वरूपवती युवावस्था सौभागिनी जाति अनुकूल वस्त्र भूषण धारण किहे प्रसन्नमन कंचन थारन में दूब दही हरदी फूल फल अक्षत मानिक दीप धरे ऐसी आरती सँवारि श्रेष्ठ नारी मङ्गल गान करत चलती भई जयमाल कहे महुवा के फूल दूब पाट के डोरा में गुहा यथा रघुवंशे इन्दुमतीस्वयंवरे ॥ एवंतयोक्तेतमवेक्ष्य किञ्चिद्विस्रंसिदूर्वाङ्कमधूकमाला ॥ ऐसो जयमाला करकमलन में लीन्हे तनतडित छटाधारी हंसगतिवारी सुकुमारी श्रीजनककुमारी

सखिन के मध्य शोभित तिनसों सखी कहतीं कि श्रीराघवेंद्रजी कं जयमाल पहिरावो गोसाईंजी कहत ता शोभा को देखि पुरवासं परमानन्द में मग्न हैं सोई शोभा अवलोकन हेतु सुनयनादि रानं झरोखन ते झांकत कैसी सोहत झरोखा मानों खोढ़र हैं तां रानी मानों सुन्दरी चकोरी बैठी हैं श्रीरघुनन्दन के मुखचन्द्र कं शोभारूप किरण को पान करत में पलक नहीं लावत यामें उत्प्रेक्ष अलंकार है करकमल में रूपक १३ ॥

नगर निशान वर बाजैं व्योम दुन्दुभी विमान चां गान कै कै सुरनारि नाचहीं । जयतिजय तिहूं जयमाल राम उर बरषैं सुमन सुर रूरे रूपराचहीं ॥ जनं को प्रण जयो सबको भावतो भयो तुलसी मुदित रो रोम मोदमाचहीं । साँवरो किशोर गोरी शोभा पर तृ तोरी जोरी जियो युग युग युवती जन याँचहीं १४

जनक नगर में निशान जो विविध प्रकार के बाजा हैं वर को श्रेष्ठ उत्सव के भरे गहगहे बाजि रहे हैं अरु व्योम जो आकाश तां विमानन पर सवार देवता दुन्दुभी बजावत अरु देवांगना कल स्वरते मङ्गल गान करि आनन्दवशते नृत्य करि रही हैं जासमय जयमाल श्रीरघुनाथजी के उर में जानकीजी पहिरायो त्यहि सुख को देखि पाताल भूमि स्वर्ग तीनिहू पुरमें जयजयकार शब्द ह्वै रह्यो है फूलनकी वर्षा करि देवता रूरे कही सुन्दर श्रीरघुनाथजी के रूप में राचही कहे मनलगाय आनन्द में मग्न यकटक निहारि रहे हैं गोसाईंजी कहत कि श्रीविदेहजी की जो प्रतिज्ञा धनु तोरिबेकी रही ताने जयपाई ताते जिनको चाहरही तिन सबके मनभावतो भयो ताते सब

हर्षित ह्वै रोम रोम में आनन्द मचिरहा है तासों भरिपूरि प्रेमते पुलकांग ह्वै सब आशीर्वाद देत कि काम छवि लजावन हारो नीलकंज मेघवारो सुकुमारो अवधेश को दुलारो जग उजियारो ऐसो जो सांवरो किशोर है अरु सुन्दरि सुकुमारी वय थोरी हेम तड़ितवर्ण गोरी ऐसी जो जनककिशोरी अवधेशकिशोर ऐसी जो मनोहर जोरीकी शोभापै नजरि निवारण हेत तृण तोरि युवती-जन आपने इष्टनसों यांचतीं कि यह जोरी युग युग जीवै १४ ॥

भले भूप कहत भले भदेश भूपनिसों लोक लखि बोलिये पुनीत रीति मारखी । जगदम्बा जानकी जगत पितु रामभद्र जानि जिय जोहौ जौंन लागे मुँहकारखी॥ देखेहैं अनेक ब्याह सुने हैं पुराण वेद बूझे हैं सुजान साधु नर नारि पारखी । ऐसे सम समधी समाज ना विराजमान रामसे न वर दुलही न सीय सारखी १५ ॥

भदेस कहे खल जो राजा हैं तिनसों भले राजा जो साधु हैं ते भले वचन कहत कि लोक को लखिकै बोलिये अर्थात् जगत् में जे प्रतिष्ठित पुरुष हैं तिनकी रीति देखिकै औ पुनीत रीति मारखी कहे आरषी अर्थात् ऋषि प्रोक्त स्मृत्यादि इत्यादि रीति बिचारिकै बोलिये काहेते जगत् की माता श्रीजानकीजी हैं जगत् के पिता श्रीरघुनाथजी भद्र कहे कल्याणरूप ऐसा जानिकै पापदृष्टि छांड़िकै पवित्र दृष्टि ते देखौ जाते मुख में स्याही न लागै हम अनेगिन ब्याह देखेहैं अरु प्राचीन प्रतिष्ठित जननके ब्याह वेद पुराणन में सुने हैं अरु सुजान जो सुन्दरी पदार्थ के जाननेवाले साधुनते बूझे हैं अरु पारखी जे विचारिकै जानि लेते हैं ऐसे नर नारिन ते

बूझे हैं सो ऐसे सम समधी सहित समाज धर्मात्मा औ सुकृती ऐसो दूसरो नहीं है प्रथम दशरथजी की धर्मधुरीणता प्रमाण रघुवंशे ।। दशरथः प्रशशास महारथो यमवतामवतां च धुरि स्थितः। सुकृती प्रमाणं वशिष्ठसंहितायाम् ।। रामादीनां कुमाराणां वात्सल्यानन्दउत्तमाः।। यादृशो भुज्यते राज्ञा श्रीमद्दशरथेन च१ कौशल्याप्रमुखाभिश्च तथायोध्यानिवासिभिः ।। कुत्रचित्तादृशो नास्ति न भूतो न भविष्यति २ ऐसे सहित समाज दशरथ से समधी पुनः मिथिलेशजी धर्मात्मा ।। प्रमाणं वाल्मीकीये ।। सोऽभिवाद्य शतानन्दं जनकं चातिधार्मिकम् ।। सुकृती प्रमाणं बृहद्विष्णुपुराणे ।। विशेषतो जगरत्न जनकोनामनामतः ।। जानकी यत्र चोत्पन्ना निमिवंशप्रकाशिनी ।। यस्य भक्तिप्रभावेण रामो दाशरथिः प्रभुः ।। जामातृत्वं समापन्नो लोकोत्तरफलप्रदः ।। ऐसे मिथिलेशजी समधी तैसेही श्रीअयोध्या मिथिलापुरनिवासी नित्य पार्षद ।। प्रमाणं बृहद्विष्णुपुराणे ।। आयोध्यका यथा नित्याः सर्वमङ्गलरूपिणः ।। तथैव मिथिलाश्चैव सर्वमङ्गलविग्रहाः १ नित्यानन्दरसास्वादरूपिणो रामपार्षदाः ।। श्रीरामराधिकानां च निवासार्थं विशेषतः २ ताते सहित समाज सम समधी ऐसे दूसरो कहूं नहीं शोभित भयो जो श्रीरघुनाथजी ऐसे वर जाति में रघुवंश कुल उत्तम स्वरूपवान् यशकीर्तिमान् प्रतापवान् बलवान सत्य शौच तपादि धर्मवान् सरल सुशील दया करुणा क्षमादि अनेक गुण भरे अवतारन के अवतारी ऐसे श्रीरघुनाथजी सों वर ब्रह्माण्ड भरे में दूसरो नहीं है दुलही जानकीजी पतिअनुकूल सरल चित्त क्षमावान् अत्यन्त स्वरूपवान् सुकुमारी वय थोरी शक्तिशिरोमणि आह्लादिनी शक्ति ऐसी श्रीजानकीजीसी दुलही दूसरी काहू लोक में नहीं है यामें सब समाज को प्रताप वर्णन करें १५ ।

वाणी विधि गौरि हर शेषहू गणेश कही सही भरी लोमश भुशुण्डि बहु वारिषो । चारि दशभुवन निहारि नर नारि सब नारदको परदान नारदसों पारिषो ।। तिन कही जगमें जगमगात जोड़ी एक दूजीको कहैया को सुनैया चष चारिषो । रमा रमारमण सुजान हनुमान कही सीयसी न तीय न पुरुष राम सारिषो १६ ।।

यश प्रताप कीर्ति गुणरूप नाम सीताराम समान आन नहीं है ऐसे वचन वाणी प्रथमहीं कहे जो विद्यानिधि है ब्रह्मा कहे ते पंडितन में अग्रणी हैं पार्वती हरिचरित्र की श्रोता शिवजी भक्त योगिशिरोमणि शेष कविन में अग्रणी गणेश बुद्धिसदन सर्व पूजनीय इत्यादि के वचनन पर लोमश कागभुशुण्डि बहुकालीन सर्वज्ञ साक्षी हैं अरु नारदजी ऐसो न कोऊ पारखी है न कहूं उनको परदा है ते चौदहौ भुवन में नर नारिन को निहारि नीकी भांति देखे तिनहूं कही कि जगत् में श्रीरामजानकी की एक जोड़ी प्रकाशमान है और दूसरी नहीं है दूसरी को कहनेवाला अरु सुननेवाला अरु चषचारी कहे नेत्रन सों देखनेवाला दूसरा कौन है शक्तिन में श्रेष्ठ लक्ष्मी कहे समर्थ सर्वज्ञ विष्णुजी कहे भक्तशिरोमणि तत्त्वज्ञाता परम सुजान हनुमानजी कहे कि श्रीरघुनाथजी सम और पुरुष नहीं श्रीजानकीजी सम और नारी नहीं इहां उत्तम कविनके मुखते नामरूप को प्रताप सर्वोपरि वर्णन है इहां रामनाम दूलहरूप सीयनाम दुलहीरूप द्युति लावण्यता शोभा रमणीकता कांति माधुरी कोमलता सुकुमारता इत्यादिते रूप प्रकाशमान अरु शीलादि गुणनते यश कीर्ति प्रतापादिते नामको प्रकाश इत्यादि प्रताप को प्रमाण वेद पुराण संहिता रामायणादिकन में बहुत है यथा प्रथम वाणी को वचन ।। प्रमाणं कालिकापुराणे ।। सर्वासामेव

श्क्तीनां कारणं तमसः परम् ॥ श्रीरामं सर्वभूतेशं द्रष्टव्यं दर्शनार्थिना १ पुनः ब्रह्मा के वचन को प्रमाण अथर्वणवेदे उत्तरार्द्धे ॥ यस्यांशेनैव ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा अपि जाता महाविष्णुर्यस्य दिव्यगुणाश्च स एव कार्यकारणयोः परः परमपुरुषो रामो दाशरथिर्बभूव २ पुनः पार्वती के वचन प्रमाणं शङ्करहस्ये ॥ रामेति ब्रुवतोऽनिशं भुवि जनस्यैतावता संक्षयं पापानामतिशोधकं खलु पुनर्नान्यत्कृतं चिन्तनम् ॥ मार्तण्डोदयकालमेव तमसो नास्ति क्षतिःस्याच्छ्रमं किङ्कार्यं पुरुषैः प्रदीपकरणं चार्थानाभिज्ञैर्तथा ३ शिवजी के वचनन को प्रमाणं सदाशिवसंहितायाम् ॥ शपथं करोमि ते वत्स पादयोश्च प्रभोर्मम ॥ रामादन्यं न संवेद्मि परं देवं सदीश्वरम् ४ शेषजी के वचनन को प्रमाण सदाशिवसंहितायाम् ॥ महाविष्णुसहस्राणां महाशम्भुरतस्य च ॥ सृष्टिस्थितिलयानाञ्च कर्ता श्रीरघुनन्दनः ५ गणेशजीके वचनन को प्रमाण गणेशपुराणे ॥ रामनाम परं ध्येयं ज्ञेयं पेयमहर्निशम् ॥ सर्वदा सद्भिरित्युक्तं पूर्वं माञ्जगदीश्वरैः ६ लोमशके वचननको प्रमाण लोमशसंहितायाम् ॥ नाशोऽस्ति प्रत्ययो लोके यश्च श्रीरामनामतः ॥ भिन्नं प्रतीयते विप्र सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ७ भुशुण्डिके वचननको प्रमाण भुशुण्डीरामायणे ॥ असंख्यकोटिलोकानामुपादानं परात्परम् ॥ तथैव सर्ववेदानां कारणं राम उच्यते ८ नारदजीके वचनन को प्रमाण भविष्योत्तरपुराणे ॥ यत्प्रभावान्मया नित्यं परानन्दात्मकात्परम् ॥ रूपं परमयं दिव्यं दृष्टं श्रीजानकीपते ९ लक्ष्मी विष्णु के वचनन को प्रमाण भविष्योत्तरपुराणे ॥ भजस्व कमले नित्यं रामसर्वेशपूजितम् ॥ रामेति मधुरं साक्षात् मया संकीर्तये हृदि १० हनुमानजी के वचनन को प्रमाण शिवसंहितायाम् ॥ रामादन्यं परं श्रेष्ठं यो वै पाण्डित्यमात्रतः ॥ सन्तप्तहृदयस्तस्य जिह्वां छिन्द्यामहं मुने ११ इहां हनुमानजीको सुजान याते कहे जो श्रीरामजानकी के अंग अंग की शोभा

आठहू याम देखते हैं अपरको क्षणमात्र दुर्लभ है वाल्मीकि सुन्दरकाण्डमें श्रीकिशोरीजीने प्रश्न करी कि जो तुम प्राणप्रियजी के निकटनिवासी हो तौ गुप्त प्रकट गुण कहौ ऐसी वाणी सुनि केशरीकिशोर बोले कि हे श्रीस्वामिनीजी ! श्रीरघुनन्दनजी के नैन मैन मदद्मन कंज मीन मृग खञ्जनमददलनहारे हैं कजरारे अरुणारे शीलसागर हैं अरु रूप यौवनादि सम्पन्न हैं उच्च अनूप स्कन्ध हैं आजानुभुज भक्तभयहारी हैं त्रिरेखासम्पन्न कंबुते कलित कंठ है कोटिन कलाधरकी कमनीक ताको कतल करनहारो विशदवदन सुषमासदन हैं गूढ़जत्रु है परमपावन श्रीराम ऐसो नाम है इत्यादि सर्वांग वाल्मीकि में प्रसिद्ध है यथा ॥ रामः कमलपत्राक्षः सर्वसत्त्वमनोहरः ॥ रूपयौवनसम्पन्नः प्रसूतो जनकात्मजे १६ ॥

दूलह श्रीरघुवीर बने दुलही सिय सुन्दर मन्दिर माहीं । गावति गीत सबै मिलि सुंदरि वेद जुवा जुरि विप्र पढ़ाहीं ॥ रामको रूप निहारत जानकी कंकणके नगकी परछाहीं । याते सबै सुधि भूलिगई कर टेकि रही पल टारत नाहीं १७ ॥

दूलह श्रीरघुवीर बने अर्थात् पगनमें जावक पीताम्बरी धोती कटि में पटका जरीको जामा मणिन के माला कंठा करमें कंकण पहुँची मुद्रिका कड़ा कानन में कुण्डल झुमका नेत्रन में अञ्जन शीशपर जरकसीपाग तामें कंचन मणिन को मौर उपन्नादि धारण ऐसो श्याम मनोहररूप श्रीरघुनाथजी दूलह हैं तैसही दुलही कहे पगनमें बिछिया नूपुर जेहरि महाउर रसना चन्द्रहार पदिकहार नागफणीहार मणिमोतिन के हार पंचदाम पंचमणी चंपकली कंठी बाजू बाँक अंगद भुजवलय पछवलय मणिवलय कंगन पहुँची चूरी

आरसी आँगुरताना पोरियां बाँक मुद्रिका श्रवणफूल ताटंक पटिका बेंदा बेंदी मांगफूल चूड़ामणि मांग मोती सिन्दूर अर्धचन्द्र वसन सारी आदि धारण दुलहिनिरूप श्रीजानकीजी सुन्दर मणिनजटित प्रकाशमान मन्दिर के मध्य में सुन्दरी सौभागिनी स्त्री मङ्गल गान करत अरु ब्राह्मण वेदध्वनि करत में दुलहा दुलहिनि को कोहबरको लाइ लहकवरि खवाइ जुवा खेलाय रहीहैं ता समय कंकण के नगन में श्रीरघुनाथजी के रूपकी परछाहीं देखिपरत ताको श्री जानकीजी सप्रेम निहारत में मनमोहित भयो लज्जादि देहकी सुधि भूलिगई ताते हस्त चलावनो रुकि गयो नेत्र यकटक भयो पलन चलिवो भूलिगई यह आलम्बन विभाव है विभ्रम हाव है १७ ।

भूपमण्डली प्रचण्ड चण्डीश को दण्ड खण्ड्यो चण्ड बाहुदण्ड जाको ताहीसों कहतुहौं । कठिन कुठार धार धरिबेकी धीरताहि वीरता विदित ताकी देखिये चहतुहौं ॥ तुलसी समाजराज तजिसों विराजै आजु गाज्यो मृगराज गजराज ज्यों गहतुहौं । क्षोणि में न छांड़्यो छिप्यो क्षोणिपको छौना छोटो क्षोणि छपन बाँको बिरुद बहतुहौं १८ ॥

ताही समय शिवधनुभंगको हाल सुनि परशुरामजी आइ बोले कि प्रचण्ड जो तेजस्वी राजन की मण्डली में चण्डीश जो शिवजी तिनको धनुष जाने खण्डन करो है ऐसे प्रचण्ड भुजदण्ड हैं जाके ताही सों मैं कहतहौं कि हमरे कठिन कुठार की पैनी धार है ताके सहिवे को वा राजा को धैर्य धरिबो परी समाजते बढ़िकै धनुष तोरे की वीरता वाकी विदित है सो

देखा चाहते हैं ताते राजनकी समाजते बिलग है आजु विराजै अर्थात् कुठारकी घोर धार सहिवे को धीरज करिकै समाज ते बिलगाइ कै अपनी वीरता हमको देखावै यथा मृगराज गर्जिकै गजराज को गहत तैसे मैं वाको पछारिहौं काहेते क्षत्रिन पै मैं ऐसो निर्दयी हौं कि क्षोणिप जो राजा ताको छोटहू बालक भूमिपै लुकानेहूं को नहीं छांड़्यों काहेते क्षोणिप जो राजा तिन के छपन कहे नाश करन ऐसो बांको विरद जो बाना ताको बहत कहे धारण किहेहौं यह वाल्मीकि को मत है १८ ॥

निपटि निदरि बोले वचन कुठारपानि मानि त्रास औनिपन मानौ मौनता गही । रोषे माषे लषण अकनि अनखोही बातैं तुलसी विनीत वाणी बिहँसि ऐसी कही ॥ सुयश तिहारे भरे भुवननि भृगुनाथ प्रकट प्रताप आपु कह्यो सो सबै सही । टूट्यो सो न जुरैगो शरासन महेशजी को रावरो पिनाकमें सरीकता कहाँ रही १६ ॥

कुठारपाणि जो परशुरामजी ते निपटि कै निरादर के वचन ऐसे कठोर बोले कि जाको सुनि अवनिप जेते राजा रहे ते ऐसे त्रास कहे डर मानिकै चुपभये कि मानो मौनता वर्तमान है जिह्वा को पकरि लई जो बोलिबे की इच्छा भयेहूपर बोल नहीं कढ़ि सकत है गोसाईंजी कहत कि अनख की भरी वाणी सुनि अपमान अकनि कहे विचारिकै लषणलाल माषे तब वचन उरमें लागि गये ताते रिसाइ के हँसि दिये में परशुराम को निरादर करि दिये श्रीरघुनाथजीकी कानि मानि नम्र वाणी ऐसी

बोले कि हे भृगुनाथ ! आपको सुयश भुवन में भरिपूर रहा औ प्रताप प्रकटही देखियत कि आपके सामने सब राजा सहा गये ताते जो आपु कह्यो सो सब सांची है परंतु शिवजी क धनुष टूटो सो ना जुरि सकैगो क्योंकि जो धनुष शिवजी के पा रहिगयो तामें तुम्हारी सरीकता है सो तो टूटो नहीं या धनु को शिवजी ने मिथिलेशजी को दैदियो तब आपु की सरीक कहां रहगई १९ ॥

गर्भ के अर्भक काटनको पटुधार कुठार कराल जाको । सोईहौं बूझत राजसभा धनुकै दलिहै दलिहै बल ताको ॥ लघुआन न उत्तर देत बढ़े लरिहै मरि करिहै कछु शाको । गोरो गरूर गुमान भरो क कौशिक छोटोसो ढोटो है काको २० ॥

गर्भ के अर्भक कहे बालकन को काटिबे को पटु कहे चतुर धार जाकी ऐसो कराल कहे भयानक फरसा जाके है सोई परशुराम हौं सो बूझत हौं कि धनुष को कौने तोरेउ है ता बलको मैं दलौंगो हे बालक ! तू छोटे मुख ते उत्तर बड़ो देत लरिहै युद्ध में आरूढ़ है हमपै शस्त्रास्त्र प्रहार करि शाको क प्रभाव प्रकट करैगो हे विश्वामित्र ! यह गरूर गुमान भरो गोरो छो सो बालक काको है इहां लक्ष्मणजी कहे कि जो गुरू के पा पदार्थ तामें सब शिष्यों को साझा है अरु जब कोई पदा गुरु काहू शिष्य को दैदियो तब औरे शिष्यनको दावा नहीं रा तैसे या धनुष को शिवजी ने मिथिलेशजी को दैदियो या तुम्हारो दावा नहीं है याते क्रोध वृथा है याहि युक्ति ते वे दा करनो यह बड़ो भारी उत्तर है अवस्था थोरीते बदन छोटो २० ।

मख राखिबेके काज राजा मेरे संग दये दले यातुधान जे जितैया विबुधेश के । गौतम की तीय तारी मेटे अघ भूरि भारी लोचन अतिथि भये जनक जनेश के ॥ चण्ड बाहुदण्ड बल चण्डीश को दण्ड खण्ड्यो ब्याही जानकी जीते नरेश देश देश के । सांवरे गोरे शरीर धीर महावीर दोऊ नाम राम लषण कुमार कोशलेश के २१ ॥

विश्वामित्रजी के वचन हैं कि श्याम गौर शरीर रण में धैर्यमान सबल शत्रुमर्दन में महाधीर श्रीराम लषण ऐसो नाम ये दोऊ महाराज कौशलेश के कुमार हैं सो हमारी यज्ञ की रक्षा करिबेके काजको महाराज दशरथजी ने मेरे साथ करि दिये सो रक्षा करत में जो योधा इन्द्र को जीतनहार यातुधान मारीच सुबाहु तिनको नाश करि दिये यामें युद्ध वीरता देखाये अरु परपतिरतिको जो बड़ा भारी पाप ताको मेटे गौतमकी तिय अहल्या को पगधूरि दै उद्धार करे यामें ईश्वरता देखाये अरु राजा जनक ऐसे वैराग्यमान तिनके नेत्रन के अतिथि कहे प्रियपूज्य पाहुन भये अर्थात् ब्रह्मसुख त्यागि इनके रूपकी माधुरी अवलोकनि में प्रेमवश नेत्र आसक्त है इनके प्रीतिरंगमें रँगि गये यामें परब्रह्मरूप सूचित किये अरु प्रचण्ड है जिनमें बल ऐसे भुजदण्डन सों चण्डीश जो शिवजी तिनको कोदंड जो धनुष सो काहूको उठायो न उठो ताको खण्डन करि सब देशन के राजन को जीति श्रीमिथिलेशनन्दिनी बिवाहे यामें बली प्रतापवान् देखाये २१ ॥

काल कराल नृपालन के धनुभंग सुने फरसा लिय

धाये। लक्ष्मण राम विलोकि सप्रेम महारिसिहा फि
आँखि दिखाये॥ धीर शिरोमणि वीर बड़े विन
विजयी रघुनाथ सुहाये। लायक हैं भृगुनायक से ध
शायक सौंपि सुभाय सिधाये २२॥

इति श्रीकवितावलीरामायणे बालकाण्डः समाप्तः॥१

शिवजी धनुषको भंग कहे टूटिबो सुनि नृपाल जो राजा ति
करालकाल जो तुरतही जीवघात करनेवाले परशुराम क
फरसा लिये शीघ्र आवत भये श्रीलक्ष्मणजी श्रीरघुनाथजी
रूप सप्रेम विलोके अर्थात् देखतेही मोहित ह्वै पुलकाङ्ग भये
रिसिहा कहे अत्यन्त क्रोधी हैं ताते कठोर वचन कहि टेढ़ी
करि आँखि दिखाये पुनः धैर्यमानन में शिरोमणि वीरन में बड़े
विनयी कहे नम्रतायुत शीलवान् सुभाव विजयी सबके जीतनेवा
प्रतापवान् ऐसे जो श्रीरघुनाथजी तिनको देख परशुरामजी के
भावत भये परशुरामजी के डाटे पर मुखकी प्रसन्नता न गई
धीर शिरोमणि जाने राक्षसवध सुनि बड़े वीर जाने प्रियवचन सु
विनयी जाने त्रिलोकविजयी धनुष तोरे ते विजयी जाने इत्या
गुणनते परब्रह्मरूप जानि मनभाये ताते परशुराम से लायक व
तेऊ धनुष बाण फरसा दै बिनती करि सहजही में चले गये २२

सवैया। माणिक्यमूर्ध्निधृतः मुकुटाद्भुत दीप्तप्रभाशतभानुसमः।
चन्द्रमुखाक्षमृगाचलकुण्डलगण्डतलंकचतुल्यतमः॥
सीपज श्याम कलेवर में पटपीत यथा तडिताभ्रगमः।
मामकमानससंनिहितो चरणाम्बुज जानकिनाथ नमः॥

इति श्रीबैजनाथकृतकवितावलीरत्नदीपिकायांबालकाण्डःसमाप्तः॥१

अयोध्याकाण्ड।

कीरके कागर ज्यों नृपचीर विभूषण उप्पम अंगनि
पाई। अवध तजी मग वासके रूख ज्यों पन्थ के साथ
ज्यों लोग लुगाई॥ संग सुबंधु पुनीत प्रिया मनु
धर्मक्रिया धरि देह सुहाई। राजिवलोचन राम चले
तजि बापको राज बटाऊ की नाईं १॥

श्लोक॥ वन्दे विदेहतनुजापतिपादपद्मं ब्रह्माहरीशवरुणेन्द्र-
सुरौघसेव्यम्॥ योगीन्द्रवृन्दमनसामकरन्दलुब्धं मोहाब्धितारणप्लवं
करुणं शरण्यम् १ नृपचीर कहे जरकसी पाग जरी को जामा
दुशाला उरमाल पटुका धोती आदि नृप चीर कैसे रहे यथा कीर
कीर को कागर अर्थात् केंचुलि त्यागे यथा कीराकी देह निर्मल
देखात अथवा कीर सुवाको पिंजरा से अंगकी शोभा ढकी अरु
बन्धनते मन उदासीन जब वसन उतारि डारे तब अंग की शोभा
प्रसिद्ध देखपरी और राजबन्धन ते छूटि मन प्रसन्न भयो अरु
विभूषण जो हैं किरीट कुण्डल कण्ठा माला केयूर पहुँची कड़ा
मुद्रिका क्षुद्रघण्टिकादि ते उतारे ते स्वाभाविक अंग विभूषित सी
उपमा पाई भाव अलिक से कच सचिक्कण चमकि रहे अर्धचन्द्र से
उच्चभाल शोभित कामधनुष सी भृकुटी कञ्ज मीन खञ्जन से
नयन तिलफूल सी नासिका आदरस से कपोल बिम्ब से अधर
शरदपूर्ण चन्द्र से वदन कम्बुसी ग्रीव गजशुण्ड से भुज कञ्ज से
कर चल दलसों उदर भ्रमरसी नाभी तरंग सी त्रिवली सिंह से
कटि रंभ से जंघ कञ्ज से पद इत्यादि सर्वांग विना भूषणै भूषित

ताते अत्यन्त रूपवान् हैं यथा ॥ बिन भूषण भूषित युतन स
अनूपम सोई अरु श्रीअयोध्याजी कैसे तजे यथा मार्ग में वास व
रूख रूख कहिबे को यह भाव कि विना फल फूल को वृक्ष अ
अयोध्यावासी नर नारिन को कैसे छोड़े यथा पन्थ के संगी व
छोड़िबे में कछु शोक नहीं होत संग में सुबन्धु अर्थात् सेवकध
अरु सखाधर्म अरु बंधुधर्म तीनिहूं में प्रवीण श्रीलक्ष्मणजी
सेवकधर्म यथा सिद्धान्तमुक्तावल्याम् ॥ सर्वेश्वर सर्वज्ञ प्रभु अति
शय कृपानिधान ॥ इत्यादिक गुण आश्रयण सो आलंबन जान
आठो अंग प्रणामकै पादक्षालन पान ॥ कृपादृष्टि की चाह नि
सो उद्दीपन जान २ आज्ञा शिर धारे सदा सेवन चतुर अमान
ढीठ वचन बोलै नहीं यह अनुभाव बखान ३ पूर्व कहेते प्रणययु
अष्ट सात्त्विका जान ॥ तन मनको जो क्षोभही ताहिं सात्त्विक
मान ४ हर्ष गर्व चिंता स्मृती मति धृति अरु निरवेद ॥ तर्कशं
पुनि दीनता सब संचारि सुवेद ५ जिय प्रभु ताको ज्ञान पु
संभ्रम आदर दान ॥ स्वामि भाव करि प्रीति यह थाइ भा
जिय जान ६ प्रथमहिते सियरामको दर्शनही संयोग ॥ दर्श
पुनि अंतर परै ताकहँ जानि वियोग ७ वियुत प्रयुत द्वैयोग य
दश दश दशा बखानि ॥ कृशता जड़ता जागरण अनालंब धृ
हानि ८ ज्वर तापादिक व्याधि पुनि जरनि अंग सो जान
बाढ़े चित उन्मत्तता मूर्च्छा मरण निदान ९ ॥ इति सेवक अ
सखा गुण यथा ॥ सरस सलोने नेह निधि रघुवर बड़े सुजान
इत्यादिक गुण आश्रयण सो आलंबन जान १ चपल तुरंग
फेरनी मृगतकि मारन बान ॥ करिप्रिण लक्षण बेधन सब उद्दीप
जान २ धरिगल भुज बतलावनी इकसँग भोजन शयन ॥ अनुभा
यह सख्यके सब विधि सुखको अयन ३ पूर्व कहेते सात्त्विक

रोमांचादिक अत्र ॥ हर्ष गर्व आदिक सकल संचारिहु जो तत्र ४
सखरसकी अस्थायि पुनि प्रणय प्रेम अरु नेह ॥ अनुराग अस
जानिये मनो एक द्वै देह ५ इति सख्य गुण अरु सुबन्धु को गुण
वाल्मीकीय में लक्ष्मणजी के वचन हैं ॥ श्लोक ॥ अहं तव महाराज
पितृत्वेनोपलक्षये ॥ भ्राता भर्ता च बन्धुश्च पिता माता च राघवः ॥
ऐसे सुबन्धु श्रीलक्ष्मणजी अरु सब विधि अनुकूल पतिव्रतन में
शिरोमणि ऐसी पुनीत प्रिया श्रीजानकीजी तिनको साथ लिहे
मानो धर्म अरु क्रिया मूर्तिमान् संगमें शोभित हैं धर्म यथा सत्य
शौच तप दान सत्य कहे मन वचन कर्म ते सत्य कर्तव्यता शौच
कहे त्रिकाल स्नान करिये रज वीर्य मलिन पट स्त्री म्लेच्छ शूद्र
पतित क्लीब स्पर्श न करिये रजस्वला कपाली मृतक मशान ना
दर्शिये तप कहे इन्द्रिन को विषय जीतना प्रथम मूल फल भोजन
करि तपस्या करि स्थूल शरीर जाग्रत्अवस्था दशो इन्द्रिन को विषय
जीतना पुनः वारि आहार करि लिंग शरीर की षट्ऊर्मी षट् विकार
को विषय स्वप्न अवस्था को जीतै पुनः पवन आहार करि कारण
शरीर की सुषुप्ति अवस्था में सातौ धातुन को विषय जीतै पुनः
ब्रह्मानन्द है अद्वैतरूप की तुरीय अवस्था में दशौ इन्द्रिन को
सूक्ष्मवासनाकी विषय ताको जीतै दान कहे देशकाल सुपात्र
विचारि श्रद्धा आदरयुत निर्वासिक दान देना इति धर्म क्रिया
कहे अपने वर्णाश्रम के कर्म करना यथा ब्राह्मण के शम दम तप
शौच शांति दया ज्ञान विज्ञान पुनः क्षत्रिय के शूरता तेजवान् धैर्य
शास्त्र में दक्ष युद्ध में अचल दान में उदार पुनः वैश्य के कृषी
वाणिज्य गोरक्षा पुनः शूद्र त्रिवर्ण सेवा पुनः ब्रह्मचारी के
विद्याध्ययन गुरुसेवा भिक्षा भोजन पुनः गृहस्थ के दान स्वनारीरत
हरिअर्चा पंचग्रास दान अतिथि सेवा पुनः वानप्रस्थ स्त्री युत

तपस्या करि इन्द्रिय जीतै पुनः संन्यासी के विषय त्याग वृक्षतर वास भिक्षाभोजन इत्यादि क्रिया औ धर्म मूर्तिमान् मानों संग लै कमलनयन श्रीरघुनाथजी पिता की राज तजि बटाऊ राहगीर सम चले यामें त्याग वीरता देखाये १ ॥

कागर कीर ज्यों भूषण चीर शरीर लस्यो तजि नीर ज्यों काई । मातु पिता प्रियलोग सबै सनमानि सुभाइ सनेह सगाई ॥ संग सुभामिनि भाइ भले दिन द्वै जनु औधहुते पहुनाई । राजिवलोचन राम चले तजि बापको राज बटाऊ की नाई २ ॥

राजसी भूषण वसन कैसे त्यागे यथा पिंजरा को सुवा तजत इहां सुवा की उपमा याते दिये कि अपर पक्षी पालेते संमोहित होत अरु सुवा ऐसो निर्मोही होत कि जो जन्म भरि पाले रहिये तहूं जब दांव करि पायो तब पिंजरा तोरि भागि जात है तथा भूषण चीर तजे पर देह कैसी शोभित भई यथा काई तजि नीर निर्मल देखात भूषण दूषण मानि तजे यह वैराग्यदशा है वसन काई से तजे तन जलसों निर्मल देखानो यह रूपकी अधिकारताहै माता कौशल्यादै पिता श्रीदशरथ महाराज अपर जे प्रियलोग सनेह के सम्बन्धी रहे तिनको मोह तजि सहज सुभाव सन्मान करि छांड़े संग सुभामिनिं पतिव्रतमें प्रवीण श्रीजानकीजी अरु अमानी आज्ञाकारी सब विधिते भले भाई श्रीलक्ष्मणजी साथ लिये मानों द्वै दिन श्रीअयोध्याजी में पहुनाई करिकै भाव पाहुन को एक दिन रहिबो उचित है सो दुइ दिन रहि आसूदा ह्वैकै कमलनयन श्रीरघुनाथजी बापको राज तजि राही से चले गये याते विषयते विरक्त हैं २ ॥

शिथिल सनेह कहैं कौशिला सुमित्राजी सों मैं

न लखी सौति सखी भगिनी ज्यों सेई है । कहैं मोहिं मैया कहौं मैं न मैया भरतकी बलैया लैहौं भैया तेरी मैया कैकेई है ॥ तुलसी सरल भाय रघुराय मायं मानी कायसन बानीहू न जानिकै मतेई है । वाम विधि मेरो सुख सिरससुमन सम ताको छल छुरी को कुलिश लै टेई है ३ ॥

श्रीरघुनन्दन के सनेहते शिथिल कहे थकित है श्रीकौशल्याजी सुमित्राजी सों कहती हैं कि हे सखी ! कैकेयी को मैं सवति करिकै कबहूं नहीं देखी सदा बहिनि सम पालन करी है जब रघुनन्दन मोको मैया कहैं तब कहौं कि तुम्हारी मैया मैं नहीं हौं बलैया लियो मैं भरतकी मैया हौं हे भैया ! तेरी मैया कैकेयी है ऐसे वचन सुनि सरल है सुभाव जिनको ऐसे श्रीरघुनन्दन कैकेयी को माता करि मानी मन वच कर्महू करि मतेई कहे दूसरी माता करि नहीं जानी मतेई पश्चिमदेश की बोली है सिरस के फूल सम कोमल हमारो सुख अर्थात् क्षत्रियजाति तामें रघुवंश युद्धमें अचल ताके शिरोमणि धर्मधुरीण विषयते विरक्त ऐसे रघुवीर की माता ताको सुख पुत्र सदा संयोग कहा पुष्ट है दूसरे पति को जीवन रामदर्श अधीन सोऊ पुष्ट नाहीं ऐसो कोमल हमारो सुख ताके काटिबे हेतु वाम विधाता ने कैकेयी के छलरूप छूरी को क्रोधरूप वज्र में पैनाई भाव वज्र क्रोध कैकेयी करि दियो जाते छल ऐसो पैन भयो जो काहू के कहे गोठिल न भयो ३ ॥

कीजै कहा जीजीजू सुमित्रा परिपांय कहैं तुलसी सहावै विधि सोई सहियतु है । रावरो सुभाय राम

जन्महीते जानियत भरतकी मातु को कीबे शोचिय
है ॥ जाई राजघर ब्याहि आई राजघर महाराज
पायेहू न सुख लहियतु है । देह सुधा गेह तेऊ मृग
मलीन कियो ताहूपर बाहु बिन राहु गहियतु है ४ ॥

पाँयन परि सुमित्राजी कहती हैं कि हे जीजीजू ! जो विधात
सहावै सोई सहिवे को है तामें काह कीजिये आपुको तौ स्वभा
रीति रहस्य श्रीरघुनन्दन के जन्महीते जानियतु है भाव ज
अनेकन कल्प सत्कर्म करि बाहर भीतर शुद्ध होत तब श्रीरघुना
जी में प्रीति भक्ति होत यथा महारामायणे श्लोक ॥ ये कल्प
कोटिसततं जपहोमयोगैर्ध्यानैः समाधिभिरहोरतब्रह्मज्ञानात् । ते दे
धन्यमनुजा हृदि बाह्यशुद्धा भक्तिस्तदा भवति तेषु च रामपादौ
ताते तुम जो ऐसी न होतू तौ श्रीरघुनन्दन पुत्र कैसे होते ह
भरतकी माता को शोच करियतु है कि राजा की पुत्री भई फि
रघुवंशकुल में चक्रवर्ती के संग ब्याह भयो अयोध्या महाउत्त
राज पायो धर्मधुरीण भक्त शिरोमणि भरत से पुत्र पायो ताहूप
सुख न प्राप्त भयो यथा चन्द्रमा देह तौ सुधाको घर ताको वाह
मृगाने प्रकाश में मलिनता करिदई ताहूपर विना बाहुन को रा
ग्रहण करि सब शोभा लोप करि देत इहां चन्द्रमा से कैकेयी ता
हरि विमुखता कलङ्क मृगासे यश मलिन कियो ताहू में विधवाप
राहु समग्र शोभा लोप करि दियो सोऊ विना करको है ४ ॥

नाम अजामिलसे खल कोटि अपार नदी भ
बूड़त काढ़े । जो सुमिरै रज मेरु शिला कण हो
अजाखुर वारिद बाढ़े ॥ तुलसी जिनके पदपङ्कज

कटी तटनी जु हरै अघ गाढ़े । ते प्रभु या सरिता
रिबे कहँ मांगत नाव करारे ह्वै ठाढ़े ५ ॥

अपार जो भवनदी है तामें बूड़त अजामिल ऐसे करोरिन
खल पातकिन को राम ऐसो नाम काढ़ि लियो जन्म मरणादि
दुःख छुड़ाइ मुक्त करि दियो अरु जे रज सम रहे यमन वाल्मी-
कादि जो कर्म वायु वशते न मालूम कहां कहां उड़ते फिरते तेऊ
नाम लैके सुमेरु सम अचल परमधाम के अधिकारी भये अरु तिन
के जो पाप रहे शिला कहे पर्वतसे गरू ते नाम लेतही कणसम
ह्वै उड़िगये यथा निषाद कोल भिल्ल अरु समुद्र सों अपार दुःख
जिनको रहा यथा सुग्रीवादि ते प्रभुकृपाते छाग के खुरसम पार
भये गोसाईंजी कहत कि जिनके पदकमलन ते तटनी श्रीगङ्गाजी
उत्पन्न भई जो कठिन पापनको हरि लेती हैं तेई प्रभु भक्तन के
अधीन ह्वै प्रसिद्ध गङ्गाजी के पार जावे हेतु करार पर ठाढ़ ह्वैकै
वटते नाव मांगत हैं ऐसे भक्तवत्सल कृपालु हैं ५ ॥

यहि घाटते थोरिक दूरि अहै कटिलौं जल थाह
खाइहौंजू । परसै पगधूरि तबै तरणी घरणी घर को
मुझाइहौंजू ॥ तुलसी अवलम्ब न और कछू लरिका
हि भांति जिआइहौंजू । बरु मारिये मोहिं विना
ग धोये हौं नाथ न नाव चढ़ाइहौंजू ६ ॥

जब श्रीरघुनाथजी नाव मांगे तब केवट कहे कि हे महाराज !
हि घाटते थोरी दूरिपर सरिता थाह कटि तक जल है सो मैं
खाइ देहौं तहां उतरि जाइये भाव उतारि देबे में मोको इनकार
हीं है काहेते आपु के पग की धूरि लागे अहल्या सम मेरी नाउ

तरिजाइ तौ घरमें जाइ घरणी को कैसे समुझाइहौं भाव नारिन के जड़ता स्वभाव होत ताहूमें नीचजातिकी नारी महाप्रबल दूसरे औ अवलम्ब जीविका की मेरे कछु नहीं है तौ लरिका कौन भां जिआइहौं ताते बरुकु मोको मारिये सो अंगीकार है कि स परिवार तौ न मरैगो ताते यह सांची बात मैं कहतहौं विना प धोये नाव पर न चढ़ाइहौं परिवार जीव मुक्त करो चाहत ता व्याज स्तुति है ६ ॥

रावरे दोष न पांयन को पगधूरि को भूरि प्रभ महा है । पाहनते वनवाहन काठ को कोमल जल खाइ रहा है ॥ पावन पांव पखारिकै नाउ चढ़ाइ आयसु होत कहा है । तुलसी सुनि केवट के बर हँसे प्रभु जानकी ओर हहा है ७ ॥

केवट कहत कि हे महाराज ! आपके पदकमलन को दे नहीं है जाते नाव पर न चढ़ावों भाव पदकी प्राप्ती तौ सुकृ को अधिकार है ताते पग की धूरिही को महाभारी प्रभाव हम पातकी पतित तारिवेको है जो कहौ अहल्या तौ पाषाण र ताको कहत कि बन कहे जल ताको वाहन नाउ काठकी सो पा ते कोमल है ताहू में जल खाइ रहा भीजेते अति कोमल है त पवित्र पांव पखारि कहे धोइकै नाव पर चढ़ाइहौं हे नाथ ! त आपुकी का आज्ञा है तहां बरबैन कहे देशकाल समय सुहा कही थोरे वर्ण अर्थ बड़ो विलक्षण चातुरी हास्ययुक्त श्रवणरोच गूढ़आशय सनेहवर्धक ऐसे वचनन को आशय विचारि श्रीरघुना जी जानकीजी की ओर हेरि ठठायकै हँसे हँसिबे को यह भाव श्रीजानकीजी आह्लादिनी शक्ति हैं बद्धमुक्त जीव की व्यवस्था

अधिकारी हैं विना इनकी आज्ञा भवतरन दुर्लभ है सो वर्तमान बरजोरी करि केवट परिवार सहित भवसागर पार जात है याले हँसे व जनकपुर में तुमहूं रजको भय मानि पद स्पर्श नहीं करती रहौ व तुम्हारी सेवा बरबस केवट लेत है ७ ॥

पात भारी सहरि सकल सुत बारे बारे केवट की जाति कछू वेद न पढ़ाइहौं । सब परिवार मेरो याही लागि राजाजी हौं दीन वित्तहीन कैसे दूसरी गढ़ाइहौं ॥ गौतम की घरणी ज्यों तरणी तरैगी मेरी प्रभुसों निषाद ह्वैकै वाद न बढ़ाइहौं । तुलसी के ईश राम रावरे सो सांची कहौं विना पग धोये नाथ नाव ना चढ़ाइहौं ८ ॥

हे हरि श्रीरघुनन्दनजी ! पाँति भारी सहितहौं भाव परिवार भारी मेरे है तामें सब लरिका छोटे छोटे कछु मँजूरी करिबे लायक नहीं हैं अरु वेद पढ़ाइ न सकौंगो जो जामें बैठे जीविका होइ काहेते केवट नीच जातिहौं हे महाराज ! मेरे सब परिवार की जीविका यही नाउकी उतराई है अरु गरीब द्रव्यहीनहौं ताते दूसरी नाउ न बनवा सकौंगो जो गौतम की नारी सम मेरी नाउ तरिजाइ तौ मैं क्या करौंगो जो आपु बनवाइ देबे के योग्यहौ तौ मैं निषाद ह्वैकै वाद न बढ़ाइहौं कि मोको आपु बनवाय दीजै ताते महाराज आपुते मैं यह साँची बात कहतहौं हे नाथ ! विना पग धोये नाउपर न चढ़ाइहौं इति वाच्यार्थ । अथ व्यंग्यार्थ पात नामहै दोषको शीघ्रबोध में प्रसिद्ध है हे हरि ! पात जो दोष सो हमारे भारी है अरु सकल सुत बारे कहे बालबुद्धी अज्ञान

हैं अरु केवट नीचजाति वेद पढ़ाइ नहीं सकत जो अर्चादि सु
करिसकैं ताते सब परिवार मेरो पदरजके आसरे में लागिहैं
कहो आजु चूकि जाउँ तौ सुकृतिरूपी द्रव्यते हीन दीनहौं दू
कैसे गढ़ाइहौं भाव ऐसो संयोग फिरि ना मेरो बनायो बं
ज्यों गौतम की घरणी तरी है तैसे पदरज पाय मेरी तर
भवसागर में तरैगी प्रभु सो भाव आपुके पारकिहे भवसागर
होउँगो सो आपु भवसागर के तारक स्वामी सो मैं तु
निषाद है वाद न बढ़ाइहौं भाव बहुत बातैं न करोंगो सां
बात एक आपुते कहतहौं विना पग धोये भाव विना भवसा
पार भये नाथजी आपुको नावपर न चढ़ाइहौं इति विज्ञार्थ ।
लक्ष्यार्थ केवट की जाति कछु वेद न पढ़ाइहौं भाव हिंसै तो
तामें बालक अज्ञानी बेप्रयोजन के जीव बद्ध करते हैं ताहूमें
कुटुम्ब ते अधिक पापवृद्धि होइगी अरु सब परिवार मेरे
लागि भाव हिंसाकर्म करि जीविका है जो कहो कि हिंसा
क्रिया न करौ ताको कहत कि दूसरी निरहिंसकी क्रिया
कराइ सकौं भाव वित्तहीन दीन जो हिंसा न करैं तौ खाउँ
ताते यथा गौतम की त्रिया तरी तैसे पदरज पाइ मेरी तर
भवसागर में तरैगी अरु निषाद कहे पतित जीव ह्वैकै मैं प्रभु
ईश्वर ताते वाद न बढ़ाइहौं भाव ज्ञान मार्ग अहंब्रह्म न कहौं
हे महाराज ! आपुते सांची एक बात कहतहौं भाव निःछल शु
शरणागत में मेरो कल्याण है ताते हे नाथ ! विना पग धोये भ
विना चरणोदक लिहे नाउपर न चढ़ाइहौं भाव पार न उतारि
यामें यह अभिप्राय कि प्रथम मैं पावन ह्वैकै तब आपुकी सें
को अधिकारी होउँगो ८ ॥

जिनको पुनीत वारि शिरसि बहै पुरारि त्रिपथगामिनी यश वेद कहै गाइकै । जिनको योगीन्द्र मुनिवृन्द देव देह दमि करत विविध योग जप मन लाइकै ॥ तुलसी जिनकी धूरि परसि अहल्या तरी गौतम सिधारे गृह गौनोसो लेवाइकै । तेई पाँय पाइकै चढ़ाय नाव धोये बिनु ख्वैहौं ना पठावनी कै ह्वैहौं न हँसाइकै ९ ॥

पुरारि कहे महादेव तिनके शिरसि कहे शीशपर बहत है जा पावन को पावन वारि अर्थात् गङ्गाजी त्रिपथ कहे स्वर्ग मृत्यु पाताल तिनको पवित्र करिबेहेतु तिहूँपुर को त्रिधारा ह्वैगई ताते त्रिपथगा नाम काहि जिनको यश वेद गावत हैं पुनः जिन पावनकी प्राप्ती हेतु शिवकर भजनादि योगीन्द्र सनकादि नारद अगस्त्य वाल्मीकादि मुनिवृन्द इन्द्र वरुण अग्नि रवि यमादि देवता ते देह अर्थात् इन्द्रिन की विषय जीतबेहेतु तपस्यादिक देहको दमन कहे दण्ड दै विविध भांति अष्टाङ्गादि योग अरु विधिपूर्वक जप पुरश्चरणादि मन लगाइकै करतहैं अरु जा पद की धूरि परसि अहल्या पवित्र है दिव्य देह भाई ताको गौतमऋषि गौनो सो अर्थात् नवीन पवित्रसी मानि लिवाइकै अपने धामको सिधारे अर्थात् जिनते त्रिलोकपावनी गङ्गा प्रकटीं जिनके मिलबे को योगीन्द्रादि युक्ति करत जिनते अहल्या भई पावन तेई लोकपावन पावन को पाइ विना धोये पादोदक लै कृतार्थ भये आपुको नावपर चढ़ाइ पार पठै ताकी पठावनी कहे मँजूरी खोइ न देहौं अरु अपनी हानि करि हँसी करैहौं न ऐसे वचन साहित काव्य में काकुवैशिष्ट्य व्यंग्य कहावते हैं अरु हानि हँसी लोक प्रवाद ते लोकोक्ति अलङ्कार है ९ ॥

प्रभुरुख पाइकै बोलाइ बाल घरनिके वन्दिकै च
चहूंदिशि बैठे घेरि घेरि । छोटोसो कठौता भरि आ
पानी गंगाजीको धोइ पाँइ पीवत पुनीत वारि फेरि फे
तुलसी सराहै ताको भाग सानुराग सुर बरषैं सुमन ज
जय कहैं टेरि टेरि । विबुध सनेहसानी वाणी असया
सुनि हँसे राम जानकी लषणतन हेरि हेरि १० ॥

श्रीरघुनाथ की आज्ञा को रुख पाइ केवट अपने बालकन
बुलाये ते आइ कै श्रीरघुनाथजी के पदकमलन की वन्द
करि चारिहूं दिशि घेरि घेरि समीप बैठे सुन्दरे छोटे कठौता
गंगाजल लै प्रभु के पदकमल धोइ ता पवित्र जल को बार ब
सब पान करत गोसांईजी कहत कि ता निषाद की भाग्य के सा
अनुराग देवता सराहना करिकै फूल वर्षि जोर जोर सों टेरि
जयजयकार करत भाव अधम उधाररूप श्रीरघुनाथजी स
और दूसरो रूप नहीं है ऐसी सनेहसानी असयानी कहे छ
चतुराई रहित सांची वाणी देवतनकी सुनि श्रीरघुनाथ श्रीजनक
नन्दिनी लषणलाल की दिशि हेरि हेरि हँसे भाव तुम्हारी से
में निषाद साक्षी भयो वा देवन के उच्चस्वर ते जयकार सुनि प्रे
वश जानिकै वा भक्तवत्सलता की प्रशंसा सुनि हँसे यामें हास्यर
यथा अटपटे बैन केवट के औ कठौता में पावँ धोवत में घेरि बैठ
देवन के विह्वल वचनादि विभाव मुख अधर दृगादि को विका
अनुभाव हर्ष चपलतादि संचारी हँसी आइबो अस्थायी ताते हास्
रस सांगपूर्ण है औ भक्तवत्सलता सौहार्द गुण है निदर्शना
लङ्कार है १० ॥

पुरते निकसी रघुवीरवधू धरि धीर दये मग में डग
द्वै । झलकी भरि भाल कनी जलकी पट सूखि गये
मधुराधरवै ॥ फिरि बूझति है चलनोबकितो प्रिय पर्ण
कुटी करिहौ कितवै । तियकी लखि आतुरता पियकी
अँखियां अति चारु चलीं जल च्वै ११ ॥

सुरसरि उतरि स्नान करि तटपर काहू ग्राम के निकट वृक्षतर पू-
जादि करत में दुपहर ह्वैगये चैतमास ताते घाम निर्मल भूमि तप्त में चले
पुरते निकसतही श्रीजानकीजी अत्यन्त सुकुमार ताते डरीं परन्तु श्री-
रघुवीरकी वधू अपना को मानि भाव वीर की अर्धांगी ताते धैर्य धरि
मार्ग में डग कहे पग द्वै कहिबो लोक प्रवाद अर्थात् थोरि ही दुरि में
भाल कहे माथ भरे में जल पसीना की कनी निसरि झलकन लगी
वै जे मधुर अधर दोऊ पट ओटते सूखि गये ललित अरुणाई लोनाई
मधुराई पै रुखाई दरशि आई इत्यादि विवरण दशा ह्वै गई ताहूपर धैर्य
धरे फिरि बूझती हैं कि अब केतनो चलनो है हे प्राणप्रिय ! कहांताईं
चलि ह्वैकै पर्णकुटी करिहौ तिय जो श्रीजानकीजी तिनके मनकी आतु-
रता अर्थात् पर्णकुटी थलताईं पहुँचबे की शीघ्रता अरु तनकी सुकु-
मारता में श्रमकी विवरणता देखि पिय जो श्रीरघुनाथजी तिनकी
अत्यन्त जो सुन्दरी अँखियां हैं तिनमें जल चुवै चले भाव अति
स्नेहते करुणा बढ़ि तनमें न अँवाइ सकी ताते आंसुनकी प्रवाह धार
बहि चली यामें अनुकूलत्व दर्शाइबे ते निदर्शनालंकार है ११ ॥

जलको गये लक्ष्मण हैं लरिका परिखो पिय छांह
घरीक ह्वै ठाढ़े । पोंछि पसेउ बयारि करौं अरु पाँइ
पखारिहौं भूभुरिडाढ़े ॥ तुलसी रघुवीर प्रिया श्रम

जानिकै बैठि बिलंबसो कंटक काढ़े । जानकीनाह
नेह लख्यो पुलको तन वारि विलोचन बाढ़े १२

श्रीजानकीजी रघुनाथजी सों कहती हैं कि लषणलाल अ
लरिका हैं ते अकेले जल लेवे हेतु गये हैं ताते हे प्राणपति
एक घरी भरि वृक्ष की छाया में ठाढ़े ह्वैकै देखिलेहु भाव लष
लाल को तके रहौ या में भक्तवत्सलता है अरु आपुके पसे
कहे श्रमजल मुखपै आयो ताको पोंछिकै बयारि करिदेउँ ज
तन सीरो ह्वैजाइ अरु भूभुरि कहे तप्त रज तामें चलेते आ
कोमल चरण डाढ़े भाव तप्त ह्वैगये तिनको पखारि कहे धोइ डा
जामें पद सीरे ह्वैजाइँ गोसाईंजी कहत कि श्रीरघुनाथजी ि
जो श्रीजानकीजी तिनको श्रमित जानि कै विलम्ब कहे देरत
बैठिकै कंटक पग के कांटा निकासे अथवा कंटक कहे चलबे
श्रम गरमी थका छाया में सहताइकै निकासि डारे याते श्रीजान
जी नाह जो श्रीरघुनाथजी तिनको नेह अपनापै विचारि भाव
को थकित जानि श्रीरघुनाथजी देरतक थँभे यह विचारि श्रीजान
जीको तन प्रेमते पुलकि भरिकै न अँबानो ताते आंसू नेत्रन
भरिआयो यामें परस्पर प्रीति की अतिशय ताते स्वाधीनपति
अरु अनुकूल नायकतु है अरु करुणा गुण है १२ ॥

ठाढ़े हैं नौद्रुम डार गहे धनु काँधधरे करशायकलै
बिकटी भृकुटी बड़री आँखियां अनमोल कपोलन
छबिहै ॥ तुलसी अस मूरति आनि हिये जड़ डारु
प्राण निछावरिकै । श्रमशीकर साँवरि देह लसै म
राशि महातम तारकमै १३ ॥

नवद्रुम नवीन पल्लव करि सघन है छांह जामें ऐसे वृक्षतर मार्ग को श्रम निवारण हेतु डार गहे श्रीरघुनाथजी ठाढ़े हैं ता समय कैसी शोभा है कि बिकटी कहे टेढ़ी काम धनुष सी भृकुटी मृग शावकसे बड़े बड़े नेत्र अरु अमल कपोलनकी छवि अमोल रत्ना-दर्शसम है नीलमणि सजल मेघसो साँवरी देह में श्रमशीकर कहे पसीनाकी कनै निकसि कैसी शोभा देरही हैं मानो महातम-राशि भादों अमावस की रैनिको समूह अन्धकार सो तारक कहे नक्षत्रमयी है सघन नक्षत्र उदय हैं गोसाईंजी कहत कि ऐसी जो श्रीरघुनाथजी की मूर्ति आर्तहरणहारी ताको हिये में लाउ हे जड़ मन ! प्राणन को निवछावरि करिडारु भाव आत्मसमर्पण शुद्ध शरणागत में तेरो कल्याण है ऐसो रूप आरत भक्तको ध्यान है साँवरीदेह श्रमशीकर उपमेय में तमराशि नक्षत्रनकी सम्भावना ताते वस्तूत्प्रेक्षालंकार है १३ ॥

जलज नयन जलजानन जटाहै शिर यौवनउमंग
अंग उदित उदारहैं । साँवर गोरेके बीच भामिनी
सुदामिनीसी मुनिपट धरे उर फूलनके हारहैं ॥ करनि
शरासनशिलीमुख निषंगकटि अतिही अनूप काहू
भूपके कुमारहैं । तुलसी विलोकिकै त्रिलोकके तिलक
तीनि रहैं नर नारि ज्यों चितेरे चित्रसारहैं १४ ॥

मार्ग में प्रभु के दर्शन पाये ते अपने ग्राम में अपर लोगन ते कहत कि जलज कहे कमल के सम नेत्र कमल सम मुख शीश में जटाजूट धारण देहन में यौवन की उमंग करिकै शोभा की उदारता अंग अंग में उदित नाम प्रकाशित है श्याम मेघ सम

सँावरो कुँवर श्वेत मेघ सम गौर कुँवर ताके बीच में भामि सुन्दरि दामिनीसी शोभित मुनिपट बल्कलादि वसन धारण उर में फूलन के माल पहिरे करकमलनमें सुन्दर धनुष बाण धा किहे सिंहसे कटि मनोहर तरकस शोभित यहि वेषते यह सूचि होत कि काहू महाराज के कुमार हैं परन्तु शोभाके सुकुमा लावण्यतादि रूपकी उपमा योग्य रूप दूसरो त्रिलोक में नहीं याते यह सूचित होत कि ये मनुष्य नहीं हैं तौ हैं कौन ता कहत कि तीनिउँ लोक के तिलक तीनौं रूप हैं भाव लोकन भूषण हैं अर्थात् गोलोकनिवासी ताते स्वर्ग लोक के भू श्रीरघुनाथजी अथवा अयोध्यापुरी भगवत् को शीशहै पद्मपुराणे विष्णोः पादअवन्तिका गुणवती मध्ये च काञ्चीपुरी नाभौ द्वारव तथा च हृदयं मायापुरी पुण्यदा । श्रीवामूलमुदाहरोति मथु नासाग्रवाराणसी एतद्ब्रह्मपदं वदन्ति मुनयोऽयोध्या पुरी मस्तके सो शीश तनमें ऊर्ध्व रहत ता अयोध्या भूषण ताते श्रीरघुनाथ स्वर्ग के भूषण हैं अरु भूषण उत्पन्न है लोक भूषित करो त मृत्युलोकके भूषण श्रीजानकीजी अरु शेषावतार ते पाताल लो के भूषण लक्ष्मणजी तहां तिलक में तीनि रेखा होत आगे श्रीरघुनाथजी पीछे लषणलाल ते किनारे के रेखा श्री स्थाने बीच में जानकीजी शोभित गोसाईंजी कहत त्रिलोक के तिलक जो तीनौं रूप तिनको देखि नर नारी म मोहितहै प्रेमते पुलकि देह थकित यकटक नेत्र ह्वै कैसे रहि यथा चित्रसार के चितेरे चित्र कैसे प्रतिमा भामिनी दामिनी यामें धर्मलुप्तोपमालंकार है माधुरी गुण है १४ ॥

आगे सोहै साँवरो कुँवर गोरो पाछे आछे का मुनिवेष धरे लाजत अनंग हैं । बाण विशिखास

वसन वनहीं के कटि कसे हैं बनाइ नीके राजत नि-षंग हैं ॥ साथ निशिनाथमुखी पाथनाथनन्दिनी सी तुलसी विलोके चितलाइ लेत संग हैं । आनँद उमंग मन यौवन उमंग तन रूपकी उमँग उमँगत अंग अंग हैं १५ ॥

सांवरो कुँवर आगे श्रीरघुनाथजी गोरो कुमार पीछे श्रीलक्ष्मणजी मार्ग में शोभित आछे काछे अच्छी ठाट बनाये ऐसे रूपवान् शोभामय हैं जो मुनिनहूं को ऐसो वेष धरे ताहूपर जिनकी शोभा देखि कामदेव लाजत है विशिखासन जो धनुष सुन्दर बाण करकमलन में लिहे वनही के वल्कलादि वसन अच्छी भांति बनायकै कटि में कसे सुन्दर तरकश शोभितहै निशिनाथ चन्द्रमा ऐसो मुख है जाको ऐसी स्त्री साथ लिहे सो कैसी मनोहर पाथ जल ताको नाथ समुद्र ताकी नन्दिनी लक्ष्मी ऐसी अर्थात् मोहन शक्ति लक्ष्मी के नामही में है ताते लक्ष्मीसी कहे गोसाईंजी कहत कि दया-दृष्टि जाकी दिशि हेरत वा सप्रेम जो कोऊ उनकी दिशि हेरत ताको चित्त अपने साथ लगाइ लेत ते कैसे हैं आनन्द की उमंग जिनके मनमें है भाव मन सदा प्रसन्न रहत यौवनकी उमंग तन में भाव देहै दीप्तिमान् है रूपकी उमंग ते सब अंगन में उमँगत है भाव विना भूषणौ सर्वांग भूषित से मन मोहन करत १५ ॥

सुंदर वदन सरसीरुह सुहाये नैन मंजुल प्रसून माथे मुकुट जटानिके । अंसनि शरासन लसत शुचि करशर तूण कटि मुनिपट लूटक पटानिके ॥ नारि सुकुमारि संग जाके अंग उबटिकै विधि विरच्यो वरूथ

विद्युतछटानिके । गोरेको बरण देखे सोनो न सलो
लागै साँवरे विलोके गर्व घटत घटानिके १६ ॥

शरद् पूर्णचन्द्र सम सुन्दर वदन नवीन अरुण कमल सुहावने नेत्र माथन पै जटा के मुकुट ताके बीच मंजुल कहे श रंग के फूलन के गुच्छा शोभित अंस कन्धा तिनमें शरासन धनुष लसत कहे शोभित करकमलनमें सुन्दर बाण लिहे कटि तरकस संयुक्त मुनिन के वस्त्र शोभित यह अद्भुत रूप प लूट कहे भाव परदा रहित है सब स्त्री पुरुष देखतहैं वा पट पलक को परिबो लूटत देखनहार को यकटक करत वा मुनि कैसे शोभित होत जो पीताम्बर जरी आदि पटन की शोभा लूटनहार हैं भाव जा अंगनको पाय वस्त्र शोभित रहे ता अं को छीनि आपु शोभित भये संग विषे नारि सुकुमारि कैसी श भायमान है जाके अंग को उबटन करि मैल लैकै ब्रह्माने अ विजुलिन के वृन्द रच्यो है गोरे कुमारके तनको वर्ण देखेते सो कान्तिरहित देखात सांवरे कुँवर को वर्ण देखि घट जो श्य सजल मेघ ताको गर्व टूटिजात यामें उपमान निरादरते प्रतीप लंकार नयनकमल में वाचक धर्मलुप्तोपमा कांति अरु लावण्य गुण है १६ ॥

वल्कल वसन धनुबाण पाणि तूण कटि रूप
निधान घन दामिनी बरण हैं । तुलसी सुतीय सं
सहज सोहाये अंग नवल कमलहूते कोमल चरणहैं
औरै सो वसंत औरै रति औरै रतिपति मूरति विलो
तन मनके हरण हैं । तापस वेषै बनाय पथिक प

सहाय चले लोक लोचननि सुफलकरण हैं १७॥

वल्कल कहे मुनि के से वसन धारण किहे करकमलन में धनुष बाण कटि में तूण कहे तरकस शोभित दोऊ कुमार श्याम गौर ते रूप के निधान कहे स्थान हैं गोसाईंजी कहत कि सुन्दरि स्त्री संग में श्रीमहाराजकुमारी जिनके सर्वांग सहजही में सुहावने हैं जिनके चरण नवीन कमलहूते कोमल हैं इत्यादि रूप उपमेयकी सम्भावना करत औरै सो कहे दूजो गौर राजकुमार रूप धारण किहे वसन्त है पुनः औरै राजकुमारी रूप धारण किहे रति है पुनः औरै श्याम राजकुमार रूप धारण किहे कामदेव है जिनकी मूर्ति देखेते यह साबित होत कि मन तनके हरणहार हैं तन के कर्णादि इन्द्रियन को विषय शब्द स्पर्श रूप रस गन्धादि अरु मन आदि की वासना छोड़ाइ अपने रूप में लगाइलेत तेई मनोहर तीनों रूप तापस कैसो वेष बनाय पथिक है पथ में शोभायमान लोक के नेत्रन को सफल करिबे हेतु चले हैं इहां तीनों रूप उपमेय में वसन्तादि की सम्भावना करे अरु जानो मानो आदि वाचक नहीं ताते गम्योत्प्रेक्षा है १७ ॥

वनिता बनि श्यामल गौर के बीच विलोकहु री
सखि मोहिसी ह्वै । मगयोग न कोमल क्यों चलिहै
सकुचात मही पदपङ्कज छ्वै ॥ तुलसी सुनि ग्रामवधू
बिथकीं पुलकीं तन औ चले लोचन च्वै । सब भांति
मनोहर मोहनरूप अनूप हैं भूप के बालक द्वै १८ ॥

परस्पर ग्रामवधून की वार्ता है श्रीराम जानकी लक्ष्मणजी को अनूप रूप देखि मोहित है कहत कि श्याम गौर दोऊ राजकुमारन के बीच कंचनवरण चन्द्रवदनी वनिता कैसी बनी है हेरी सखी

मोहिसी है देखु तौ भाव मोहिगईसी है मन लगाय नेत्र आस
हैकै वा मेरी ऐसी दशा है कै देखु युगकुल उजियारी राजकुमा
परम सुकुमारी कठोर मार्ग चलिबे योग्य नहीं है सो कैसे च
है जाके कमलहू ते कोमल चरणकी सुकुमारता स्पर्श भये भू
सकुचाइ जात गोसाईंजी कहत कि ताकी वाणी सुनि ग्राम
थकित है प्रेमते देह पुलकित नेत्रन में आंसू बहि चले अनुराग
है सब कहती हैं कि सब भांति मनोहर जहां जैसो चाही त
तैसही अंग बनो है जा अंग को देखिये तहँ मन मोहिजात त
मन को हरणहारे मोहन रूप भूप के दोऊ बालक अनूप हैं य
सुकुमारता अरु सौंदर्यता गुण है १८ ॥

साँवरे गोरे सलोने सुभाय मनोहरता जित
लियो है । बान कमान निषङ्ग कसे शिर सोहे ज
मुनिवेष कियो है ॥ संग लिये विधुबैनी वधू रति
जिन रञ्चक रूप दियो है । पांयन तौ पनहीं न पया
क्यों चलिहै सकुचात हियो है १९ ॥

श्याम गौर दोऊ राजकुमार सुभाय कहे सहजही में सल
अर्थात् लावण्यता ते परिपूर्ण हैं जिन अपनी मनोहरता ते काम
जीति लियो है वा कामकी शोभा बरबस जीतिकै आप लैलि
है काहेते बाण धनुष करकमलन में शोभित कटि में तरकस
शीशपै जटाके मुकुट शोभित मुनि कैसो वेष वल्कल वसन धा
किये ते शांतरसमय वीर है अरु कामदेव शृङ्गाररसमय वीर है त
शांत रसते शृङ्गाररसको जीतिबो उचित है तहां काम के संग दि
स्त्री है ताके हेतु कहत कि संग में चन्द्रवदनी तिया कैसी शोभ
मान जाने अपने रूप सिंधुते बुंदमात्र रूप रति को दियो है

जाके रूप राशि के आगे रतिको रूप रतीमात्र है, हे सखी ! मेरे
उरमें यह संकोच आवत कि सुन्दर सुकुमार राजकुमारन के पांयन
में पनहिउँ नहीं हैं कठोर भूमि मार्ग में पयादे कैसे चलिहैं यामें
लावण्यता सुकुमारता स्वरूपता है १९ ॥

रानी मैं जानी अयानी महापवि पावनहूते कठोर
हियो है । राजहु काज अकाज न जान्यो कह्यो तिय
को जेहि कान कियो है ॥ ऐसी मनोहर मूरति ये बिछुरे
कैसे प्रीतम लोग जियो है । आँखिनमें सखि राखिबे
जोग इन्हैं किमिकै वनवास दियो है २० ॥

हे सखी ! रानी कैकेयी को सुभाव मैं जानि लई कि महा
अयानी कहे अज्ञानी है भाव क्रोध लोभ मोह फंद में बँधी है पुत्र
राज्य पाइबो लोभफंद है सपत्नी ईर्षा क्रोध फंद है हरिसों विमु-
खता मोह फंद है यही महाअज्ञान वशते वज्रहू पाषाणते कठोर
हियो हैगयो अरु दशरथ महाराजहू काज में अकाज हैजावो न
जाने काहेते वोऊ कामफंद में बँधे तौ तौ राजा ने ऐसो अज्ञान
रानी के वचन सुनि मानि लियो जाते ऐसी मनकी हरनहारी
इन तीनों मूर्तिन को वन दियो वे प्रियतम लोग इनके प्रिय
सम्बन्धी कैसे कठोर हृदय के हैं जो इनके वियोग भये पर जियत
रहिगये सखी जो जप तप योग वैराग्य ज्ञानादि करि ये मूर्ति प्राप्त
होइ तौ आंखिन कहे ध्यान में राखिबे योग्य हैं भाव ध्यान में
प्राप्ति दुर्लभ है तिन्हैं किमिकै कौन कर्तव्य करि आपनी वशि
करिलिये यौवन कठोर में वास दिये यामें रमनीकता माधुरी
गुण है २० ॥

शीशजटा उर बाहु विशाल विलोचन लाल तिरीछी-

सी भौंहैं । तूण शरासन बाण धरे तुलसी व
मारगमें सुठि सोहैं ॥ सादर बारहिबार सुभाय चि
तुमत्यो हमरो मन मोहैं । पूंछति ग्रामवधू सिय
कहु सांवर सो सखि रावरो को हैं २१ ॥

वन मार्ग गमन जानकीरमणजीकी रूप यौवनादि अनूप सं परम पियूष रसमय विहार वल्लभजी को मनोहर रूप देखि का शरमारी प्रेमासक्तवारी ग्रामनारी श्रीजनककुमारीजी सों पूछती कि हे राजकुमारी ! जाके जटाके मुकुट भाल उर भुज विश मीन मृग खंजन मदगंजन अरुण कंजन सम नयन मनरंजन मनोहर तिरछी भृकुटी हैं तरकस कटितट मुनिपट धनु बाण कं पाणि दृग सुखदानि वन मार्ग में सुन्दर शोभित हैं भाव भू पोशाक सवारी रहित मनमोहन हैं ते राजकुमार आदर सों बारंबार सुभाय कहे सहज में पवित्र दृष्टि चितै तुमत्योभाव तुम्ह ऐसोहै हमारो मन मोहित होत ऐसी बातैं कहि ग्रामवधू श्रीजान जी सों पूछती हैं कि हे सखी ! कहौ सांवरे राजकुमार तुम्हारे को ये निश्छल वचन सनेहवर्धन हेत हैं जानकीजी सों अरु रघुन जी सों स्वयंदूतत्व करि वचनविदग्ध है २१ ॥

सुनि सुन्दर बैन सुधारस साने सयानिहै जान
जान भली । तिरछे करि नैन दै सैन तिन्हैं स
भाय कछू मुसक्याइ चली ॥ तुलसी त्यहि औ
सोहैं सबै अवलोकत लोचनलाहु अली । अनुरा
तड़ागमें भानु उदै बिकसी मनो मंजुल कंजकली २

सुन्दर बैन कहे देशकाल समय सुहावने थोरे वर्ण अर्थ ब

विलक्षण चातुरी हास्ययुक्त श्रवणरोचक गूढाशय स्नेहवर्धक याते सुन्दर सुधारस साने शृङ्गाररस साने अर्थात् जानकीजी सों कहतीं अरु श्रीरघुनाथजी सों गूढोक्ति विदग्ध वचन चातुरी है ताको श्रीजानकीजी भलीभांति ते जानिलई कि ये सब ग्रामवधू क्रिया वचन विदग्ध में परम चातुरी हैं यह जानि श्रीजानकीजी क्रिया विदग्ध करि बोध करती हैं श्रीरघुनाथजी की दिशिको तिरछे नेत्र करि सैन बुझाय दियो भाव ये हमारे पति हैं या भांति सबनको समुझाइ मुसक्यायकै चलीं मुसक्याबे को यह भाव कि जो तुम हमारे प्राणप्यारे को देखि कामासक्त भई ताते वचन चातुरी करि विदग्ध हून चाहती हौ भाव अपनो प्रीति जनाय इहां विश्राम कराय मिला चाहती हौ तौ जो हमारे प्राणप्यारे तुमको अंगीकार करैं तौ हम ईर्षा नहीं करैंगी क्योंकि तुम्हारो वचन चातुरी तौ लोकहेतु है हमते तौ तुम निरछल अपनी आसक्ती कहि दई कि तुम्हारे मनसम हमारो मन मोहि गयो यह तुम्हारी सांची बात सुनि हमतौ प्रसन्न हैं परन्तु हमारे प्राणप्यारे की रीति रहस्य तौ विचारिये एतौ एक पत्नीव्रत अनुकूल नायक हैं ऐसी क्रिया समुझि श्रीजानकीजी को स्वाधीनपतिका जानि अनुराग करती भई ताते स्वसुख की वासना त्यागि तत्सुखपर आरूढ़ भई श्रीजानकीजी की प्रसन्नता हेतु अनुराग करती भई तब निश्चिन्त है लोचन को लाभ लेन लगीं भाव रूपकी माधुरी को अवलोकन सोई नेत्रन को लाभ मानि श्रीरघुनाथजी को यकटक है ग्रामवधू देखन लगीं गोसाईंजी कहत कि ता अवसर में सब समाज कैसे सोहत मानों रूपभानु उदय देखि अनुराग तड़ाग में शोभा श्वेत कमलकली ने विकाश कियो श्रीरामरूप भानु ग्रामवधुन को अनुराग तड़ाग में श्रीजानकीजी को मुख श्वेत कंज मुसक्यानि विकाश है यामें उत्प्रेक्षा के अन्तररूपक अलङ्कार है २२॥

धरि धीर कहैं चलु देखिय जाय जहाँ सजनी जनी रहिहैं । कहिहै जग पोच न शोच कछू फ लोचन आपनतौ लहिहैं ॥ सुख पाइहैं कान सुने तियां कल आपुसमें कछु पै कहिहैं । तुलसी अति लगी पलकैं पुलकी लखि राम हिये महिहैं २३ ॥

जब प्रेम विवश ग्रामवधू श्रीरघुनन्दन को निरखन लगीं ता समय श्रीरघुनाथजी आगेको चले ता वियोग ते विवरण भईं पु धैर्य करी अथवा लोकलाज भय ते धैर्य करि कहत कि हे सखी ये राजकुमार जहां वास रात्री को करिहैं तहां चलौ जाइकै दे यामें जो लोक पोच कही जग के लोग बुराई करिहैं ताको शो कछू नहीं है हमारे नेत्र अपने फलतो पैहैं अर्थात् आंखिनभ राजकुमार को देखब तौ अरु सुन्दरी बातैं परस्पर करिबै की तिनको सुनि कै हमारे कान तौ सुख पैहैं गोसाईंजी कहत प्रेमावेशते पुलकांग है देह भरि आई अरु श्रीरघुनाथजी को उरमें आइगयो ताते नेत्रन की पलकैं बन्द करि ध्यान में भईं यामें रमणीकता गुण है २३ ॥

पद कोमल श्यामल गौर कलेवर राजत कों मनोज लजाये । कर बाण शरासन शीश जटा सरसी रुह लोचन सोन सुहाये ॥ जिन देखे सखी सतभा हुते तुलसी तिनतौ मन फेरि न पाये । यहि मार आजु किशोरवधू विधुबैनीसमेत सुभाय सिधाये २४

पद कमलसम कोमल हैं देखनहारी औरन ते कहतीं

श्याम गौर कलेवर कहे देहैं कैसी शोभायमान राजत जाको देखि कामदेव लजात है कर कमलन में धनुष बाण धारण शीश में जटा के मुकुट सरसीरुह कहे कमल सम लोचन सोन कहे अरुण शोभायमान ऐसे जो श्याम गौर राजकुमार तिनको जो सहजहू सुभावते देखे अर्थात् प्रीतिपूर्वक नहीं तिनहूं अपनो मन फेरि न पाये अर्थात् इनहीं के संग मन पठाये हे सखी ! आजु यहि मार्ग में द्वै राजकुमार विधुबैनी कहे चन्द्रवदनी संग में लिहे सौभाय सहजही अर्थात् इहां काहूते कछु काज नहीं न मालूम कहां को चले गये विधुवदनी को विधुबैनी प्राकृत में भयो यथा दीपक को दिया लक्ष्मण को लषण लक्ष्मी को लक्ष भानु को भान गोविन्द को गुविंद लोचन को लोयन इहां ग्राम चर्चा ते ग्रामीन पद भूषण है २४ ॥

मुखपंकज कंज विलोचन मंजु मनोजशरासनसी बनि भौंहैं । कमनीय कलेवर कोमल श्यामल गौर किशोर जटाशिरसोहैं ॥ तुलसी कटितूण धरे धनुबाण अचानक दृष्टि परी तिरछौ हैं । क्यहि भांति कहौं सजनी त्वहिंसों मृदु मूरति द्वै निबसी मनमोहैं २५ ॥

अब ग्रामवधू अपनी व्यवस्था कहती हैं मुख अरु नेत्र सुन्दर कमल से भृकुटी टेढ़ी कैसी शोभायमान बनी यथा मनोज को शरासन कहे धनुष कमनीय कहे सुन्दर कोमल श्यामल गौर कलेवर कहे देह दोऊ राजकुमार किशोर अवस्था शीशपै जटा के मुकुट सोहत कटि में तरकस कसे कर कमलन में सुन्दर धनुषबाण धारण किहे तिनको लोकलाज ते सम्मुख देखि न सकीं ताते तिरछी दृष्टि मेरी अचानक उनपै परि गई ता अवसर ते जो मेरी दशा भई सो

हे सखी ! तोसों कौन भांति कहौं कामासक्ती कहत नहीं बा ता अवसर ते दोऊ राजकुमारन की कोमलमूर्ति सो मेरे मन निवास किहे हैं यामें रमणीकता गुण है कामासक्ती ते द्वै न सू कहे आठ सगण अन्तगुरु पचीस वर्ण माधवी सवैया है २५

प्रेमसों पीछे तिरीछे प्रियाहि चितै चितुदै चले चितचोरै । श्यामशरीर पसेऊ लसै हुलसै तुलसी ल सोमन मोरै ॥ लोचन लोल चलैं भृकुटी कलकाल मानहुसों तृण तोरै । राजत राम कुरंग के संग निषं कसे धनुसों शर जोरै २६ ॥

यह चित्रकूट को चरित्र है आश्रम में श्रीजानकीजी विराजमा रहीं श्रीरघुनाथजी मृगया को चले अति प्रेमते पीछे घूमि तिर दृष्टिते प्रिया श्रीजानकीजी को चितै मोहित ह्वै अपनो चित्त दै चले सोई तिरछी कटाक्ष देखि प्रियाजी मोहित भई ताते प्रि को चित्त चोराइ लियो यह परस्पर उपकार तें अन्योन्यालङ्कार मार्ग गमन श्रमकरि पसीना निकसि श्याम तन पै शोभा दैरहा ताको देखि तुलसी को मन हुलसत कहे आनन्द उमगत है मृग को ताकत में नेत्र लोल कहे चञ्चल हैं ताते भृकुटी चलायमा कैसी सोहत जो काम धनुष की शोभा तृण सम तोरत हैं कटि निषंग कसे कर कमलन सों धनुष बाण जोरे मृग के संग श्रीरघु नाथजी विराजमान हैं २६ ॥

शर चारिक चारु बनाइ कसे कटि पाणि शरासन शायकलै । बन खेलत राम फिरैं मृगया तुलसी छविसे बरणै किमिकै ॥ अवलोकि अलौकिक रूप मृगी मृग

चौंकि चकै चितवै चितदै । न डगै न भगै जिय जानि शिलीमुख पंचधरे रतिनायक है २७ ॥

चारि बाण सुन्दर बनाइकै अर्थात् फूलनसों वेष्टित करि कटि में कसे अरु फूलन सों वेष्टित करि धनुष में एक बाण जोरि कर-कमलन में लिये श्रीरघुनाथजी मृगया खेलत वन में फिरत ता समय की छवि तुलसी कौन विधिसों वर्णन करै अलौकिक जैसा लोक में नहीं ऐसा अद्भुत रूप औचक देखि मृग मृगी चौंकत पुनः चित्त लगाय जब चितवत तब मन मोहित ह्वै चकि जात ताते न डोलै न भागै फूल वेष्टित धनुष पंचबाण धरे ते जाने कि कामदेव है यह जानि निर्भय ह्वै मोहि गये २७ ॥

विंध्यके वासी उदासी तपोव्रतधारी महाबिन नारि दुखारे । गौतमतीय तरी तुलसी सो कथा सुनि भे मुनि-वृन्द सुखारे ॥ ह्वै हैं शिला सब चंद्रमुखी परसे पदमंजु-लकंज तिहारे । कीन्ही भली रघुनायकजी करुणाकरि काननको पगु धारे २८ ॥

इति श्रीकवितावलीरामायणे अयोध्याकाण्डःसमाप्तः २

कविकी उक्ति हास्ययुत पदरज को माहात्म्य वर्णन है जो विन्ध्याचलपै वास करि उदासी कहे शत्रु मित्र भावरहित तपस्या करत में महाव्रतधारी कहे ब्रह्मचर्य आश्रम में रहे सो व्रत पूर्ण भये पर जब गृहस्थाश्रम को समय आयो तब स्त्री चाहिये ताते विना स्त्री दुखारी रहे गोसाईंजी कहत कि गौतम तिया अहल्या तरी सो कथा सुनि वोई मुनिवृन्द सुखी भये जे गृहस्थाश्रम हेतु विना नारि दुःखित रहे ते कहत कि हे महाराज! आपुके सुन्दर पदकमल स्पर्श

भयेते यावत् शिला हैं ते सब चन्द्रमुखी दिव्य स्त्री ह्वै जायँगी हमारा गृहस्थाश्रम विना परिश्रम ही सिद्ध होइगा याते श्रीरघुनाथजी आपु भली करी जो हमपै करुणा करिकै कानन कहे वन में आये या में चित्रकूट को वास वर्णन करे वा जबते चित्रकूट को आये तबको वर्णन है २८ ॥

सवैया ।

शिखरेद्भुतजूटकलापजटाक्षसरोजशुभास्मितवक्त्रयुतौ ।
कुसुमाद्भुतभूषणविभ्रतभातनश्यामसिताताडिताजिमुतौ ॥
करमार्गनकार्मुकतूणकटिं जनपालक घालकदुष्टनुतौ ।
नितमामकमानससन्निहितोमिथिलाधिपजावधनाथसुतौ २८

इतिश्रीरसिकलताश्रितकल्पद्रुमसियवल्लभपदशरणागतबैजनाथकृता कवितावलीरत्नदीपिकाटीकायामयोध्याकाण्डः समाप्तः २ ॥

अथ आरण्यकाण्ड ।

पंचवटी वर पर्णकुटी तर बैठे हैं राम सुभाय सुहाये सोह प्रिया प्रिय बंधु लसै तुलसी सब अंग घने छबि छाये ॥ देखि मृगा मृगनैनी कहै प्रिय बैनते प्रीतम के मन भाये । हेमकुरंगके संग शरासन शायक लै रघुनायक धाये १ ॥

इति श्रीकवितावलीरामायणे आरण्यकाण्डः समाप्तः ३

अमलकमलनेत्रौ पूर्णचन्द्राभवक्त्रौ तडितजलदगात्रौ नीलपीताम्भवासौ ॥ अमितगुणसमुद्रौ सज्जनानन्ददात्रौ नामितवयकिशोरौ

जानकीरामचन्द्रौ १ सब गुण जटी जो पंचवटी तामें सुन्दर जो पत्रन की कुटी ताके तट सहज ही में जो शोभायमान ऐसे जो श्रीरघुनाथजी ते आनन्द सों बैठे हैं प्रिया श्रीजानकीजी प्रिय बन्धु लक्ष्मणजी तिनके रूप कैसे लसत कहे सजत हैं जिनके अंगन में समूह छवि छाइ रही है ऐसी श्रीजानकी जी अरु लक्ष्मणजी श्रीरघुनाथजी के साथ सोहत हैं ताही समय कंचन को मृग आयो ताको देखि मृगनयनी श्रीजानकीजी बोलीं कि हे प्राणनाथ ! या मृग को चर्म बहुत विचित्र है याको वध करि लावो ऐसे बैन प्रियाजी के कहे वा मधुर वा देवकार्य को प्रारंभ ऐसे प्रियवचन सुनि प्रीतम जो श्रीरघुनाथजी तिनके मन में भाये ताते करमें धनुष बाण लैकै श्रीरघुनाथजी कंचन मृग के साथ धाये १ ॥

सवैया ।

शिखरेद्भुतजूटजटापटलीछविदीप्तप्रभाविचपुष्पधरं ।
कटिविभ्रततूणनिचोलत्वचाकरकंजशरासनशोभशरं ॥
मृगहेमददर्शत पञ्चवटी मृगयार्थवने रुचिरं विचिरं ।
ममानसमानससन्निहितोकलिहंससदाकुलहंसवरम् ॥

इति श्रीरसिकलताश्रितकल्पद्रुमसियवल्लभपदशरणागतबैजनाथविरचितायां कवितावलीरत्नदीपिकाटीकायां आरण्यकाण्डः समाप्तः ३ ॥

अथ किष्किन्धाकाण्ड ।

जब अंगदादिनकी मति गति मंद भई पवन के पूत को न कूदिबे को पलुगो । साहसी ह्वै शैल पर सहसा सकेलि आइ चितवत चहूँ ओर औरन को

कलुगो ॥ तुलसी रसातल को निकासि सलिल आ
कोल कलमल्यो अहि कमठ को बलुगो । चारिहू च
के चपेट चापे चिपिटिगो उचकि उचकि चारि अं
अचलुगो १ ॥

इति श्रीकवितावलीरामायणेकिष्किन्धाकाण्डःसमा

वन्देऽहं जानकीरामौ भक्तानामभयप्रदौ ॥ मंगलानन्दक शरणागतवत्सलौ १ जब अंगद आदि कपिन की मति गति मन्द भाव बुद्धि बल दोऊ करि थकित भये तब जामवन्त के प्र पवनपूत जो श्रीहनुमान्‌जी तिनको फांदि समुद्रपार जाबे को प माल विलम्ब नहीं लगी साहसी कहे महाबली है भाव हनुमा को अपना बल भूला रहत जब जाम्बवान्‌जी सुधि देवाये ताते है कै सिन्धु तट के उच्च पर्वत पर सहसा कहे शीघ्र ही सहित केलि ऐसी वेग ताको हाहाकार भयो जाकी भय करिकै चारहू दि देखनहारन को कल कहे सुख सबको जात रह्यो गोसाईंजी क कि कूदिबे को हचका लागे ते पर्वत भूमि में दब्यो ताते रसा को जल ऊपर निकसि आयो अरु अंग दबिगये ते व्याकुल है वा कलमल्यो कहे सब अंग चालिभये अरु शेष कच्छप को बल जात श्रीहनुमान्‌जी के चारहू पाँवन को चपेटा लागे ते भूमि रसा तक दबिकै चिपटि गई पर्वत जो अचल रहा सो उचकि उच अर्थात् भूमि दलकि गई ताते चारि अंगुल पीछे को चलिगयो ।

सवैया ।

नीलकलेवरनीरदभाक्ष सरोजशुभाननअमृतधाम ।
चण्डशरासनशायकतीव्रकरे कटितूणसुविभ्रतवाम ॥

शोकभवार्णवतारकसौ अघतूलविध्वंसनपावकनाम ।
नाथदयालयपालयदीनअहंशरणंशरणंतवराम १ ॥

इति श्रीसियवल्लभपदशरणागतबैजनाथविरचिते कवितावलीरामायणे रत्नदीपिकाटीकायां किष्किन्धाकाण्डः समाप्तः ४ ॥

अथ सुन्दरकाण्ड ।

वासव वरुण विधिवनते सोहावनो दशानन को कानन वसन्त को सिंगारसो । समय पुराने पात परत डरत वात पालत लालत रतिमारको विहारसो ॥ देखे वर वापिका तड़ाग बागको बनाव रागवश भो विरागी पवनकुमारसो । सीय की दशा विलोकि विटप अशोकतर तलसी विलोक्यो सो तिलोकशोकसारसो १ ॥

नीलारविन्दात्मसरोरुहाक्षं वामाङ्गसीतास्थितहाटकाभम् ॥ अम्भोजपाणौ शरचारुचापं राजाधिराजं च नमामि रामम् १ देवलोक में इन्द्र को वन श्रेष्ठ पाताल में वरुण को ब्रह्मलोक में ब्रह्मा को तिनहूं ते श्रेष्ठ शोभायमान दशानन को कानन अशोकवाटिका है अरु जो सब वनन को शृंगार वसन्त ताहू को शृंगार अशोकवाटिका है भाव वसन्त में प्रथम सबन के पत्ता पवन गिराय उजारि देत या वन में समय आये पर पुराने पत्ता गिरावत पवन डरत जब नवीन पल्लव है आवत ता पीछे पुराने पत्ता आपते गिरत याते वसन्त में उजार नहीं होत ताते वसंत को शृंगार कहे पालत कहे सींचत औरत लालत दुलारत भाव काहू को धक्का नहीं लागत ताते ऐसा शो-

भायमान लागत यथा रति काम के विहार को वाटिका सम ज
देखे कामोद्दीपन होत वर वापिका चित्र विचित्र बावली तड़ा
मणिन सों घाट निर्मल जल रंग रंग कमल प्रफुल्लित जलप
क्रीड़ा करत ऐसो मनोहर तड़ाग बाग के मध्य में चारहू ओ
चमन में रंग रंग के फूल फल बेलि वितानादि बाग की शो
देखि पवनतनय ऐसे विरागी सोऊ रागवश भयो परन्तु अशो
वृक्ष तर श्रीजानकीजी को देखे दुर्बल तन वसन मन मलिन सज
नेत्र नमितखल सक्रोध दुर्वचनाग्नि सों दग्ध ऐसी दशा देखि
अस जाने कि यह वन तीनिहूं लोक के शोक को वासस्थान है १

माली मेघमाल वनपाल विकराल भट नीके स
काल सींचैं सुधासार नीरको। मेघनाद ते दुलारो प्राण
पियारो बाग अति अनुराग जिय यातुधान धीरको
तुलसी सो जानि सुनि सीय को दरश पाइ बैठो व
टिका बजाय बलरघुवीरको। विद्यमान देखत दशान
को कानन सो तहश नहश कियो साहसी समीरको

जौने वन में मेघन की माला तेई माली हैं जे सुधासार
अमीमय मधुर शीतल निर्मल मिष्टजल सों नीकी भांति जहां जै
चाही तैसो सदा सींचत हैं जहां विशेष कराल योधा ते स
रक्षा करत हैं यातुधान धीर जो रावण ताको अत्यन्त अनुराग
जा बाग पर जो मेघनाद ते दुलारो प्राणन ते अधिक प्यारो
गोसाईंजी कहत कि श्रीजानकीजी को दरश पाइ तिनते ह
सुनि रावण की प्यारी बाग जानि श्रीरघुवीर को बल ब
हांक दैकै वाटिका में पैठि साहसी बली पवनकुमार अशोकवाटि

को तहश नहश करि दिये भाव उजार कर दिये २ ॥

बसन बटोरि बोरि बोरि तेल तमीचर खोरि खोरि
धाइ आइ बाँधत लँगूर हैं। तैसो कपि कौतुकी डरात
ढीलो गात कैकै लात के अघात सहै जीमें कहै कूरहैं॥
बाल किलकारी कैकै तारी देदै गारी देत पाछे लागे
बाजत निशान ढोल तूर हैं। बालधी बढ़न लागि
ठौर ठौर दीन्हीं आगि बिंध की दवारि कैधौं कोटि
शत सूर हैं ३ ॥

मेघनाद करि बन्धन भये पर पूंछ फूंकिबे को आज्ञा रावण दियो
सो सुनि खोरिकहे गली गली ते राक्षस दौरि आये वसन बटोरि
तेल में बोरि लंगूर में बांधन लगे जैसे निशाचर प्रबल परे तैसे
कपि कौतुकी कहे तमाशा करनेवाले जे अनेक कर्तब करनेवाले
हैं तथा हनुमान्जी वृथा डर मानि तन ढील करि कांपत हैं अरु
लातन को प्रहार सहत जामें निशाचर जानैं कि कपि कूर कादर
है व हनुमान्जी अपने मन में जानत कि ये सब निशाचर कूर हैं
भाव पकरिकै मारना कादर को काम है यह कौतुक देखि बालक
किलकारी मारि हँसिकै तारी बजावत पीछे पीछे नगारा तुरुही
ढोल बाजत हैं हनुमान्जी की प्रेरणाते बालधी जो पूंछ सो बढ़न
लागी ताते लंका में ठौर ठौर आगि लगाइ दीन्हो ताकी उपमा
देत किधौं विन्ध्याचल पर दावानल लगी है किधौं सौ करोरि
सूर्य हैं ३ ॥

लाइ लाइ आगि भागे बाल जात जहाँ तहाँ लघु
ह्वै निबुकि गिरि मेरुते विशालभो। कौतुकी कपीश

कूदि कनक कँगूरा चढ़्यो रावण भवन चढ़ि ठा
त्यहि कालभो ॥ तुलसी विराज्यो व्योम बाल
पसारि भारी देखे हहरात भट काल सों करालभो
तेज को निधान मानों कोटिक कृशानु भानु न
विकराल मुख तैसो रिस लालभो ४ ॥

आगि लगाइ सब मन्दिर ज्वलित करि दिये ताको दे बालकन के वृन्द डराइ भागे तब हनुमान्जी लघुरूप है नि पीछे भारीरूप सुमेरुगिरि सों भयो कौतुकी हनुमान्जी कूदि क कंगूरा उच्च पर चढ़्यो तापरते कूदि रावण के भवनपर चढ़ि भयो ताकाल को रूप वर्णन करत बालधी जो पूंछ भारी आक में पसारे विशेष कराल नख तैसो रिस करिकै मुख लाल है ग ताते कालहूते कराल विराजमान भयो जाके देखेते निशाचर हहरात भाव सभीत भये हनुमान्जी को प्रताप सो मानों को रूप अग्नि है वा अनेकरूप सूर्य है अथवा कोटिन ज्वाला अ लंका में मानों अनेकरूप सूर्य है ४ ॥

बालधी विशाल विकराल ज्वालजाल मानौं लं
लीलिबेको काल रसना पसारी है। कैधौं व्योमवीथि
भरे हैं भूरि धूमकेतु वीररस वीर तरवारिसी उघारी है
तुलसी सुरेशचाप कैधौं दामिनी कलाप कैधौं च
मेरुते कृशानुसरि भारी है। देखें यातुधान यातुधा
अकुलानी कहैं कानन उजारेउ अब नगर प्रजारी है

बालधी जो पूंछ विशाल है तामें विशेष कराल जो अग्नि

समूह ज्वाला है ताकी उत्प्रेक्षा मानों लंका को लीलिबे हेतु काल ने जिह्वा पसारी है पुनः संदेह कैधौं पूंछ व्योमवीथिका कहे शिशुमारचक्र में अग्निज्वाल किधौं समूह धूमकेतु भरे हैं धूमकेतु तारा जहां एक उदय होत ता देश में दुर्भिक्ष महामारी को करने-वाला है ॥ तथा मयूरचित्रे ॥ कपालाख्यो धूम्रशिखो दग्धः सर्वजला-पहः ॥ प्राग्व्योमार्द्धविहारी स्यात्तथा क्षुन्मृत्युकारकः ॥ इहां समूह भरे हैं ते लंका को नाश करैंगे अथवा सज्वालित पूंछ सो वीररस जो वीर है ताकी उघारी तरवार सी है वीररस यथा सबल शत्रु समर विभाव वदन लाल अंग प्रफुल्लित अनुभाव है गर्व उग्रता असूया संचारी है लंक विध्वंस की उत्साह अस्थायी यह वीररस प्रसिद्ध रूपधारी महावीर हैं सज्वालित पुच्छ कृपाण है गोसाईंजी कहत कि पुच्छ किधौं इन्द्र को धनुष उदय भयो किधौं समूह दामिनी है किधौं हनुमान् रूप सुमेरु ते अग्निरूप सरिता बही है यथा ॥ वर्षा घोर निशाचररारी । सुरकुलशालि सुमङ्गलकारी ॥ ताते इन्द्र धनु दामिनी सरिता कहि सोई घोर वर्षा को सूक्ष्मरूप कहे इत्यादि देखि राक्षस राक्षसी अकुलानीं कहत हैं कि प्रथम वन उजारेउ अब नगर भस्म करैगो इहां हनुमान्जी में वीररस कहे ताको प्रतिकूल निशाचरन में भयानक रस कहे करालरूप हनुमान्जी को देखिबो विभाव है कम्प रोमाञ्च प्रस्वेद अनुभाव मोह मूर्च्छा दीनता संचारी भय अस्थायी याते निशाचरन में भयानक रस है ५ ॥

जहाँ तहाँ बुबुक बिलोकि बुबकारी देत जरत
निकेत धाओ धाओ लागि आगिरे। कहाँ तात मात
भ्रात भगिनी भामिनी भाभी ढोटा छोटे छोहरा अभागे
भोरे भागिरे ॥ हाथी छोरो घोरा छोरो महिष वृषभ छोरो

छेरी छोरो सोवै सो जगावो जागि जागिरे । तुल
विलोकि अकुलानी यातुधानी कहै बारबार कह्यो
कपि से न लागिरे ६ ॥

जहां तहां अग्नि के बुबकारी देखि बुबकार दैकै रोवत
कि धाओ धाओ रे आगि लागी घर जरा जात है तात कहां
कहां भाई कहां स्त्री कहां भाउज कहां ढोटा कहां छोट
अरे अभागे बौरहौ भागौ भागौ हाथी छोरौ घोड़ा छोरौ
वृषभ छेरी छोरौ सोवनहार को जगावौ जागौ जागौरे इत्यादि सम
शब्द अनेक सुनाते हैं गोसाईंजी कहत कि यातुधानी मन्दो
आदि रानी अकुलानी कहत कि मैं बार बार समुझाइ कह्यो
हे प्रिय दशकन्ध मतिअन्ध ! यहि वानर से न लागो ६ ॥

देखि ज्वालाजाल हाहाकार दशकन्ध सुनि क
धरो धरो धाये वीर बलवान हैं । लिये शूल सेल प
परिघ प्रचण्ड दण्ड भाजन सनीर धीर धरे धनुबान है
तुलसी समिध सौज लंक यज्ञकुण्ड लखि यातुध
पूगीफल यव तिल धान हैं । स्रुवासो लँगूल बल
प्रतिकूलहवि स्वाहा महा हाँकि हाँकि हुने हनुमान हैं

अग्निज्वालन के जाल देखि हाहाकार सुनि रावण कह्यो
कपि को धरो पकरो यह सुनि बलवान जे वीर ते धावते भये
त्रिशूल कोऊ सांग फांसी परिघ अपर अस्त्र प्रचण्ड दण्ड
युक्त लाठी जलसहित घट लिहे धैर्यवान वीर धनुबाण
इत्यादि सब सौज जो सामग्री सो सब समिध कहे यज्ञ की ल
है लंक यज्ञकुण्ड सो बरत में परे अधिक प्रचण्ड परो तहां शा

सम देखि राक्षस सामान्य तेई सुपारी तिल यव धान अर्थात् चाउर
अरु बलमूल प्रतिमूल कहे बली जे शत्रु हैं ते हवि कहे जाउरि हैं
जाउरि जरिबे में देर तथा बली मरिबे में देर जाउरि स्रुवा में लसि-
बेते गिरत देर तथा बली को बहावत में देर लंगूर स्रुवा है महा हांक
युद्ध की ललकार सोई स्वाहा करि करि श्रीहनुमानजी हुने आहुति
दिये भाव जे सामुहे पाये तिनको अग्नि में डारे ७ ॥

गाज्यो कपि गाज ज्यों विराज्यो ज्वालाजालयुत
भाज्यो वीर धीर अकुलाइ उठ्यो रावनो । धावो धावो
धरो सुनि धाये यातुधान धारि वारि धारा उलचै जलद
जौन सावनो ॥ लपट झपट झहराने हहराने बात भहराने
भट परेउ प्रबल परावनो । ढकनि ढकेलि पेलि सचिव
चले लै ठेलि नाथ न चलैगो बल अनल भयावनो ८ ॥

अग्निज्वालन के जालसहित भयानकरूप हनुमान्‌जी गाज्यो
कहे वज्रपात सम तड़पे सो सुनि करालरूप देखि धैर्यवान् जे वीर
हे ते सब भागे ताते रावण हूं अकुलाइ उठो पुनः कहत कि धावो धावो
वीरो कपि को धरो यह सुनि यातुधान जे राक्षस धारि सेना धाये ते
जल की धारा उलचत यथा सावन में मेघ वर्षत अग्नि की लपटन की
जो झपटैं ताके झहराने शब्द अरु बात कहे बयारि के हहराने ते
भय मानि निशाचर वीर भहराने बेसुधि गिरत भागे प्रबल कहे
कठिन परावन कहे सडर भागि निर्भय स्थान लुकि रहना जो
निशाचर भागत सो पुनः लौटि नहीं आवत यह जानि सचिव
सब धकनसों ढकेलि ठेलि पेलि बरबस रावण को टारि ले चले
कि नाथ अग्नि महाभयङ्कर है यामें बल न चलैगा ८ ॥

बड़ो विकराल वेष देखि सुनि सिंहनाद उठ्यो मे
नाद सविषाद कहै रावनो । वेग जीतो मारुत प्रता
मारतण्ड कोटि कालऊ करालता बड़ाईजीतो बावनो
तुलसी सयाने यातुधाने पछिताने कहैं जाको ऐसो दू
सोतौ साहेब अबै आवनो । काहे की कुशल रोषे रा
वामदेवहू की विषमबलीसो बादि वैर को बढ़ावनो ९

वेष कहे तन की बनक अर्थात् लालमुख पिंगनेत्र कराल भृकु दशन रसना नख सज्वलित लंगूर ऐसो महाभयंकर वेष हनुमा जी को देखि सिंहसम घोर शब्द सुनि धैर्यवान् मेघनाद सो अकुलाइ उठो अरु उर में विषाद सहित रावण कहत कि वेग करि हनुमान् ने पवन को जीत्यो भाव काहू के पकरे नहीं थँ अरु प्रताप करि कोटिन सूर्यन को जीत्यो भाव सन्मुख होत ही भ होत अरु करालता करि काल को जीते भाव जाको देखे धैर्यवा सभीत होत बड़ाई करि बावन को जीते भाव प्रथम लघुरूप पु भारीरूप भयो गोसाईंजी कहत कि जे चतुर राक्षस रहे ते विच करि पछिताइकै कहत कि जाको हनुमान् ऐसो दूत सो तो सा अबहीं आवनहार है भाव विरोध की जर श्रीजानकीजी तौ अ इहां ही हैं ताते श्रीरघुनाथजी आये पर जब क्रोध करेंगे तब वा देव जो शिवजी तिनकी कीन्हीं जो कुशल सो काहे की कुशल भाव कुशल नहीं है निशाचर सब नाश होइँगे ताते महाबलीते बढ़ावनो बादि है भाव वाको रक्षक कोऊ नहीं है ९ ॥

पानी पानी पानी सब रानी अकुलानी कहैं जा
है परानी गति जानी जग चालि है । वसन बिस

मणिभूषण सँभारत न आनन सुखाने कहैं क्योंहू कोउ
पालिहै ॥ तुलसी मदोवै मींजि हाथ धुनि माथ कहै
काहू कान कियो न मैं कह्यो केतौ कालिहै । बापुरो
बिभीषण पुकारि बार बार कह्यो वानर बड़ो बलाय
घने घर घालि है १० ॥

कविकी उक्ति है जिनकी गति सबकी जानी है कि गजसम मन्दचाल चलती रही तेई भयातुर अकुलानी विभ्रम है पानी पानी पानी कहती अनेकन रानी भागी जाती हैं देह में वसन की सुधि नहीं कि कौन छूटा कौन पहिरे हैं मणि भूषणन को सँभार नहीं छूटि टूटि गिरत जात मुख सूखे अधीर है कहतीं कि काहूभांति कोऊ हमारी रक्षा करिहै हाथ मींजि माथ धुनि विलाप करि मन्दोदरी कहति कि मैं कालिह केतौ समुझाय कह्यों ताको काहू न सुन्यो कालिह कहिबे को भाव अगहन शुक्ल त्रयोदशीको अशोकवाटिका में अक्षय कुमार जूझो चतुर्दशी को लङ्का दाह याते कालिह कहे मन्दोदरी कहत कि बापुर विभीषण बार बार पुकारि कहत रह्यो कि यहु बड़ी एक बलाय वानर है बहुतेरे घर घालि है भाव बहुतेन को नाश करैगो इहां अग्नि करालता विभाव हाथ मींजिबो माथ धुनिबो अनुभाव मुख सूखो त्रासादि संचारी भयस्थायी याते भयानक रस है १०॥

कानन उजार्‍यो तौ उजार्‍यो न बिगार्‍यो कछु वानर
बिचारो बाँधि आयो हठि हारसों । निपट निडर देखि
काहू न लख्यो विशेखि दीन्हो न छुड़ाइ कहि कुल के
कुठारसों ॥ छोटे औ बड़ेरे मेरे पूतऊ अनेरे सब सांपनि

सों खेलैं मेलैं गरे छुराधारसों । तुलसी मदोवै रोइ रो
बिगोवै आपु बारबार कह्यो मैं पुकारि दाढ़ीजारसों ११

मन्दोदरी कहत कि कानन उजार्‌यो तौ उजार्‌यो यामें
बिगार्‌यो नहीं काहेते फल खाइबो वृक्ष तोरिबो हार को
वानर को स्वभाव ही है तापर बिचारे वानरको हारसों मेघ
हठी हठि करि बांधि ग्राम को लायो ताते अनेक राक्षस वध
नगर भस्म भयो यह अपने हाथ कराइ लियो काहेते निपट नि
कपि को देखि सब मति अन्ध ह्वै गये काहूने विशेषिकै विचा
देख्यो कि जो निःशंक है तौ कछु कारण करैगो अस कहिकै कु
कुठार रावण को समुझाइ काहूने कपिको छोड़ाइ न दियो ता
बोध मन्दोदरी आपही करत कि समुझावै कौन पति तौ अनी
रत हैनै है जे मेरे छोटे बड़े पुत्र हैं तेऊ अनेरे कहे अन्यायी हैं
सांपन सों खेलत अरु छूराकी धार गरे में लगावत इहां हनुम
जी सांप हैं पकरिबो खेलब है अग्नि छूराधार है पूंछि में फूंक
गरे में लगावब है गोसाईंजी कहत कि मन्दोदरी रोइ रोइ क
कि दाढ़जिार रावण सों बारबार मैं कह्यों कि त्वैं अपने हाथ अ
को बिगोवै नाश करैगो ११ ॥

रानी अकुलानी सब डाढ़त परानी जाहि सकैं
विलोकि वेष केशरीकुमारको । मींजिमींजि हाथ धु
माथ दशमाथतिय तुलसी तिलो न भयो बाहिर अग
को ॥ सब असबाब डाढ़ो मैं न काढ़ो तैं न काढ़ो जिय
परी सँभारै सहन भँडारको । खीझति मदोवै सविषा
देखिमेघनादबयो लुनियत सबयाहीदाढ़ीजारको १

एकतौ अग्नि करि सब जरो जात दूसरे हनुमानजी को कराल
वेष देखि नहीं सकत ताते सब रानी अकुलानी भागी जात अरु
हाथ मींजि माथ पीटि रावण की रानी सब कहत कि मणि भूषणादि
सब असबाब जरि गयो तिलौ भरि घरते बाहर न भयो कैसे बाहर
होइ न मैं काढ़्यों न त्वैं काढ़े अपर कहत कि सबको अपने जीव
बचाइबे की परी सहन भंडार कौन सँभारै मेघनादको देखि मन्दो-
दरी सहित विषाद खीझत कि याही दाढ़ीजार को सब बयो है
जो लुनियत है भाव जो मेघनाद कपि को पकरि न लावत तौ यह
दशा कैसे होती १२ ॥

रावण की रानी बिलखानी कहै यातुधानी हा हा
कोउ कहै बीसबाहु दशमाथसों । काहे मेघनाद काहे
काहेरे महोदर तू धीरज न देत लाइलेत क्यों न हाथ
सों ॥ काहे अतिकाय काहे काहेरे अकंपन अभागे
तिय त्यागे भोंड़े भागेजात साथसों । तुलसी बढ़ाय
बाद शालते विशाल बाहैं याही बल बालिशो विरोध
रघुनाथसों १३ ॥

यातुधानी राक्षसी जे रावण की रानी ते बिलखानी कहती हैं
कि हाइ हाइ हमारी यह दशा बीसबाहु दश माथवाले सों कोऊ
कहे जाय भाव भुज शीश को बड़ा गुमान रहा सो कछु काम न
आयो काहे मेघनाद काहेरे महोदर तुम दोऊ बड़े मानी रहौ ते
ऐसे अधीर भागे जात कि हमको धीरज नहीं देत अरु हाथ नहीं
लगाइ लेत जो सहारे ते हमहूं भागि चलैं काहेरे अभागे अति-
काय अकम्पन तुमको भुजबल को बड़ा गुमान रहा सो सब

भूलिगो हम सब नारिन को साथसों त्यागे बालिशौ मूर्खो भ
जातहौ तुम सब शाल वृक्ष सों बड़ी बड़ी बाहु वृथा बढ़ाई है
कादर मूर्खो ! याही बलते श्रीरघुनाथजी सों वैर बढ़ायो है
काहि श्रीरघुनाथजी के प्रताप को दिखाय सबको मान
करत हैं १३ ॥

हाट बाट कोट ओट अट्टनि अगार पौरि खो
खोरि दौरि दौरि दीन्ही अति आगिहै । आरत
कारत सँभारत न कोऊ काहू व्याकुल जहां सो त
लोग चले भागिहै ॥ बालधी फिरावै बार बार झह
झरै बूँदियासी लंक पघिलाइ पाग पागिहै । तुल
विलोकि अकुलानी यातुधानी कहैं चित्रहूके कपि
निशाचर न लागिहै १४ ॥

बाजार की गलिन में किला की ओट अटारिन में घर घर
द्वार गली गली दौरि हनुमान्‌जी ने प्रचण्ड आगि लगाइ
ताको देखि राक्षस राक्षसी अति दुःखित पुकारत कोऊ काहू
सँभारत नहीं सब व्याकुल जो जहां रहैं सो तहांई से सब ल
भागि चले ता समय हनुमान्‌जी बालधी जो पूंछ है ताको चा
ओर फिराइ बार २ झहरावैं कहे झिटकै हैं ताते बुँदियां
चिनगी झरै हैं सोने को लंक पाग सों पिघलाइ बुँदियां
पागत हैं गोसाईंजी कहत कि अकुलानी सब राक्षसी कहत
वर्तमान कपिको को कहै कदाचित् चित्रसारी में भी वानर
प्रतिमा देखि परैगी ताहू सों निशाचर अब न लागैंगे य
हनुमान्‌जी को प्रताप सूचित होत १४ ॥

लागि लागि आगि भागि भागि चले जहां तहां
धीय को न माय बाप पूत न सँभारहीं । छूटे बार बसन
उघारे धूम धुंध अंध कहैं बारे बूढ़े बारि बारि बार
बारहीं ॥ हय हिहिनात भागे जात घहरात गज भारी
भीर ठेलि पेलि रौंदि खौंदि डारहीं । नाम लै चिलात
बिललात अकुलात अति तात तात तौसियत झौंसि-
यत झारहीं १५ ॥

आगि लागि आगि लागि ऐसा कहत जहां रहैं तहां ते सब
भागि चले ऐसे विह्वल ह्वै भागे जो कन्या को माता पुत्र को
पिता नहीं सँभारत मात्र कन्यापै माता को छोह पुत्रपै पिता को
छोह ज्यादा रहत ऐसे बेसुधि भये कि युवतिन के बार वसन
छूटिपरे ते तन उघारे भागीं धुआं की धुंधकार में सब अन्धे से ह्वै
गये बली सब भागि गये बूढ़े बारे पीछे बार बार पानी पानी
करत हैं कहूं घोड़े तुराय हिहिनात भागे जात कहूं हाथी चिक्कारत
भागे ते भारी भीर में परे ते ठेलि कहे ढकेलिकै पेलि गये जे
पायँ तर परे ते रौंदिगये जे धक्का में गिरे ते खौंदि कहे घायल
ह्वै गये एक एकन को नाम लैलै चिल्लात बिललात कहे भागे भागे
फिरत अति अकुलाने ताते तात तात हे तात ! पुकारि कहत कि
आंच में तौसित कहे ताव खाइयत अरु लपक की झार सों झौं-
सियत झरसे जाइत है १५ ॥

लपट कराल ज्वालजालमाल दुहुँ दिशि धूम
अकुलाने पहिचाने कौन काहिरे । पानी को ललात

बिललात जरे गात जात परे पाइ माल जात भ्रा
तू निबाहिरे ॥ प्रिया तू पराहि नाथ नाथ तू परा
बाप बाप तू पराहि पूत पूत तू पराहिरे । तुलसी
लोकि लोक व्याकुल बिहाल कहैं लेहि दशशीश अ
बीस चख चाहिरे १६ ॥

सधूम अग्नि ते बृहत् निकरत ते लपटैं कराल हैं नि अग्नि ते निसरत ते ज्वाल तिनके जाल कहे चहुँधाते धूमि में मिलत तिनकी माल कहे समूह छाइ रही अरु दशों दिश धूम छाइ रही तामें सब ऐसा अकुलाने कि कोऊ काहू को ची नहीं प्यासन के मारे पानी को लल्लात फिरत अरु आंच में ग जरे जात ताते बिललात कहे भागे भागे फिरत कोऊ पांयन परे पुकारत कि दबेजाइत भाई तुम उबारौ पति नारिन से क कि हे प्रिये ! तू भागै नारी पति से कहतीं कि नाथ तुम भा पुत्र पिता ते कहत कि बाप तुम भागौ पिता पुत्रते कहत कि पुत्र ! तुम भागौ इत्यादि बहुत शब्द सुनात ऐसी दशा देखि स लोग व्याकुल बिहाल कहत कि अपने कर्तव्यता को फल द शीश बीसो आंखिन भरि देखिलेहि १६ ॥

वीथिका बजार प्रति अटन अगार प्रति पँव
पगार प्रति बानर बिलोकिये । अर्द्ध उर्द्ध बान
बिदिशि दिशि बानरहै मानों रह्यो अहै भरि बानर ति
लोकिये ॥ मूंदे आंखि हीय में उघारे आंखि आ
ठाढ़ो धाइ जाइ जहां तहां और कोऊ कोकिये । ले

अब लेहु तब कोऊ न सिखावो मानों सोई सतराइ
जाइ जाहि जाहि रोकिये १७ ॥

गलिन में बजारन में अँटारिन में घरन में देवारनपै इत्यादि नगर में सर्वत्र वानरै देखात पाताल आकाश ईशानादि विदिशा पूर्वादि दिशा सर्वत्र कैसे देखात मानों तीनिहूं लोक में वानरै भरि रहे हैं जे भयकरि आंखी मूंदि लेत तब हृदय में वानर देखात आँखि खोले आगे वानर ठाढ़ो धाइ जाइ जहां अर्थात् जहां अभय विचारि भागि जात कैलास ब्रह्मलोकादि तहांऊं वानरै देखात और को किये भाव वानरन को रोंकि और कोऊ वस्तु जाने कि ये ऐसा सामर्थ्य को है जो वानरन की भय मिटाय राक्षसन की रक्षा करै अर्थात् रघुनाथजी के विमुख को रक्षक कोऊ नहीं इत्यादि हाल देखि तब कोऊ कोऊ कहत कि तब हमारो सिखावन न मान्यो अब अपनी कर्तव्यता को फल लेउ लेउ भागो न तबतौ जाको रोकिये सोई सतराइ रिसाइ जाइ वह रिस अब कहां गई१७॥

एक करै धौज एक कहै काढ़ो सौज एक औंजि
पानी पीकै कहै बनत न आवनो । एक परे गाढ़े एक
डाढ़तही काढ़े एक देखत हैं ठाढ़े कहैं पावक भया-
वनो ॥ तुलसी कहत एक नीके हाथ लाये कपि
अजहूं न छांड़ै बाल गाल को बजावनो । धावरे बुझा-
वरे कि बावरे जिआवरे हो औरै आगि लागी न बुझावै
सिंधु सावनो १८ ॥

एक करै धौज अर्थात् धाइ जात अग्नि बुझाइबे हेतु एक कहत कि बुझाइबे पर न परौ सौज कहे सामग्री काढ़ौ एक प्यासे औंज

कहे आसूदा है पानी पीकै कहत कि पेट भरिगयो ताते वहां आवनो नहीं बनत एक अग्नि के बीच सांकरे में परे एक जरत काढ़े गये एक दूरि ठाढ़े देखत कहत कि अग्नि भयंकर है कहत कि कपि ने नीकी भांति हाथ लगाये वर्तमान रावण मान भंग किये ताहूपर बालबुद्धी मूर्ख रावण गाल बजावन छांड़त है जे गाढ़े परे ते पुकारत कि धाओरे जे जरत ते पुका कि बुझाओरे जे अधमरे ते पुकारत कि हे बावरेउ ! जिआ जे बाहर ठाढ़े ते कहत कि यह और भांति की अग्नि लागी भाव कछु और भांति की दैवी अग्नि है हमलोगों की कौनि है जो समुद्र अरु सावन बुझावा चहै तौ न बुझाइगी भाव स उमँगि कै भूमि में छाप चढ़ै सावन की जल वृष्टि आसमान ते तबहूं यह अग्नि न बुझैगी १८ ॥

कोपि दशकंध तब प्रलयपयोद बोले रावण रजा धाइ आये यूथ जोरिकै । कह्यो लंकपति लंक ब बुतावो बेगि बानर बहाइ मारो महाबारि बोरिकै भले नाथ नाइ माथ चले पाथप्रदनाथ बरषै मुशलध बारबार घोरिकै । जीवनते जागी आगि चपरि चौगुन लागी तुलसी भभरि मेघ भागे मुख मोरिकै १९ ॥

अग्नि न बुझाइगी ऐसे वचन सुनि दशकन्ध कोप करि प्रल कारक पयोद जे मेघ तिनको बुलावत भयो ते रावण की आ पाइ यूथ जोरि कहे समूह बटुरिकै धाय आये तिनते रावण क कि बरत लंका को बेगि बुतावौ अरु महा जलधारा में बहाइ रिकै बानर को मारि डारौ यह सुनि भले नाथ कहि माथ न

पाथप्रद जे मेघ तिनके नाथ अर्थात् मेघन के राजा चले ते बार-बार घोरिकै घोर शब्द गर्जिकै मुशलसम मोटी जलकी धारा बर्षन लगे जीवन कहे जल यथा ॥ पयः कीलालममृतं जीवनं भुवनं वनमित्यमरः ॥ एक तो स्वाभाविक प्रचण्ड अग्नि में जल परेते अधिक भभक निसरत दूसरे जो बड़वाग्नि जठराग्नि वज्रपाताग्नि ये जल पाय बुझात नहीं बल्कि जलही को जराइ देत है तीसरे हरिइच्छा में विघ्नकर्ता कौन है ताते जीवन कहे जल परतही पुनः अग्नि जागी चपलहै चौगुनी लागी यथा अग्नि में जल परेते भभक में शीघ्र चिनगी उड़ि चारहू दिशि अग्नि बरिउठी ता प्रचण्ड अग्नि लंका में बढ़ी देखि मेघ बराय मुँह फेरि भागे १९ ॥

इहां ज्वाल जरे जात उहां ग्लानि गरे गात सूखे सकुचात सब कहत पुकार है । युगषट भानु देखे प्रलय कृशानु देखे शेषमुख अनल विलोके बार बार है ॥ तुलसी सुन्यो न कान सलिल सर्पी समान अति अचरज कियो केशरीकुमार है । वारिद वचन सुनि धुनै शीश सचिवन कहै दशशीश ईश वामता विकार है २० ॥

इहां तौ अग्नि के ज्वाल ते मेघ जरे जात उहां रावण के पास जाबे की ग्लानि में गरे कहे बूड़ेजात ताते देहैं सुखाइ गई संकोच सहित पुकार करि सब मेघ कहत कि युगषट् छदुनी बारहौ कला सूर्य देखे ताहू में ऐसा तेज नहीं प्रलयकाल की अग्नि देखे ताहू में ऐसा तेज नहीं शेष मुखकी जो विषाग्नि है बारबार देखे ताहू में ऐसा तेज नहीं ऐसी अग्नि हम कानसों नहीं सुने जामें परे ते

जल सर्पि कहे घृतसम है अग्नि को प्रचण्ड करि देत अरु कं
काठ सो बरत यह अत्यन्त आश्चर्य्य हनुमान्जीने करो है भ
कछु अद्भुत अग्नि है जो लंका में लगाई है ऐसे वचन मे
के सुनि माल्यवानादि जे सचिव हैं ते शीश पीटि कहत कि
दशशीश ! यह अग्नि नहीं है ईश की वामताको विकार कहे ई
को महाकोप है यामें रक्षक कौन है २० ॥

पावक पवन पानी भानु हिमवान यम का
लोकपाल मेरे डर डांवाँडोल हैं । साहब महेश स
शंकित रमेश मोहिं महातप साहस विरंचि ली
मोल हैं ॥ तुलसी त्रिलोक आजु दूजो न विराजै रा
बाजे बाजे राजन के बेटा बेटी बोल हैं । को है ई
नाम को जो वाम होत मोहूं से को मालवान रावरे
बावरे से बोल हैं २१ ॥

ईश बामताको विकारहै ऐसे वचन सचिवनके सुनि रा
कहत कि अग्नि पवन जल सूर्य हिमवान् जो चन्द्रमा यम
काल इन्द्र वरुण कुबेरादि अरु सब लोकन के नाथ ते सब
डरकरि डांवाँडोल कहे भागे भागे फिरत हैं अब महेश हा
स्वामी हैं भाव हमारे सदा रक्षक हैं रमेश जो विष्णु ते शं
सदा हमसे डरत हैं अरु महातप के साहस कहे पराक्रम क
ब्रह्माजीको तौ मोल ऐसो लीन है सदा मेरे आधीन हैं ये
त्रिदेवहैं तिनकी वामताको तौ मो को डरै नहीं है जो मोपर क
होइ ऐसा तीनिलोकमें दूसरा कौन है राजपर विराजमान जा
में दण्ड नहीं लिये आजहूं बाजे बाजे राजन के बेटी बेटा ब

कहे दण्डहेत बँधुवा हैं याते त्रिलोकविजयी प्रतापवान् हम मण्ड-
लीकमणि राजा हैं मोहूं ऐसे को जो वाम होत सो ईश कौन है
कौनरूप है वाको कौन नाम है ताको बतावो नहीं तो हे माल्य-
वान् ! आपके वचन बावले के ऐसे हैं भाव निरर्थक हैं तुम्हारो
कहिबो वृथा है २१ ॥

भूमि भूमिपाल व्यालपालक पताल नाकपाल
लोकपाल जेते सुभट समाजु हैं । कहै मालवान यातु-
धानपति रावरे को मनहुँ अकाज आने ऐसो कौन
आजु है ॥ राम कोहपावक समीर सीयश्वास कीश
ईशवामता विलोकि वानर को ब्याजु है । जारत
प्रचारि फेरि फेरि सो निशंक लंक जहां बांको वीर तोसों
शूर शिरताजु है २२ ॥

भूमि के जेते भूमिपाल राजा हैं यथा सुरथ सुधन्वा वीरमणि
दमनकादि अरु पाताल के जेते व्यालपालक सर्पन के राजा यथा
अनन्त वासुकी तक्षक कर्कोटक शेष पद्मक महापद्मक एलापत्रकादि
अरु नाकपाल इन्द्र लोकपाल धर्मराज अग्नि सूर्य पवन वरुण कुबे-
रादि जेते सुभटन की समाजहैं माल्यवान् कहत कि हे यातुधानपति
रावण ! त्रैलोक्यमें ऐसा समर्थ आजु कौन है जो आपको अकाज
करिबो मनमें लावै प्रसिद्धकी को कहै भाव तुम्हारो ऐसो प्रताप
है जासों सब डरत हैं हे रावण ! जो आपने कहा कि कौन ईश है
जो हमारे ऐसे को वाम होत ताको सुनिये परब्रह्म श्रीरघुनाथजी
को क्रोध पावकरूप है श्रीजानकीजीकी विरहाग्नि ज्वलित श्वासकी
जो समीर ताको सहायता पाय अग्नि प्रचण्ड परत जात ईश जो

श्रीरघुनाथजी तिनकी वामता सोई कीशरूप करि देखौ वाना
बहानामात्र है काहेते जहां रावण तुम ऐसे बांके वीर भाव का
करि युद्धमें निश्शंक अरु शूरन में शिरताज भाव स्वहस्त
भेदन करेते तुम वर्तमान को प्रचारिकै निश्शंक घूमि घूमि लंका
जारत है याते निश्चय जानिये कि वानररूप रघुनाथजीकी वा
है इहां कोह पावक श्वास समीर में रूपक है वानरके बहाने ई
वामता वर्णन करे याते कैतवापह्नुति अलंकार है २२ ॥

**पान पकवान विधि नाना कै संधानो सी
विविधि विधान धान बरत बखार ही। कनक कि
कोटि पलँग पेटारे पीठ काढ़त कहार सब जरे
भारही ॥ प्रबल पावक बाढ़े जहां काढ़े तहां डाढ़े भ
लपट भरे भवन भँडार ही। तुलसी अगार न पगार
बजार बच्यो हाथी हथसार जरे घोरे घोरसार ही २**

जो वस्तु जरी ताको कहत पान कहे पीवनेकी वस्तु
मेवादि औषधिनके अरक औषधिन के शर्बत आसवादि अनेक भा
मदिरादि अरु पकवान कहे यथा खाझा बोंदी खुरमा जा
गुलगुला जलेबी आदि मिठाई अरु अनेक विधि संधानो
शोधि बनायो सीधो यथा इस्तेमाल चाउर कांड़ा की दाल मैदा
शक्करादि अरु विविध विधान धान गेहूं उरदादि अन्न जो बखा
में भरो जरत है इति भण्डार अथ मन्दिर की वस्तु माणि जा
कञ्चन के मुकुटादि भूषण कोटिन रेशमी निवारि के प
दुशालादि वसननके भरे पेटार पीठ कहे सिंहासनादि काढ़त
भार सहित कहार जरे काहे ते जब प्रबल अग्नि बाढ़ी ता

लपटन की झपटैं भवन भण्डार में भरि रही हैं ताते जहां अस-
बाव काढ़े तहांई डाढ़े कहे जरिकै रहिगये गोसाईंजी कहत कि
काहू को छोरिदेबे की सामर्थ्य न रही ताते हाथी हथिसार में
घोड़ा घोड़सार में जरि गये २३ ॥

**हाट बाट हाटक पिघिलि चलो घीसो घनो कनक
कराही लंक तलफत जाय सों। नाना पकवान यातु-
धान बलवान सब पागि पागि ढेरी कीन्हीं भली भांति
भाय सों ॥ पाहुने कृशानु पवमान सो परोसो हनुमान
सनमानिकै जेंवाये चित चाय सों। तुलसी निहारि
अरिनारि दै दै गारि कहैं बावरे सुरारि वैर कीन्हों राम-
राय सों २४ ॥**

बजारन में खंभादि राहन में छज्जादि जो थोरा सोना रहा सो
अग्नि में पिघिलि घीसम बहि चलो भूमि अरु कोट में समूह
सोना जो गलो नाहीं तप्त ह्वैरहो सोई लंका सोनेकी कराही है सो
तलफत कहे दिग्धत जात तामें गलो सोना घीसम भरो है जे
बलवान् राक्षस हैं ते सब अनेक भांति पकवान हैं तिनको भली
भांतिकै भाव करि मन लगाय कै पागि पागि ढेरी करी अर्थात् पाहुन
हेतु रसोई भाव सहित बनाई जात इहां वीररस में धृति चपलता
गवादि संचारी भाव करि राक्षसन को अग्नि में डारि दिये कृशानु
जो अग्नि सोई इहां पाहुन है पवमान जो पवन सोई परोसनहार
है तहां तप्त सोना में जे राक्षसन को हनुमान्जी डारि दिये तिन
को रक्त मांस जरि रूक्ष ह्वैगये सो पागब है जब हलके परिगये तब
पवन उड़ाय ज्वलित अग्नि में डारि दियो यह पवनको परोसब है

प्रचण्ड अग्नि में परेते बरिगये यह अग्नि को भोजन करिबो
या भांतिसों सन्मान करिकै अग्निको जिंवाये हनुमान्जी चित
कहे आनन्द सहित चित्त में उत्साह यह वीररस की स्थायी है
पाहुन जेंवत में नारी गारी गावती हैं इहां अरिनारी जो राक्षसी
को रोदन सोई गान करि गारी देंदै कहती हैं हे बावरे सुत
रावण ! तुम रामरायसों वैर कीन्हों ताको फल लेउ इति शेषः इ
वीररस ते राक्षसिन में करुणारस है अरु उपमा रूपक अलं
करि श्रीरामप्रताप वस्तु व्यंग्य है २४ ॥

रावणसों राज रोग बाढ़त विराट उर दिन दिन वि
सकल सुख राँकसो । नाना उपचार करि हारे सुर सि
मुनि होत न विशोक औ तपावै न मनाक सो
राम की रजाय ते रसायनी समीरसूनु उतरि पयोधि
शोधि सरवांक सो । यातुधान बुट पुटपाक लंक जात
रतन यतन जारि कियो है मृगांक सो २५ ॥

विराट् को उर जो है समुद्र ताके बीच में राजरोग सम राव
प्रताप करि बाढ़त भयो ताके शोकते विराट् दिन दिन वि
होत अरु सब सुख रांक कहे क्षीण होत भयो भाव नेत्र सूर्य प्रता
रहित सेत ह्वैगये मन चन्द्रमा मलीन भये बाहु दिग्पाल शोक ताप
क्षीण भये ब्रह्मांड देह तापते तप्त ह्वैरही पाप कफरूप बाढ़त जा
इत्यादि शोक निवारण हेतु अनेक भांति के उपचार कहे औषध
करि देवता युद्ध आदि करि सिद्ध सिद्धाई करि मुनि जप यज्ञा
करि सब हारिगये विराट् विशोक न होतभयो औ तप कहे ज्व
सो मनाक कहे थोरी नहीं आवत भाव रावण को प्रतापरूप ता

बढ़तै जात ताके निवारण हेतु श्रीरघुनाथजी की आज्ञाते रसायनी
हनुमान्जी समुद्र पार जायकै सरवा कहे दियाको सरवा जामें
धरिकै रस फूंका जात है कु कहे भूमि सिन्धुपारकी सोई सरवा है
तामें सब धातु शोधिकै अर्थात् जातरूप रत्न कहे सोना मोतीमय
जो लंका है तामें राक्षस बूटी हैं तिनकी पुटपाक कहे एक में
मिलाय यत्न सहित कहे मृगांक की विधि यथा तेल कांजी मठा
त्रिफला गोमूत्र कुरथी को काढ़ादि में तप्त करि दुइबार बुझाय
सोनो बरखकरि खटाई अरु शुद्ध पारा समान करि घोटै पुनः
कचनार रसकी एक पुट देइ अग्निछाले के रसकी तीनि पुट
देइ करियारीकी जर के रसकी एक पुट देइ पीछे सोनेको चौथाई
मोती डारि घोटै पुनः शोधा गन्धक सबको बराबरि डारि दुइ दिन
घोटै गोलाकरि सरवा में धरि बंद करि कपरमट्टी करि गजपुट में
फूंकि देइ यह यत्न है इहां राक्षस करियारी आदि सब औषधी हैं
तिनको मर्दिबो सोई घोटब है मेघनादादि सबल राक्षसन को दर्प
सोई पाराहै सामान्य राक्षसन को दर्प गन्धक है सोना मोतीमयी
लंका है तहांकी भूमि सरवा है इत्यादि यत्नसों जारि हनुमान्जी
मृगांक बनायो तहां विराट् को मुख अग्नि है प्रचण्ड ह्वै भस्म करि
देना मृगांकरस को भक्षण है तहां रावण राजरोग को प्रताप
रूप ताप आजुइते कम परो भाव सब लोक निर्भय भये २५ ॥

जारि बारि कै विधूम वारिधि बुताइ लूम नाइ माथो
पगनि भो ठाढ़ो कर जोरिकै । मातु कृपा कीजै सहि-
दानि दीजै सुनि सीय दीन्ही है अशीष चारु चूड़ामणि
छोरिकै ॥ कहा कहौं तात देखे जात जो बिहान दिन
बड़ी अवलंब ही सो चले तुम तोरिकै । तुलसी सनीर-

नैन नेह सों शिथिल बैन विकल विलोकि क
कहत निहोरिकै २६ ॥

लंका को जारि बारि विधूम कहे कोयला करे पुनः पूंछ स
में बुझाय श्रीजानकीजी के पाँयन में माथ नाय हनुमान्जी ह
जोरि आगे ठाढ़ है कहे हे मातु कृपा कीजै अर्थात् चलिबेकी आ
दीजै अरु सहिदानी कहे कछु अपनो चिह्न दीजै यह सुनि जान
जी आशीष दै सुन्दर चूड़ामणि शीश ते छोरिकै दीनी अरु का
भई कि हे तात ! काह कहौं जो कहिबे को हाल सो जाभांति
दिन बिहान कहे दिन बीतत सो तुम देखे न जात हौ तुम्हारे
हमारे प्राणन को अवलम्ब रहा ताहू को तुम तोरिकै चले जात
ऐसे वचन सुनि जानकीजी को विकल देखि हनुमान्जी स्नेह
शिथिल तन सजल नयन निहोरा करि वचन कहते भये २६

दिवस छसात जात जानबे न मातु धरु धीर अ
अन्तकी अवधि रही थोरिकै । वारिधि बँधाय सेतु
भानुकुलकेतु सानुज कुशल कपिकटक बटोरिकै ॥
चन विनीत कहि सीताको प्रबोध करि तुलसी त्रि
चढ़ि कहत डफोरिकै । जैजै जानकीश दशशीशक
केशरीकपीश कूद्यो वातघात उदधि हलोरिकै २७

दिवस छः सात कहिबो थोरे दिननको लोकोक्ति है अथवा
सात कहे छःसते बयालिस दिन तहां अगहन शुक्लपूर्णिमा
हनुमान्जी की यह वार्त्ता है माघकृष्णद्वादशी को लंका समीप क
युत रघुनाथजी प्राप्त भये याते बयालिस दिन बीतत में
जानि न परी हे मातु ! धीरज धरु अरि रावण के अन्त कहे

की अवधि थोरे दिनकी रही काहे ते कपिसेन बटोरि समुद्र में सेतु बँधाय लक्ष्मणजी सहित भानुकुलकेतु श्रीरघुनाथजी कुशल सहित ऐहैं ससेन रावण को मारि तुमको लैजायँगे इत्यादि विनीत वचन कहि श्रीजानकीजी को प्रबोध कीन पुनः त्रिकूट शिखरपर चढ़ि डफोरि कहे ऊंचे स्वर हांक दैकै कहत भयो कि रावणरूप गजमर्दन को केशरी कहे सिंहरूप श्रीरघुनाथजी की जय होइ जय होइ ऐसा कहि कपि हनुमान्जी ऐसी शीघ्रता करि कूदे जो तनकरि वात कहे पवन निसरी ताकी घात कहे ठोकरते समुद्र में हलोरा उठे याते वेगतागमन सूचित भयो २७ ॥

साहसी समीरसूनु नीरनिधि लंघि लखि लंक सिद्धि पीठि निशि जागो है मशानसो । तुलसी विलोकि महासाहस प्रसन्न भई देवी सियसारिखी दियो है वरदानसो ॥ वाटिका उजारि अच्छधारि मारि जारि गढ़ भानुकुलभानुको प्रतापभानु भानुसो । करत त्रिशोक लोक कोकनद कोककपि कहै जामवन्त आयो आयो हनुमानसो २८ ॥

यामें हनुमान्जी को मशान जो जागिबो वर्णन करे तहां अत्यन्त साहसी होइ तौ यह मार्ग में पग देइ काहे ते यामें विघ्न करिबे हेतु अनेक भयंकर भय देखात तिनको न मानै तहां पवन साहसी के पुत्र हनुमान्जी महासाहसी है या मार्गमें पांव दिये तहां सुरसा सिंहिका लंकिनी आदि अनेक भयकारक विघ्न तिन को कुछ न गने पुनः जहां नदी के बीच में रेत परो होइ तहां अर्धरात्रीको जाइ मृतक के ऊपर बैठि मशान जागै तामें उलूक

काग अजादि की बलिदान देइ मदिरा की धार दैके मंत्र जपै
निर्विघ्न पुरश्चरण पूरो होइ तौ श्मशानेश्वरी देवी प्रसन्न
जो वर मांगै सोई देइ इहां हनुमान्जी समुद्र नांघि तहांकी
में मृतक शरीर लंकिनी को पायो यह देहधारी लंकापुरी है
हनुमान्जी के मारे पापमयी देह छांड़ि दिव्य देह पाई यह
चन्द्रिका में लिखा है यथा ॥ जबहीं हनुमन्त चले तजि शा
मग रोकि रही तियह्वै तब लङ्का ॥ हनुमन्तबली त्यहि थापर मा
तजि देह भई तबहीं वर नारी ॥ याते लंकापुरी मृतक सिद्धि
सो देखि तापै बैठि मशानसों रात्री जागे तहां मुद्रिकारूप बलि
दिये प्रेममय वचन मदकी धार दिये रामचन्द्रजीके गुणानु
वर्णन किये सोई मन्त्र जापसों पूर्ण भयो तहां रात्रि जागत
रावणकृत अनेक भय देखानो ताको कछु न गने इत्यादि
साहस देखि देवीसी श्रीजानकीजी प्रसन्न ह्वै वरदान दियो य
भक्ति प्रताप तेजबल सानी । आशिष दीन्ह रामप्रिय जा
अजर अमर गुणनिधि सुत होहू । करहु सदा रघुनायक छो
यहि वरदान के बलते निशाचरन को निदरि अशोकवा
उजारे धारि कहे सेना सहित अक्षकुमार को मारि लंकाग
जारि इत्यादि साहस करिकै भानुकुल के प्रकाशक भानु जो
रघुनाथजी हैं तिनको प्रतापरूप भानुको वर्तमान भानु सो
करि रावण को भयरूप रात्री को नाश करे जामें सब लोकन
इन्द्र वरुणादि कोकनद कहे कमल सम सम्पुटित रहे तिनके
प्रफुल्लित भये कोक कहे चक्रवाक सम राजश्रीको वियोग रहा
को संयोग भयो इत्यादि वचन सब कपि कहत कि हे जाम
सब लोकन को विशोक करत हनुमान्जी आयो आयो
द्वैबार कहे २८ ॥

गगन निहारि किलकारी भारी सुनि हनुमान पहिचानि भये सानँद सचेतहैं । बूड़त जहाज बच्यो पथिक समाज मानों आजु जाये जानि सर्व अंकमाल देतहैं ॥ जैजै जानकीश जैजै लषण कपीश कहि कूदे कपि कौतुकी नटत रेतरेतहैं । अंगद मयन्द नल नील बलशील महा बालधी फिरावै मुख नाना गति लेतहैं २९ ॥

भारी किलकारी सुनि आकाशमार्ग निहारि हनुमान्जी को चीन्हि प्रसन्नमन देखि सब कपि जो दुःख करि मूर्च्छित रहैं ते आनन्द सहित कैसे सचेत भये मानों जहाज बूड़त में कोई दूसरा जहाज लैके पहुँचि गयो सब पथिकन की समाज बूड़त में बचि गई तथा सो मानों सब कपि आजुते नयो जन्म पाये यह जानि अंकमाल कहे परस्पर एक एकन को मिलत हैं अरु कहत कि जानकीशकी जय होइ जय होइ लक्ष्मण सुग्रीव की जय होइ ऐसे शब्द उच्चस्वर ते उच्चारण करिकै कौतुकी जे कपि हैं ते कूदत अरु समुद्र तट रेत में ठौर ठौर अनेक भांतिकी नृत्य करत हैं तिन को देखि अंगद मयंद नल नीलादि जे महाबलवान् कपि हैं ते बालधी कहे पूंछ ताको फिरावत अरु मुखनते अनेक भांति तालन की गति लेत इत्यादि मन आनंद के मुद्रा हैं २९ ॥

आयो हनुमान प्राणहेतु अंकमाल देत लेत पग धूरि एक चूँबत लँगूर हैं । एक बूझै बारबार सीयसमाचार कहे पवनकुमार भो विगत श्रम शूल हैं ॥ एक

भूखे जानि आगे आनि कंद मूल फल एक पूजै बा
बलमूल तोरि फूल हैं । एक कहै तुलसी सकलसि
ताके जाके कृपापाथनाथ सीतानाथ सानुकूल हैं ३०

सब कपिन के प्राण उबारन हेतु श्रीहनुमान्जी खबरि लै आये ता आनंद ते सब कपि अंकमाल कहे अंकोरा भरिकै मि हैं पुनः कोऊ सुकृतकारक महात्मा मानि पांयन की धूरि लै श पै धरत कोऊ लांगूल को चूंबत भाव याही ते लंका भस्म एक जानकीजी का समाचार बारंबार बूझत है सो हनुमान्जी कहे ताको सुनिकै जो भूखें प्यासे मार्ग चलिबे को श्रम रहै औ न खबरि पायबे की जो शूल रहै सो सब वि भई हनुमान्जी को भूखे जानि एक कन्द मूल फल सुंदर लै भोजन हेतु आगे धरत एक दल फूल तूरि आनि जल लैकै मूल जो हनुमान्जी की बाहु हैं तिनको पूजत भाव इनते ख को जीते एक कहत कि हनुमान्जी को सब सुगम है काहे ते जा कृपाके समुद्र सीतानाथ सानुकूल हैं ताको अणिमादि यावत् सि हैं ते सब सुगम प्राप्त होती हैं ३० ॥

सीयको सनेह शीलकथा तथा लंककी कहत च
चायसों सिरानी पंथ क्षनमें । कह्यो युवराज बो
वानर समाज आजु खाहु फल सुनि पेलि पैठे मधुव
में ॥ मारे बागवान ते पुकारत देवानगे उजारे बा
अङ्गदादि खाये घाय तनमें । कहैं कपिराज करि का
आये कीश तुलसीशकी शपथ महामोद मेरे मनमें ३

यथा अनुकूल ताकी वृद्धि प्रिया होत याते श्रीजानकीजी

शील सनेहमयी स्वभाव की कथा तथा प्रतिकूलता की हानि प्रिया याते लंका भस्म होइबो निशाचरन को बध इत्यादि कथा हनुमान्जी कहत अपर कपि सुनत चाय कहे आनंद सों चले जात में न जाने क्षण में मार्ग सिराइ गई किष्किन्धा में प्राप्त भये तब अंगदने वानरनकी समाज बुलाय कह्यो कि ये फल खावे लायक समय आजुही है याते आजु या वन के सुन्दर फल मनभाये खाउ यह सुनते ही सब मधुवन में पेलिकै पैठे भाव द्वारकी राह न देखे सब सींवा फांदि गये जब बागवान रोकेउ तिनको कपि मारन लगे ते सब बागवान पुकार करत देवान कहे दरबार को गये कहेउ कि अंगदादि वानर फल खायकै बाग उजारि दिये हम रोकेउ सो तन में घाउ खाये भाव हमको मारेउ यह सुनतेही सुग्रीव कहेउ कि वानर काज करि आये खबरि लै आये श्रीरघुनाथजी की शपथ यह बात सांची है काहे ते मेरे मन में महामोद है ३१ ॥

नगर कुबेरको सुमेरुकी बराबरी विरञ्चि बुद्धि को
विलास लङ्क निरमाणभो । ईशहि चढ़ाय शीश बीस-
बाहु वीर तहां रावण सो राजा रजतेज को निधान
भो ॥ तुलसी त्रिलोककी समृद्धि सौज सम्पदा सकेलि
चाकि राखी राशि जांगर जहानभो । तीसरे उपास वन-
वास सिंधुपास सो समाज महाराजजी को एक दिन
दानभो ३२ ॥

धनवान् कुबेर को नगर पुनः सुमेरुकी बराबरि कंचनमयी अति उन्नत विस्तृत अरु सब कलाकुशल ब्रह्मा की बुद्धिका विलास

कहे चमत्कारी के आश्रित विश्वकर्मा ने लंका को निर्माण क तहां ईश जो महादेवजी तिनको शीश चढ़ाइ वर लै अजीत बी हैं जाके भुजा ऐसो वीर रज पराक्रम तेज प्रतापादि को निश कहे समुद्र रावण ऐसो दिग्विजयी जो लङ्काको राजा भयो आ आपने भुजबल इन्द्र वरुण कुबेरादिको जीति तीनहूं लोक की स समृद्धि कहे धन संचय अर्थात् मणि मुक्ता सुवर्ण रुपयादि खजाना अरु सम्पदा कहे सब प्रकार का ऐश्वर्य यथा धन ग रथ तुरंग महिषी धेनु भूमि वाटिका मंदिरादि आरोग्य तन स्त्री पु पौत्र भोजन वस्त्रादि सौज कहे यावत् सामग्री सो सब सकेलि क बटोरि इच्छापूर्ण सम्पदा अन्न की राशिइव चाकि राखी कुल फां चिह्नांकित करि राखी यथा किसान आफर में राशि के किनारे गो की रेखा करत सो चाकवत् है तहां विलोक सम्पदा राशि रावण लई राशि बूसा काढ़ि लेने पर जो डँड़का बक्कल रहत ताको अँग कहत सोई जांजर सम सब जहान भयो इत्यादि रावणकृत ऐश सो समाज महाराज रघुनाथजी को एक दिन क्षणमात्र को दान भ अर्थात् विभीषणको दिये कौनी दशा में सो कहत कि तीसरे उप अर्थात् पौषकृष्ण सप्तमीको हनुमान्जी सों खबरि पाये प्रभात अ को मध्याह्न काल उत्तरा के प्रथम चरण सिंहके चन्द्रमा में ग्या बली युद्धहेतु वामें बली जानि लंका जाबे को प्रस्थान कीन प्रभ चले पौषकृष्ण अमावस को सिन्धुतट प्राप्त भये तहां फला भोजन न मिले चतुर्थी को विभीषण आये याते तीसरे उपास क वास कहे प्राकृत राजश्री त्यागे सिन्धु पास अर्थात् पार जाबे सन्देह ऐसी दशा में विभीषण को लंकनायकता दिये यामें धू उदारता दान वीरतादि गुण वर्णन करे अरु श्रीरघुनाथजी अतिप्रताप सूचित करिबे हेतु रावण को ऐश्वर्य वर्णन करे ३२

सवैया ॥

तटवारिधिवारिधिरामधरा तनुजार्थधराजिनयस्थितितो ।
सपुटांजलिदण्डजदावनिपस्करिष्वानुज अंककृतोविहितो ॥
पुनरम्बुपत्याव्यभिषेक्यलिकेसकृताधिपलंगरितारहितो ।
जनसंश्रितमोचनरामदयालयमामकमानससन्निहितो ॥ १ ॥

इति श्रीरसिकलताश्रितकल्पद्रुमसियवल्लभशरणागतबैजनाथ विरचिते कवितावलीरामायणे रत्नदीपिकाटीकायां सुन्दरकाण्डः समाप्तः ५ ॥

लङ्काकाण्ड ।

कार्यक्रियाकर्मनिदानरूपं निरामयं भेषजमिष्टनामम् ॥
सुधर्मपथ्यार्थगुणानुवादं नमामि रामं भवरोगवैद्यम् १ ॥

बड़े विकराल भालु वानर विशाल बड़े तुलसी बड़े पहार लै पयोधि तोपिहैं । प्रबल प्रचण्ड बरिबण्ड बाहु दण्ड खण्डि मण्डि मेदिनीको मण्डलीक लीक लोपि हैं ॥ लङ्क दाहु देखे न उछाहु रह्यो काहुनको कहैं सब सचिव पुकारि पांव रोपि हैं । बाचिहैं न पाछे त्रिपुरारिहू मुरारिहूके कोहै रणरारिको जो कोशलेश कोपि हैं १ ॥

लङ्कादाह भये पीछे सब सचिव सशंकित वार्ता करत हैं कि बड़े विकराल भयंकर भालु अरु बड़े विशाल उच्च देहनके वानर महाबली ते बड़े पहाड़न को लैकै समुद्रको तोपि राहकारि उतरि आइहैं प्रबल प्रचण्ड कहे प्रतापवान् बरिबण्ड कहे तेजवान् रावण

ताके भुजदण्ड खण्डन करि सुधर्म करिकै पृथ्वी को मण्डि
भूषित करिकै भूमण्डल को जीतनहार मण्डलीक रावणकी च
जो लोक यज्ञादि धर्मको रोकि अधर्म को प्रचार ताको लोपि
मिटाय देहैं इत्यादि आगम काहेते समुझि परत कि जबते ल
भस्म होते देखेउ सबते युद्ध करिबे की उत्साह काहू निशा
वीर में न रही याते सब सचिव पांव रोपि कहे प्रण करि पु
कै कहत हैं कि औरन की क्या गति है जो त्रिपुरारि शिव पु
विष्णु इनके पाछे परि जो निशाचर उबराचाहैं तौ न बचिहैं
इनके नाममें प्रसिद्ध दैत्यनकी शत्रुता अर्थ होत याते इनहूं रक्षक
हैं अथवा जासमय कोशलेश श्रीरघुनाथजी कोप करि धनुष बा
गहैंगे तिनसों युद्ध करिबे को कौन वीर समर्थ है जो निशा
को उबारै भाव कोऊ नहीं है यथा जयंत ॥ ब्रह्मधाम शिवपुर स
लोका । फिरा श्रमित व्याकुल मन शोका ॥ काहू बैठन कहा
वोही । राखि को सकै रामकर द्रोही ॥ प्रमाणं भगवद्गुणदर्पणे
ब्रह्मरुद्रेन्द्रसङ्घैश्च त्रैलोक्यप्रभुभिस्त्रिभिः । रामवध्यो न शक्ये
स्याद्रक्षितुं सुरसत्तमैः १ ॥

त्रिजटा कहत बारबार तुलसीश्वरीसों राघौ बा
एकही समुद्र सातौ सोखिहैं । सकुल सँहारि यातुधा
धारि जम्बुकादि योगिनी जमाति कालिका कला
तोखिहैं ॥ राजदै निवाजिबो बजाइकै विभीषणै बजै
व्योम बाजने विबुध प्रेम पोखि हैं । कौन दशक
कौन मेघनाद बापुरो को कुम्भकर्णकीट जब राम रो
रोखिहैं २ ॥

तुलसीकी ईश्वरी जो श्रीजानकीजी हैं तिनसों बार बार
त्रिजटा कहत कि हे महारानीजी ! धीरज धरो एक समुद्र की
कौन बात श्रीरघुनाथजी को एकही बाण सातौ समुद्र सोखि
लेइगो या भांति समुद्र उतरि पुनः यातुधान जो राक्षस तिनको
चारि कहे सेनासहित कुल रावण को संहारि कहे नाश करैंगे
तिनको रुधिर पी मांस खाइ जम्बुकादि कहे शृगाल गीध चील्ह
काग अरु योगिनिन की जमाति कालिका समूह ते तोखिहैं कहे
अघाइहैं भाव मृतक दग्ध करनहार कोऊ न रहैगो या भांति अकं-
टक करि डंका बजाइ विभीषण को लंका की राज्य दै निवाजिहैं
तब निर्भय ह्वै विबुध जो देवता ते प्रेम करि पोखिहैं कहे पुष्ट ह्वैमन
राघवमें लगाइहैं ताते आनन्द ह्वै आकाश में दुन्दुभी आदि बाजा
बजावेंगे इत्यादि निश्चय जानिये काहेते जासमय श्रीरघुनाथजी
रोष करि धनुषबाण धारण करि हैं तिनसों युद्ध करिबे को कोऊ
नहीं समर्थ है तहां रावण अरु बापुरो मेघनाद कीट सम कुम्भकर्ण
कौन हैं २ ॥

विनय सनेहसों कहति सिय त्रिजटासों पाये कछू
समाचार आरजसुवनके । पाये जू बँधायो सेतु आये
भानुकुलकेतु आये देखि देखि दूत दारुण दुवनके ॥
बदन मलीन बलहीन दीन देखि मानों मिटे घटे तमी-
चर तिमिर भुवनके । लोकपति शोक कोक मूँदे कपि
कोकनद दण्ड द्वै रहे हैं रघुआदित उवनके ३ ॥

कविकी उक्ति विनय कहे नम्रता सनेह सहित वचन श्रीजानकी
जी त्रिजटा सों कहती हैं कि आर्य कहे श्रेष्ठ अर्थात् अवधेशसुवन

के कछू समाचार पाये हैं त्रिजटा बोली कि पायो है सेतु
भानुकुलकेतु श्रीरघुनाथजी समुद्र उतरि आये दारुण कहे
दुवन कहे दुर्जन जो रावण ताके दूत देखि देखि आये
हाल सुनि निशाचरन के बदन मलीन भये अर्थात् वीर
स्थायी उत्साह जातारहा औ बलहीन भये अर्थात् धीरज
विभाव रहित भये दीन कहे करुणारस वश भये ताकी
करत मानो निशाचररूप अन्धकार भुवनके घटे ताते
चहत हैं लोकपाति इंद्रादि राजश्रीवियोग ते कोक कहे
वाकसम सशोक हैं औ कपि कोकनद जो कमल ता सम
टित हैं अब रघुनाथरूप सूर्य उदय होबे के द्वै दण्ड बाकी
भाव माघकृष्ण द्वितीयाको सेना समुद्र उतरी पञ्चमीको यह
है औ माघशुक्ल द्वितीया को युद्ध आरम्भ भयो सो बारह
को अन्तर परो सो देवतन के दिन सो द्वै दण्ड होत यथा
रायण दिन दक्षिणायन रात्रि सब साठि दण्ड भये सो
के बारह मास ते बारह पञ्चे साठि एक मास पांच दण्ड को
छः दिनको एक दण्ड भयो याते बारह दिन के द्वै दण्ड कहे
रघुनाथरूपी सूर्य उदय भये पर लोकपाल चक्रवाक से आनं
होइँगे कपि कमलसे प्रफुल्लित होइँगे ३ ॥

**सुभुज मारीच खर त्रिशिर दूषण बालि द
ज्यहि दूसरो शर न सांध्यो । आनि परवाम वि
वाम तेहि रामसों सकत संग्राम दशकन्ध कांध्यो
समुझि तुलसीश कपि कर्म घर घर घैरु विकल सु
सकल पाथोधि बांध्यो । बसत गढ़बंक लंके
नायक अछत लंक नहिं खात कोउ भात रांध्यो ४ ॥**

पुरवासी परस्पर वार्त्ता करत कि सुबाहु मारीच खर त्रिशिर
षण बालि आदिको वध करन में जेहि श्रीरघुनाथजी ने दूसरो
ण नहीं साधे एकही बाण ते प्राण नाश करे तिन श्रीरघुनाथ
जी सों अब विधि वामता वशते परनारी श्रीजानकीजी को हरि
आनि मृत्युवश रावण संग्राम कांध्यो कहे अंगीकार कस्यो सो
करि सकत है अर्थात् नहीं करि सकत है यह काकव्यंग्य है तुल-
सीश जो श्रीरघुनाथजी तिनको प्रताप अरु कपि हनुमान्जी तिन
को लंकादाहादि कर्म समुझि लंका में घर घर घैरु कहे यही
चर्चा मचिरही है कि अब कुशल नहीं तापर पाथोधि जो समुद्र
तामें सेतु बांधिबो सुनि पुरवासी सकल अति विकल भये गोसाईं
जी कहत कि यद्यपि त्रिकूट गढ़ लंका में बसत लंकेश रावण
नायक कहे राजा लोग विजयी ताके अछत कहे देखत पुरवासी
ऐसे भयातुर संभ्रम भये जो भात रांधिबेको होश नहीं काचो है
कि पाको जैसेही पावते तैसेही खाते हैं यामें प्रभुको अति प्रताप
वर्णन करे ४ ॥

**विश्वजयी भृगुनायकसे बिन हाथ भये हनि हाथ
हजारी । वातुल मातुलकी न सुनी सिख का तुलसी
कपि लंक न जारी ॥ अजहूं तो भलो रघुनाथ मिले
फिरि बूझिहै को गज कौन गजारी । कीर्ति बड़ो
करतूति बड़ो जनबात बड़ो सो बड़ोई बजारी ५ ॥**

पुरवासी कहत कि हाथहजारी जो सहस्रबाहु ताको हनि कहे
मारि विश्वजयी कहे संसार के क्षत्रिन के जीतनहार परशुराम

ऐसे वीरशिरोमणि तेऊ श्रीरघुनाथजीके सन्मुख बिन हाथ
भाव हथियार धरि बिनती करे पुनः वातुल कहे बाई को
बकवादी रावण को उसके मातुल कहे मामा मारीच ने सि
किं श्रीरघुनाथजी सों वैर न करो सो रावण नहीं सुन्यो अ
को कपि हनुमान लंका नहीं जारी अर्थात् जारी यह काक
है भाव अपराध एक रावण को घर सबके फूंकेगये ताते श्र
रघुनाथजी सों मिलिबो भला है जो आपन बचाउ चाहै सो
नाहीं फिरि गज कहे हाथी अर्थात् मृगवर्ग गजारि कहे मृग
अर्थात् को प्रजा है कौन राजा है यह कोऊ न बूझी सब
जाहिंगे अरु रावण को का कहिये जो कीर्ति करिकै बड़ो है श्र
तप स्तुति करि ब्रह्मा को प्रसन्न करेउ शीश दानदै शिवको प्र
करेउ अरु करतूति करि बड़ो अर्थात् भुज बलते सब दिक्पालन
जीति लियो अरु जनन बिषे बात करि बड़ो अर्थात् जाके सन
दूसरा बात नहीं करि सकत क्योंकि जाने वेदन पै तिलक
तासों कोऊ काह कहै सोतो रावण बड़ाई बजारी कहे सब
को जाननहारो है अथवा बजारी कहे जालसाज भूठी स
सांची भूठी करनहार अथवा बजारी कहे दलाल जो कोऊ त
कहै अपनो मतलब नहीं छांड़त ५ ॥

जब पाहनभे वनवाहनसे उतरे बनरा जयराम
तुलसी लिये शैल शिला सब सोहत सागर ज्यों
वारि बढ़े ॥ करि कोप करैं रघुवीर को आयसु कौ
ही गढ़ कूदि चढ़े । चतुरंग चमू पलमें दलिकै
रावण रांड़ के हाड़ गढ़े ६ ॥

कविकी उक्ति जब पाहन कहे पहाड़ वनवाहन कहे नाव सम भये अर्थात् सेतु बँध्यो तापर वानर उतरि श्रीरघुनाथजी की जय-जयकार करिरहे हैं गोसाईंजी कहत कि कोऊ पर्वत कोऊ शिला लिहे यथा जलसों समुद्र बाढ़त तथा बलकरि बाढ़त शोभित सब बारंबार वानर कहत कि जब कोप करि श्रीरघुनाथजी आज्ञा करिहैं तब लीलामात्रही कूदि लंकागढ़ पर चढ़ैंगे रथ गज बाजि पैदलादि जो चतुरंगिणी चमू कहे सेना ताको पल में दलिकै रांड़ कहे अकेला करिकै रावणहू के हाड़ गढ़ैंगे यह अमर्ष है ६ ॥

विपुल विशाल विकराल कपिभालु मानों काल
बहु वेष धरे धाये किये करषा । लिये शिला शैल साल
ताल औ तमाल तोरि तोपै तोयनिधि सुरको समाज
हरषा ॥ डगे दिग कुंजर कमठ कोल कलमले डोले
धराधर धारि धराधर धरषा । तुलसी तमकि चलै
राघव शपथ करै को करै अटक कपि कटक अमरषा ७॥

कविकी उक्ति विपुल कहे बहुत विशाल कहे बड़े विकराल कहे भयङ्कर कपि भालु कर्षा कहे क्रोध किये मानों बहुत वेष धरे काल धावत भये कोऊ शिला कोऊ पर्वत कोऊ साल कहे साखू को वृक्ष कोऊ तार तमालादि तोरि लैकै तोयनिधि जो समुद्र ताको तोपै अर्थात् सेतु बांधि लिये सो देखि देवतन को समाज हर्षित भयो जब कपि सेना चली ता समय दिग्कुञ्जर डगमगाय उठे कच्छप वराह कलमले कहे अङ्ग चलित भये धराधर जो पर्वत धारि कहे समूह सुमेरु आदि ते भूमि सहित डोलि उठे पुनः धराधर जो शेष ते धर्षा कहे दबाय गये गोसाईंजी कहत कि

श्रीरघुनाथजी की शपथ करि तमकि कहे सरोष ह्वै चले ऐसो कटक अमर्षा कहे बल वीरता के भरे तिनको कौन ऐसा वीर जो अटकाइ सकै ७ ॥

आये शुक सारण बोलाये ते कहन लागे पुलक शरीर सेना करत फहमही । महाबली वानर विशाल भालु कालसे कराल हैं रहे कहां समाहिंगे कहामही ॥ हँस्यो दशकन्ध रघुनाथको प्रताप सुनि तुलसी दुरा मुख सूखत सहमही । रामके विरोधे बुरो विधि हरि हरहू को सबको भलो है राजा रामके रहमही ८ ॥

वानर सेनाको शुक सारण आये तिनको बोलाय रावण पूछे तब कहनलगे ता समय फहमही कहे कपि सेना सहित श्री रघुनाथजी की सुरति करि प्रेमते पुलकाङ्ग ह्वै कहत कि महाबली वानर विशाल कहे बड़ेभारी अरु ऋक्ष कालसम कराल हैं कहां रहैंहैं अरु कौनी भूमिमें अँबाहिंगे ऐसो प्रताप श्रीरघुनाथजी को सुनि सहमि कहे डेराइकै मुख सूखिगयो ताके दुरायबे हेतु रावण हँसत भयो कवि की उक्ति कि श्रीरघुनाथजी के विरोधे कहे आज्ञाप्रतिकूल करिबे ते बुरोहै ताको भला करिबे को और की को कहै विधि हरि हरहू को है जो भलाई करिसकै यथा ॥ रामबध्यं न शक्यः स्याद्रक्षितुं सुरसत्तमैः । ब्रह्मरुद्रेन्द्रसंज्ञैश्च त्रैलोक्यप्रभुभिस्त्रिभिः ॥ अथवा विधि हरि हरहू को ह्वैकै श्रीरघुनाथजीको विरोध करै ताको बुरो है तहां रावण ब्रह्माको प्रपौत्र वरदानी है सो विरोध करि वंशसमेत नाश होत अरु विष्णु को अवतार परशुरामजी वचन विरोध कियो सो पराजयको प्राप्त भये अरु सतीजी

शिवजी की वामाङ्गी परीक्षामात्र विरोध करे तिनको हाल रामायण में प्रसिद्धहै ताते राजा राम के रहम किये सबको भला है ८ ॥

आयो आयो आयो सोई वानर बहोरि भयो शोर चहुँओर लङ्का आये युवराजके । एक काढ़ै सौज एक धौज करै कहा ह्वै है पोचभई महाशोच सुभट समाज के ॥ गाज्यो कपिराज रघुराजकी शपथ करि मूँदै कान यातुधान मानों गाजे गाजके । सहमि सुखात वातजातकी सुरति करि लवा ज्यों लुकात तुलसी झपेटे बाजके ९ ॥

कविकी उक्ति श्रीरघुनाथजी की आज्ञा ते युवराज अंगदजी आये देखि सभीत ह्वै राक्षस कहत कि जाने लङ्कादाह कियो सोई कपि फेरि आयो आयो इत्यादि शब्द को बड़ो शोर लङ्का में होत भयो कोऊ काढ़त सौज कहे सामग्री घरते बाहर धरत एक धाये धाये फिरत कि अब काह होइगो अजितवीर आयो तौ पोच कहे बुराई भई यह समुझि सुभटन की समाज में महाशोच भयो ताही समय कपिराज अङ्गदजी श्रीरामचन्द्रकी शपथ कहे दुहाई दै गर्जन भयो मानों वज्रपात ऐसो घोर शब्द सुनि यातुधान राक्षस कान मूंदि लिये गोसाईंजी कहत कि वातजात जो हनुमान्‌जी तिनकी सुरति करि सहमि कहे डेरायकै तन सूखत जात राक्षस कैसे लुकाने जैसे बाजके झपेटे लवा बटेर पक्षी लुकात इहां भयानक रस है ९ ॥

तुलसी सबल रघुवीरजी को बालिसुत वाहि न गनत बात कहत करेरीसी । बखशीश ईशजीकी

खीश होत देखियत रिस काहे लागत कहत हौं मे
तेरीसी ॥ चढ़ि गढ़ मढ़ दृढ़ कोटके कँगूरे कोपि नेकु
धका देहै ढैहै ढेलन की ढेरीसी । सुनु दशमाथ नाथ
साथके हमारे कपि हाथ लंका लाइहै तो रहैगी
हथेरीसी १० ॥

गोसाईंजी कहत कि श्रीरघुवीरजीको बलसहित बालिसु
अर्थात् एक तौ रावण को कांख चापनहार बालि ताको पु
दूसरे रघुनाथजीके बलसहित ताते अंगद बाहि रावण को नहीं
गनत ताते जो बात कहत सो करेरी सी कहत कि ईश जो शिवजी
तिनकी बखशीश दीन्हीं तुम्हारी सब संपदा है ताको खीश कहे नाश
होत देखत हौं सो मेरे मनते होत कि तेरी संपदा बनी रहै ताते
तेरी ऐसी बात कहतहौं तामें तेरे रिस काहे को लागत है हे
रावण ! श्रीरघुनाथजी के साथके जे हमारे कपि हैं ते तुम्हारे
गढ़पर चाढ़िकै मढ़ जो मन्दिर दृढ़ कहे पोढ़े जे कोटके कँगूरा
तिनमें कोप करि नेकु कहे थोरहू धका देहिंगे तौ ढेलन की
ढेरी ढहि परैंगी जो लंका में हाथ लगाइहैं तौ हथेरी कहे हाथ
की गादीसी सचिक्कण चिह्नरहित लंका होइगी ताते अबहीं
कुशल है १० ॥

दूषण विराध खर त्रिशिरा कबंध बधे तालउ
विशाल बेधे कौतुक है कालिको । एकही विशिख
वश भये वीर बांकुरे सो तोहूहै विदित बलमहाबली
बालिको ॥ तुलसी कहत हित मानत न नेकु शंक मेरो

कहा जैहै फल पैहै तू कुचालिको । वीरकरिकेशरी
कुठारपानि मानि हारि तेरी कहा चली बूड़े तोसे
गने घालिको ११ ॥

खर दूषण त्रिशिरा विराध कबंधादि राक्षसन को सहजहीं
जाने बधे अरु सात वृक्ष तालके विशाल कहे बड़े भारी तिनको
एक बाणते बेधे इत्यादि कौतुक कालिह कहे थोरे दिनको है अरु
महाबली बालि जाको बल तुमहूं को विदित है भाव छः महीना
कांख में रहेहौ ऐसो बांकुरो वीर सो एक बाण के वश प्राण नाश
भये अंगदजी कहत हे रावण ! हम तेरो हित कहते हैं और तू
नेकहू शङ्का नहीं मानत तौ हमरो क्या बिगरैगो तू अपनी कुचाल
को फल पावैगो काहेते तेरी क्या चाली है तुम ऐसे अनेकन
सहस्रबाहु आदिकन को घालिकै नाशकर्त्ता ऐसे परशुराम जे वीर-
रूपी हाथिन के सिंह तेऊ श्रीरघुनाथजी के प्रतापप्रवाहमें डूबे ताते
हारि मानि शरण भये तहां तू क्या है ११ ॥

तोसों कहौं दशकन्धर रे रघुनाथ विरोध न की-
जिय बौरे । बालि बली खरदूषण और अनेक गिरे जे
जे भीति में दौरे ॥ ऐसिय हाल भई तोहिंको नतौ लै
मिलु सीय चहै सुख जौरे । रामके रोष न राखि सकै
तुलसी विधि श्रीपति शङ्कर सौरे १२ ॥

अंगद बोले कि रे दशकन्धर बावरे ! श्रीरघुनाथजी सों विरोध
न कीजिये बावरा याते कहे कि बावरा न अपर की सुनै न
आपुकी कहिबे की गति है संज्ञाते कहत समुझत सो संज्ञा देखा-
त कि बालि ऐसो बली और खरदूषणादि और सुबाहु मारीच

कबन्ध विराधादि जे जे शरणागत भूमि त्यागि अभिमान भीति मन दौराये ते गिरे भाव मानभंग है आखिर शरणागत पद पै आये तैसे हाल तेरो भयो तौ क्यों मानभंगको दुःख सहैगो सहज सुख चहु तौ श्रीजानकीजी को लैकै श्रीरघुनाथजी को शरणागत हो जो कहौ कि मैं सापराधहौं ताको कहत कि रोष न शरणागतपै श्रीरघुनाथजी के रोष नहीं है ताते शरण राखि सकैंगे कौन विधि ते जा विधि तुलसी को श्रीपति भाव दैत्यकी स्त्री है ताको अंगीकारकै महापावन कीन पुनः विधि शङ्कर शव कहे मृतक कपालादि अंगीकारकै पावन करे तोको श्रीरघुनाथजी राखिहैं अथवा जो शरणागत न जाइगो श्रीरघुनाथजी के रोष किये पर ब्रह्मा विष्णु शंकर सौ कहे सै तोको नहीं राखि सकैंगे यथा हनुमन्नाटके ॥ ब्रह्मा स्वयम्भूश्च रानना वा इन्द्रो महेन्द्रःसुरनायको वा । रुद्रस्त्रिनेत्रस्त्रिपुरान्तको त्रातुं न शक्ता युधि रामवध्यम् १२ ॥

तू रजनीचर नाथ महा रघुनाथ के सेवक को ज होहौं । है बलवान गली निज श्वान न लाज गाल बजावत सोहौं ॥ बीसभुजा दशशीश हरौं डरौं प्रभु आयसुभङ्गते जौंहौं । खेत में केहरि ज्यों गजराज दलौं दलबालि को बालक तौहौं १३ ॥

अंगदजी कहत कि एकतौ निशाचर जातिही सबल तिन नाथ कहे राजा ताहू में महा कहे राजन को राजा है श्री श्रीरघुनाथ के सेवक सुग्रीव को जनहौं यथा श्वान जो अपनी गली में बलवान होत तैसे तू अपने घर में बैठे सोहौं हमारे सामने गाल बजावत तोको लाज नहीं लागत अरु मैं तेरे घरमें हौं दूसरे प्रभुकी आज्ञा नहीं है ताते डरत हौं अरु प्रभु आयसुभंगते जो हौं न डरौं तौ तेरे बीसभुजा दशौ शीशनको हरौं कहे तोरि डारौं रणखेत में यथा सिंह गजराजन को दलत तैसे तुम्हारे दलको मैं दलौं तौ बालि को बालक हौं १३ ॥

कोशलराजके काज हौं आजु त्रिकूट उपारि लै बारिधि बोरौं । द्वै भुजदण्ड से अण्डकटाह चपेटके चोट चटाकदै फोरौं ॥ आयसुभंगते जौ न डरौं सब मींजि सभासद शोणित घोरौं । बालि को बालक जो तुलसी दशहू मुखके रणमें रद तोरौं १४ ॥

अंगद कहत कि कोशलराज जो श्रीरघुनाथजी तिनके कार्य हेत आजु मैं त्रिकूट जो लंका ताको उजारिकै समुद्रमें बोरि डारौं तामें परिश्रम नहीं काहेते महाबल के भरे मेरे जो द्वै भुजदण्ड ताकी चपेटाकी चोट सों अण्डकटाह जो ब्रह्माण्डकोश ताको चटाकदै फोरि डारौं तो लंका क्या है जो प्रभु आयसुभंगको न डरौं तो हे रावण ! तुम्हारी सभासद कहे सम्पूर्णको मींजिकै शोणित समुद्रमें घोरौं अरु समरभूमि में रावणके दशौमुख के दांत तोरि डारौं तौ बालिको बालक कहावौं यामें उत्कर्ष है १४ ॥

अति कोपसों रोप्यो है पांव सभा सब लंक सशंकित शोर मचा । तमके घननादसे वीर प्रचारिकै हारि निशाचर सैन पचा ॥ न टरै पग मेरुहुते गरुभो सो मनों महिसंग विरंचि रचा । तुलसी सब शूर सराहत हैं जगमें बलशालि है बालि बचा १५ ॥

जा समय अंगदजी अत्यन्त कोप करिकै सभामें पांव रो भयो ता समय सब लंका भरे में राक्षस शंका सहित भये शोर कहे हल्ला मचि रहाहै पांवको टारिबे हेत मेघनाद ऐसे तमके सरोष ह्वै प्रचारि कहे ललकारि कै उठावतभे बल क पचिमरे न उठा तब सब हारिगये पांव नहीं टरत सुमेरुगिरिते भयो मानो भूमि के साथै ब्रह्माजी ने रचोहै गोसाईंजी कहत सब शूर सराहत कि बलशालि कहे कठिन बलवान् एक ब को पुत्र है १५ ॥

रोप्योपांव पैजकै विचारि रघुवीर बल लागे भट मिटि न नेकु टसकतु है । तज्यो धीर धरणि धरणि धसकत धराधर धीर भार सहि न सकतु है ॥ महाब बालिको दबत दलकतु भूमि तुलसी उछलि सिंधु मसकतु है । कमठ कठिन पीठि घट्ठा परो मंदर आयो सोई काम पै करेजा कसकतु है १६ ॥

भक्तन के सदा प्रतिज्ञापाल हैं ऐसा बल श्रीरघुनाथजी विचारि प्रणकरि अंगदजी पांव रोपत भये ताके उठाइबे हेत योधा बटुरे उठावन लगे पै नेकु नहीं टसकत अर्थात् तनकु भुइँ छांड़त पांवको महाभार नहीं सहाजात ताते धरणी धैर्य छांड़िदियो ताते धरणिधर जो पर्वत ते भूमिमें धसकि गये धर जो शेषजी धैर्यवान् तेऊ भार नहीं सहि सकत काहेते महाब बालिको पुत्र जा समय पाँउ दाब्यो ता समय भूमि दलकि प्रथम धैर्य छांड़िबो कहे ताकी दशा कहत कि दलकि आई भूमिको नाम द्वैबार कहे समुद्रसों जल उछलत अरु सुमेरु

मसकत कहे फाटत जात कमठजी कच्छप तिनकी पीठिपर बैठा मंदराचलको परिगयो रहै सिंधु मथन समय सोई आजु काम आयो भाव पीठि फाटि नहीं गई परन्तु भारते करेजा कसकत कहे पिरातहै १६॥

कनकगिरिशृङ्ग चढ़ि देखि मर्कट कटक वदत मंदोदरी परम भीता । सहसभुज मत्तगजराजरणकेशरी परशुधर गर्व जेहि देखि बीता ॥ दासतुलसी समर सबल कोशलधनी ख्यालही बालि बलशालि जीता । रे कंत तृणदंत गहि शरण श्रीराम कहि अजहुँ यहि भाँति लै सौंपु सीता १७ ॥

लंका बिषे कनकको पर्वत है ताके शृंगपै चढ़िकै वानरनको समूह सेना देखि परम भयातुर ह्वै मंदोदरी रावण सों कहत कि देखो सहसबाहु ऐसो वीर जो वीरता मदमें मतवारे हाथी सम यावत् वीर तिनमें राजा ता सहसबाहु गजराज पै रण में सिंह सम ह्वै नाश करे ऐसे जो परशुराम तिनको गर्व जो अहंकार जिनके देखतही बीता कहे नाश भयो ऐसे श्रीरघुनाथजी समरमें बलवान् हैं जे बालि ऐसे कठिन बली को ख्यालही एक बाणते जीति लिये ऐसा जानिकै हे कन्त तृण जो घास ताको दांत तरे दाबि गऊ सम ह्वै ऐसे दीन वचन कहौ कि हे श्रीराम शरणपाल मैं आपकी शरणागत हौं मेरे अपराध क्षमा करो या भांति ते आजहू श्रीजानकीजी को लैके श्रीरघुनाथजी को सौंपो तो कल्याण है पैंतीस मात्रा झूलना छंद है १७ ॥

रे नीच मारीच बिचलाइ हति ताडुका भंजि शिव चाप सुख सबहि दीन्ह्यौ । सहसदशचारि खल सहित

खरदूषणहिं पठै यमधाम तैं तउ न चीन्ह्यौ ॥ मैं जु कहौं कंत सुनु मंत भगवंत सों विमुख ह्वै बालि फल कौन लीन्ह्यौ ॥ बीसभुज शीशदश खीश गये तबहिं जब ईश के ईश सों बैर कीन्ह्यौ १८ ॥

मन्दोदरी कहत कि रे कुमार्गी नीच सुनु जे श्रीरघुनाथजी मारीच को बिचलाइ कहे बाणसों उड़ाइ सिंधुपार डारेउ सुबाहु ताड़का को मारि मुनिमख राखेउ पुनः महादेवजी को धनुष तोरि सब लोकन को सुख दीन्हेउ चौदह हजार खल जो राक्षस तिन सहित खरदूषण को यमधाम कहे काल के मुख में पठाये ऐसे हाल देखि तबहूँ तैं श्रीरघुनाथजी को नहीं चीन्हेउ हे कन्त! जो मैं कहौं सो मत सुनु श्रीरघुनाथजी सों विमुख न हो काहे बालि विमुख ह्वैकै कौन फल लीन्हेउ तुरत प्राण नाश भये तैं तेरे बीसो भुजा दशौ शीश तबहीं खीश कहे नाश भयो जाहि ईशन के ईश जो रघुनाथजी तिनसों बैर कीन्हेउ यामें रामायण भरे को प्रताप सूक्ष्म रीति ते है १८ ॥

बालि दलि काल्हि जलयान पाषान किय कंत भगवन्त तैं तब न चीन्हे। विपुल विकराल भट भालु कपि कालसे संग तरु तुंग गिरिशृङ्ग लीन्हे ॥ आइगे कोशलाधीश तुलसीश जेहि छत्रमिस मौलि दश दूरि कीन्हे। ईश बकशीश जनि खीश करु ईश सुनु अजहुँ कुल कुशल वैदेहि दीन्हे १९ ॥

जाने बालि ऐसे महाबली को काल्हिही मारे अरु नावसम

पाषाण करि सेतु बांधे ऐसे भगवन्त श्रीरघुनाथजी षट्भग पूर्ण हैं ऐश्वर्य १ धर्म २ यश ३ श्री ४ वैराग्य ५ मोक्ष ६ महारामायणे ॥ ऐश्वर्येण च धर्मेण यशसा च श्रियैव च। वैराग्यमोक्षषट्कोशैः संजातो भगवान् हरिः १ पोषणं भरणाधारं शरण्यं सर्वव्यापकम्। कारुण्यं षड्भिः पूर्णो रामस्तु भगवान् स्वयम् २ ॥ तिनको हे कन्त तैं तबहूं नहीं चीन्हे भाव शरण नहीं भये अब बहुत कराल ऋक्ष भट अरु कालसम वानर ते तुंग कहे ऊँचे तरु साखू तारादि के वृक्ष पहाड़न के शृंग लीन्हे ऐसी सेना संगमें लीन्हे श्रीरघुनाथजी आइगये जे सुबेलही पर ते छत्र के मिस कहे बहाने ते तुम्हारे दशौ शीश दूरि कीन्हे भाव क्षत्र मुकुट ताटंक बाण ते भूमि में गिराइ दिये हाल काहूने नहीं जान्यो इत्यादि आपनो प्रताप जनाय तुम को शिक्षा दई है ताते ईश जो महादेव तिनकी दई बकशीश कुशल सहित सम्पदा ताको खीश कहे नाश जनि करु ईश कहे स्वामी सुनु अजहूं श्रीजानकीजी को दीन्हे कुलको कुशल है नाहीं सब नाश होइँगे १९ ॥

जाके सैनसमूह कपि को गनै अर्बुदै महाबल वीर हनुमान जानी। भूलिहै दश दिशा शीश पुनि डोलिहै कोपि रघुनाथ जब बाण तानी ॥ बालिहू गर्व जिय माहिं ऐसो कियो मारि दहपट कियो यमकि घानी। कहत मन्दोदरी सुनहि रावण मतो बेगि लै देहि वैदेहि रानी २० ॥

जिन श्रीरघुनाथजी के संग सेनासमूह है तिन कपिन को कौन गनि सकै तिनमें से एक हनुमान्जी को तुमने जानो है तिन

की समानवाले महाबली वीर अर्बुदन हैं जा समय श्रीरघुनाथ जी कोप करिकै धनुष चढ़ाइ बाण तानैंगे ता समय अभिमा ना रहैगो व्याकुलता ते दशौ दिशि भूलि हैं भाव दिशाभ्रम जाइगो पुनः तुम्हारे शीश खण्डित ह्वै भूमिपै डोलि हैं तुम्हा ऐसा गर्व बालिहू आपने जी में कियो रहै भाव वरप्रसाद अप को अजीत माने रहै ताको यमकी घानी कहे कालमुख कोल्हू मानरूप तिलनको डारि मारि दहपट कहे मानको पार अज्ञान ख सों अपनो सनेह रूप तेल काढ़ि लियो मन्दोदरी कहत कि रावण मेरो मतो सुनु श्रीजानकीजी को लैकै जल्दी श्रीरघुनाथ जी को देहु यामें कल्याण है २० ॥

गहन उजारि पुर जारि सुत मारि तव कुशल
कीश वरवैरि जाको । दूसरो दूत प्रण रोपि कोपेउ सभ
खर्ब कियो सर्व को गर्व थाको ॥ दास तुलसी सभ
वदत मयनन्दिनी मन्दमति कन्त सुनु मन्त म्हांको
तौलौं मिलु बेगि नहिं जौलौं रणरोष भयो दाशर
वीर बिरदैत बांको २१ ॥

जाको दूत कीश हनुमान्जी श्रेष्ठ वैरी भाव प्रथम वाकी पूं फूंके तापै तुम्हारो नगर जारेउ याते श्रेष्ठ वैरी ताने तुम्हारो व उजारि सुत अक्षयकुमार को मारि नगर जारि तुम्हारे देखत कुशल सहित चलो गयो पुनः दूसरो दूत अंगद सभा में कोप करि टारि की प्रतिज्ञा करि पांव रोंप्यो आपने बलके आगे तुम सहित स समाज को बल खर्ब कहे छोटा करि दियो ताते सबको गर्व थाको कहे मानमर्दन भयो गोसाईंजी कहत कि ऐसा समुझि भयसहि

न्दोदरी कहत कि हे मतिमन्द कन्त म्हांको कहे मेरो मत सुनु रद जो बाना बांको वालो वीर श्रीरघुनाथजी जौलों रण में ोध नहीं करत हैं तबलौं श्रीजानकीजी को लैकै जल्दी मिलौ कल्याण है २१ ॥

कानन उजारि अक्षमारि धारि धूरि कीन्हीं
नगर प्रजार्यो सो विलोक्यौ बलकीशको । तुम्हैं विद्य-
मान यातुधान मण्डली में कपि कोपि रोप्यौ पांउ सो
प्रभाव तुलसीश को ॥ कंत सुनु मंत कुल अंत किय
अंत हानि हातो कीजे हीयते भरोसो भुजबीश को ।
तौ लौं मिलु वेगि जौलौं चाप न चढ़ायो राम रोषि-
बाण काढ़्यौ न दलैया दशशीश को २२ ॥

अशोक वन उजारि अक्षयकुमार को मारि राक्षसन की धारि कहे सेना ताको मींजि धूरि में मिलाय दीन्हीं नगर को जराय दियो सो तौ कीश हनुमान्जी को बल भलीभांति देख्यो पुनः विद्यमान कहे देखत तुम्हारे राक्षसमण्डली में कपि अंगद कोप करि पांउ रोंप्यो काहूको टारो न टरो इत्यादि प्रभाव श्रीरघुनाथ-जी को है ताते मेरा मत सुनु हे कन्त ! तासों वैर करि कुल को अन्त कहे नाश कराय अन्त में हानि विचारि आपने बीसौ भुजन को भरोसो हातो कहे नाश कीजै भाव भुजबलको भरोसो उरमें न राखिये जबतक श्रीरघुनाथजी धनुष को नहीं चढ़ायो अरु तुम्हारे दशौ शीशन के दलनहारे बाणन को क्रोध करि तरकस ते नहीं काढ़्यो तबलौं जल्दी मिलु यामें उबार है २२ ॥

पवनको पूत देखो दूत वीर बाँकुरो जी बंक गढ़-

लंक सो ढका ढकेलि ढाहिगो । बालि बलशालि
सो कालिह दाप दलि कोपि रोंप्यो पांउ चपरि चमू
चाउ चाहिगो ॥ सोई रघुनाथ कपिसाथ पाथनाथ बाँ
आये नाथ भागेते खिरिर खेह खाहिगो । तुलसी ग
तजि मिलिबे को साज सजि देहि सीय न तो
पाइमाल जाहिगो २३ ॥

मन्दोदरी कहत कि अपने मन में विचारि देखौ तो श्रीरघु जी को दूत बांकुरो वीर पवनपूत श्रीहनुमानजी सो लङ्का बांकागढ़ को ढका कहे धक्कनसों ढकेलिकै ढाहि कहे गिराय कठिन बलवान् अंगद कालिह ही दाप दर्प अभिमान तुम्हारो कहे नाश करे जा समय चपरि कहे बिलगाइ कै कोपकरि स पांउ रोंप्यौ कोऊ न टारि सक्यो तेहिते सब तुम्हारी चमू सेना ताको चाउ जो उत्साह युद्धकरिबे को सो चाहि कहे दे गयो कि अब काहू राक्षस में युद्ध को हर्ष नहीं रह्यो व उत्साह चाही सो गो कहे जात रही ऐसे जाके दूत सोई श्रीरघुनाथ कपिसेना साथ लिये पाथनाथ जो समुद्र ताको बांधि उत लंका निकट आइ गये जो भागौगे तौ खिरिर कहे खिरफाति में परे खेह जो माटी ताको खात फिरोगे भाव बैठने का ठि न पावहुगे ताते गर्व त्यागि मिलिबे की साज कहे दांते तृण हाथ बांधि मणि हेम गज वाजि फूल फल लैकै शुद्ध मन है कै श्रीरघुनाथजी को मिलिकै जानकीजी को देहु नाहीं तो पति पाइमाल कहे मर्दित है परिवार सहित धूरि में मिलहुगे

उदधि अपार उतरत नहिं लागी बार केशरीकुमा

सो अदण्ड कैसो डांड़िगो । वाटिका उजारि अक्ष रक्ष-
कनि मारि भट भारी भारी रावरे के चाउर सों कांड़िगो ॥
तुलसी तिहारे विद्यमान युवराज आजु कोपि पाँव
रोप्यो सब छूंछे कैकै छांड़िगो । कहे की न लाज पिय
अजहूं न आये बाज सहित समाज गढ़ रांड़ कैसो
भांड़िगो २४ ॥

अपार समुद्र उतरत बार नहीं लागी हनुमानजी आइके तुम कैसे अदण्ड रहौ तिनको डांड़िकै चलो गयो सो कहत कि अशोक-वाटिका उजारि अक्षयकुमार सहित राक्षस रखवारनको मारि जे भारी भारी योधा रहे तिनको चाउर ऐसो मुष्टिका मूसरसों कांड़ि के जातभयो आजुही भाव जल्दिही अंगद कोपिकै पांव रोप्यो तुम्हारे देखत सब समाज को बल कैसे छूंछ करिकै छांड़िगयो काहू में न बल ठहरा जो पांव उठाय सके ताते राक्षसन को समाज सहित तुम्हारो गढ़ रांड़ विना पक्षी कैसो भांड़िकै चलो गयो ताहूपर बाज कहे त्यागे नहीं अभिमान अजहूं गाल बजावत हौ तो हे पिय तुम्हारे कहे सुनेकी लाज नहीं है भाव प्रभु शरण अबहीं नहीं भयो २४ ॥

जाके रोष दुसह त्रिदोष दाह दूरि कीन्हे पैयत न
छत्री खोज खोजत खलकमें । माहिषमती को नाथ
साहसी सहसबाहु समर समर्थ नाथ हेरि ये हलकमें ॥
सहित समाज महाराज सो जहाजराज बूड़िगयो जाके
बलवारिधि छलक में । टूटत पिनाक के मनाक वाम

रामसे ते नाक बिनु भये भृगुनायक पलकमें २

त्रिदोष कहे सन्निपातकी दाह जाके होत ताके प्राण तुरंत होत तैसे जा परशुराम को रोष जो क्रोधरूप त्रिदोष की दुःसह जो सहि न जाइ ताने खलक जो संसाररूप देह में प्राण क्षत्रिन को दूरि कीन्हे ताते खोजे कहे ढूंढे ते क्षत्रिन को खोज नहीं पाइयतहै भाव क्षत्रिन को मिटाइ दिये नहीं रहे अरु माहि नगरीको नाथ जो साहसी पराक्रमी सहस्रबाहु समरमें समर्थ बली मन्दोदरी कहत रावण ते हे नाथ ! हलक कहे कण्ठ की मनोमय जो वाणी है तामें हेरि कहे विचारि देखिये सहस्रबाहु ऐसा बली रहै सो तुमहूं को पकरि कै बांधि रा सोई महाराज राजनको राजा सहस्रबाहु अपनी समाजसहित गर्वरूप जहाजराज कहे भारी जहाज सोऊ जा परशुराम के रूप समुद्र के छलक में बूड़िगयो भाव सेनासहित नाश भयो परशुराम जनकपुर में पिनाक धनुष के टूटत में नेकु कहे वामता टेढाई श्रीरघुनाथजी सों कीन्हे तेई परशुराम पलक में बिना नाक के भये भाव मान भंग भयो २५ ॥

कीन्हीं छोनी क्षत्री बिनु छोनिप छपनहार कठि
कुठारपानि वीरबानि जानिकै । परमकृपाल जो नृप
लोकपालनपै जब धनु हाई ह्वै है मन अनुमानिकै
नाक में पिनाक मिसि वामता विलोकि राम रो
परलोक लोकभारी भ्रम भानिकै । नाइ दशमाथ
जोरि बीस हाथ पिय मिलिये पै नाथ रघुना
पहिंचानिकै २६ ॥

पूर्वकवित्त विषे है कि भृगुनायक विना नाक भये ताकी व्याख्या कहत कि छोनिप जो राजा तिनके छपनिहार कहे नाशनहार परशुरामजी ने क्षत्रिन को नाश करि बिन क्षत्रिय की भूमि करि दिये ऐसे कुठारपाणि कठिन वीर ताकी बानि जो स्वभाव ताको जानि कहे विचारिकै भाव अस्त्रधारी ह्वै वीरता करि निर्दयी ह्वै जीवहिंसा यह धर्म ब्राह्मण को नहीं है तौ परशुराम वेदविरुद्ध धर्म करते हैं याते दण्ड देबे योग्य हैं ऐसा जानि यह निश्चय कियो कि आगे जनकपुर में इनको दण्ड देइँगे ताको कहत कि जोलोकपालन पर परमकृपा करनहार नृपाल जो श्रीरघुनाथजी हैं ते मनमें यह अनुमाने कि जब जनकपुर में शिवको धनु जो पिनाक ताको हाई कहे टूटैगो तब परशुराम आइकै वीरता को अभिमान सहित कुवचन हमको कहैंगे अरु हम साभिप्राय वचन कहि समुझावैंगे कि वीरता धर्म तुम्हारा नहीं है तुम वृथा अस्त्र धारण किहे हौ जब न मानैंगे तब दण्ड देबे के पात्र आपु ह्वै जाइँगे तब दण्ड देइँगे इहां नाक कहे प्रतिष्ठा अर्थात् लोक प्रवादते लोक में मान बड़ाईको नाक कहते हैं सो परशुराम में जो प्रतिष्ठा है सो वीरताते है औ वीरता ब्राह्मण को वेदविरुद्ध धर्म है यह वामता परशुराम की प्रतिष्ठारूप नाक में विलोकि कहे देखिकै पिनाक मिसि कहे धनु तोरिबे के बहाने वार्ता करि वाद बढ़ायकै तब लोक में जो भारी भ्रम रहै परशुराम के कि ये अवतार हैं कि नहीं ताको भानि कहे नाश करिके अर्थात् परशुरामको धनुष खैंचि भ्रम मिटाय दिये पूर्ण परब्रह्म अवतार की निश्चय कराये पश्चात् परलोक कहे अव्याहतगति स्वर्ग पाताल जाबेकी सामरस्ती ताको नाशकरि विना शक्ति करिदिये (यथा वाल्मीकीये) इमां वा त्वद्गतिं राम तपोबलसमार्जिताम् । लोकानप्रतिमान् वापि हनिष्यामीति

मे मतिः॥ १ ॥ जडीकृते तदा लोके रामे वरधनुर्धरे । निर्वीर्यो जा
दग्न्योसौ रामो रामसुदैक्षत॥ २ ॥ मन्दोदरी कहत रावण सों हे पि
ऐसे श्रीरघुनाथजी को पहिंचानिकै तिनके पांयन को दशौ मा
भूमि में नवाय बीसौ हाथ जोरिकै मिलिये शरण जाइये त
उबार है २६ ॥

कह्यो मत मातुल विभीषणहू बार बार अंचल पसारि पिय पांय लैलै हौं परी । बिदित विदेहपु नाथ भृगुनाथगति समय सयानी कीन्हीं जैसी आ गौं परी ॥ वायस विराध खर दूषण कबन्ध बालि वै रघुवीरके न पूरी काहूकी परी । कन्त बीस लोचन विलोकिये कुमन्तफल ख्याल लंका लाई कपि रांड़ कीसी झोपरी २७ ॥

मातुल कहे मामा मारीच औ विभीषणहू यही मत बार बा कहे औ हे पिय ! महूं अंचल पसारि बार बार तुम्हारे पांय लैलै परी कि श्रीरघुनाथजी सों विरोध न करौ काहेते राजनीतिहू में है कि अपनो असमय विचारि सबल शत्रुको मिलि चलिये ताको दृष्टान्त देखावत कि विदेहपुर में भृगुनाथजी परशुराम तिनकी जैसी गति भई सो सबको विदित है कि अपनो असमय विचारि बचिबेकी जैसी गौं आइपरी तैसी समय अनुकूल सयानी करी भाव जब विचारि देखे कि श्रीरघुनाथजी सों हम न जीतैंगे तब अस्त्र दै शरण है विनती करै अरु जो विमुख है हठवश शरण न आये ते नाश भये यथा जयन्त विराध खर दूषण कबन्ध बालि इत्यादि वैर कीन्हें रघुनाथजी सों तिन काहू की हठ पूरी नहीं परी तैसे अपनो

जानिये कि रांड़ की झोपड़ी सम तुम्हारी लंका को ख्यालही में कपि हनुमानजी कोप करि आगि लगाइ दई हे कन्त ! आपने कुमन्त्रको फल बीसौ नेत्रन सों देखिये २७ ॥

रामसों साम किये नितहै हित कोमलकाज न कीजिये टांठे । आपनि सूझि कहौं पिय बूझिये जूझबे योग न ठाहरु नाठे ॥ नाथ सुनी भृगुनाथकथा बलि बालि गयो चलि बात के साठे । भाइ विभीषण जाइ मिल्यो प्रभु आयपरे सुनि सायर कांठे २८ ॥

मंदोदरी कहत कि श्रीरघुनाथजी सों साम कहे मिलापही किहे सदा भलो है ताते जो कार्य कोमलता ते बनै तामें टाँठे कहे कठोरता न कीजिये हे पिय ! आपहू मनमें बूझिकै विचारिये मैं अपनी सूझि कहे समुझते कहती हौं कि युद्ध किहेते ठाहरु कहे ठौरही नाठे कहे नाश है ताते यह समय युद्ध करिबे योग्य नहीं है काहेते हे नाथ ! परशुराम की कथा प्रसिद्ध सुनी है कि शरण है आपु को बचाय गये अरु बली बालि अभिमानते आपनी बात साठे कहे पकरे रहे कि हम न मिलैंगे ते चलिगये प्राण नाश भये इत्यादि भय दिखाय अब भेद दिखावत कि तुम्हारे घर में भी फूटनि भई कि तुम्हारे भाई विभीषण रघुनाथजी को मिले अरु सुनियत है कि सायर जो समुद्र ताके कांठे कहे किनारे पर प्रभु आइ परे भाव निकट आइगये २८ ॥

पालिबेको कपि भालु चमू यम काल करालहु कोपहरी है । लङ्कसे बङ्क महागढ़ दुर्गम ढाहिबे दाहिबे को कहरी है ॥ तीतर तोम तमीचरसेन समीरको सूनु

बड़ो बहरी है । नाथ भलो रघुनाथ मिले रजनीच सेन हिये हहरी है २९ ॥

सुजननको रक्षा करिबो दुष्टनको दंड देबो दोऊ राजा को चाहि ताको कहत कि यमराज सहित कराल कालहू के कोपको हरणहा कपि ऋक्षन की सेना पालिबे कही रक्षा करिबेको समर्थ है पुन असुरनको दंडदाता कैसे कि लंका ऐसे बंक कहे टेढ़े महादुर्ग गढ ढाहिबे कहे गिराइबे को अरु दाहिबे कही फूंकि देबेको कहा कहे कहर करनेवाले जुल्मी हैं तमीचर कहे राक्षसन की ज सेना तोम कहे समूह ते सब तीतरपक्षी सम हैं तिनको नाश करिबे स समीरसूनु हनुमान्जी बड़ो बहरी बाज समहै ताते मंदोदरी कहत रावणसों हे नाथ ! श्रीरघुनाथजी के मिलिबे ते तुम्हारो भलो है काहेते जाके दूत तुम युद्ध ठान्यो है सो रजनीचरन की सेना हृद ते हहरी कहे डरते सहमि गई है २९ ॥

रोषे रणरावण बोलाये वीर बानइत जानत जे रीति सब संयुग समाजकी । चली चतुरंगचमू चपरि हने निशान सेना सराहन योग रातिचरराजकी। तुलसी विलोकि कपि भालु किलकत ललकत लखि ज्यों कंगाल पातरी सुनाजकी । रामरुख निरखि हर्ष्यो हिय हनुमान मानों खेलवार खोली शीशताज बाजकी ३० ॥

इहांतक मंदोदरी के वचनन में श्रीरघुनाथजी को प्रताप वर्ण जब कहे कि तुम्हारी सेना हृदय ते हहरि गई सो सुनि रावण क्रोधित ह्वै युद्ध करिबे हेत जे युद्ध को बाना बांधे हैं ऐसे वीर

को बोलाये जे युद्ध की समाज की सब रीति जानते हैं ते सब युद्ध हेत सजे हाथी घोड़ा रथ पैदलादि चतुरंगिणी सेना चपरि कहे फरचाईकै चली निशान जो जुझाऊ बाजा हने कहे बजावते भये रातिचरराज जो रावण ताकी सेना तौ सराहिबे योग्य हुई है काहेते सदा युद्ध में मन बढ़े तीक्ष्ण अस्त्र धारण उछाहते चली आवत तिनको देखि कपि भालु युद्ध की हर्ष भरे किलकत अरु कैसे ललकत जैसे सुंदर अनाज की परोसी पातरी देखि कंगाल भूखा भोजन हेत धावत तासमय युद्ध करिबे को रुख रघुनाथजी को देखि हनुमान्जी कैसे हर्षित भये मानों खेलवार जो शिकारी ताने बाज के शीश को ताज कहे टोपी उतारि आंखी खोलि पक्षी देखाइ छोड़ि दियो तैसे निशाचरन पै धाये ३० ॥

साजिकै सनाह गजगाह सउछाह दल महाबली धाये वीर यातुधान धीरके । इहां भालु बन्दर विशाल मेरु मन्दरसे लिये शैल शाल तोरि नीरनिधितीरके ॥ तुलसी तमकि तकि भिरे भारी युद्धक्रुद्ध सेनप सराहे निज निज भट भीरके । रुण्डनके झुण्ड झूमि झूमि झुकरे से नाचैं समर शुमार शूर मारे रघुवीरके ३१ ॥

यातुधान धीर जो रावण ताके जे महाबली वीर हैं ते सनाह बखतर तनमें साजि अरु जीन गजगाह आदि घोड़न के साजि सवार है उछाह के भरे सब रण को दल आगे धावत भयो अरु इहां सुमेरुगिरि सम विशाल ऊंचे भारी ऋक्ष वानर ते नीरनिधि कहे समुद्र तीर के पहाड़ और शालादि के वृक्ष तोरि लैकै तमकिकै धाये अपनी जोड़ी तकि तकि क्रोध करि भारी भारी युद्ध में भिरे

ता समय जे सेनापति हैं ते अपनी भीर के योधन को सराहे औ ललकारते भये तिन में शुमार कहे जे गन्तीवारे राक्षस जे रघुना जी के मारे ते शीश गिरयो धर ठाढ़ो रहगयो ऐसे जे शूर तिन रुण्डन के झुंड समूह ते यथा पवन लागे ते वृक्ष झकोरत तैं झुकरे से कहे झकोरा खाये से झूमि झूमि रणअजिर में ना रहे हैं ३१ ॥

तीखे तुरङ्ग कुरङ्ग सुरङ्गनि साजि चढ़े छटि छै छबीले । भारी गुमान जिन्हें मन में कबहूं न भये र में तन ढीले ॥ तुलसी लखि केहरि केहरि के झप पटके सब शूर सलीले । भूमि परे भट घूमि कराह हांकि हने हनुमान हठीले ३२ ॥

जिन निशाचरन के मन में भारी गुमान है जिनके तन रण भूमि में कबहूं ढीले नहीं परे ऐसे छटे जे छैल छबीले वीर हैं ते तीखे कहे तीक्ष्ण कुरंग कहे मृगसम वेगवान् सुन्दर रंगवाले तुरंग जे घोड़ा तिनको साजिकै सवार भये ते सब शूरन को लखिकै केहरि कहे केशरी ताके पुत्र केहरि कहे सिंहसम हनुमान हठीले सहित लीला सहज में कूदि फांदिकै हांक दैकै झपटि जिन को पटकि पटकि निशाचर भटन को हने ते घूमि घूमि गि भूमि परे कहरत हैं भाव छटे छटे वीरन को ढूंढ़िकै मारे ३२ ॥

शूर सजोइल साजि सुबाजि सुसेलधरे बगमेल चले हैं । भारी भुजा भरि भारी शरीर बली विजयी सब भांति भले हैं ॥ तुलसी जिन्हें धाय धुकै धरणी धरणीधर धीर धकान हले हैं । ते रणतीक्ष्ण लक्ष्मण

लाखन दानि ज्यों दारिद दाबि दले हैं ३३ ॥

जे निशाचर शूर सजोइल कहे बरछा आदि के करतब में हुशियार ते सुन्दर घोड़न पर जीनआदि साजि सवार है सेल कहे बरछा सुन्दर लिहे बगमेल कहे बागे मिलाये पांति बांधे आगे धावत भये जिनकी भुजदण्डैं अरु देहैं भारी पुष्टता ते भरी ऐसे बली औ विजयी कहे संग्राम जीतनेवाले सबभांति ते भले हैं जिनके धाइकै चलेते धरणी जो भूमि सो धुकै कहे धकधकाय के कंपित होत औ धरणिधर जो पर्वत धीर कहे ऊंचे ते धकन ते हलि उठत ऐसे तीक्ष्ण निशाचर लाखन को लषणलाल कैसे दाबिकै दलिडारे यथा महादानी दान दैकै दारिद को दलि डारत इहां लक्ष्मणजी दानी दान स्थाने बाणन ते दाबि लोक दारिद सम निशाचरन को दलिडारे ३३ ॥

गहि मन्दर बन्दर भालु चले सो मनो उनये घन सावन के । तुलसी उत झुण्ड प्रचण्ड झुके झपटैं भट जे सुरदावनके ॥ बिरुझै बिरुदैत जे खेत अरे न टरे हठि बैर बढ़ावनके । रण मारमची उपरी उपरा भले वीर रघूपति रावन के ३४ ॥

या दिशि ते मन्दर जो पहाड़ तिनको गहिकै वानर भालु चले सो मानों सावन मासके समूह मेघ उनये कही सघन छाइ गये उतते सुरदावन जो रावण ताके प्रचण्ड जो घन के समूह झुंड ते झपटे दोऊ दल बिरुझायकै लड़त बिरुदैत कहे जे वीरता को बाना बांधे अरु हठि करि बैर बढ़ावनहारे ते रण खेत में अड़े हैं टरते नहीं काहे ते भले हैं वीर रघुपति औ रावण के ताते

उपरी उपरा कहे हांकी हांका करत अपनी जीति हेत रणभूमि महामार मचि रही है ३४ ॥

शर तोमर सेल समूह पँवारत मारत वीर निशाचर के । इतते तरु ताल तमाल चले खर खएड प्रचएड महीधर के ॥ तुलसी करि केहरिनाद भिरे भट खड्ग खगे खपुवा खरके । नख दंतन सों भुजदएड बिहएडत मुएडसों मुएड परे झरके ३५ ॥

निशाचर रावण के जे वीर हैं ते शर जो बाण तोमर बरछा सेल जो सांगादि पँवारत कहे दूरिते चलावत अरु गदा तरवारि त्रिशूलादि मारत हैं इत वानरन की सेना ते ताल तमालादि वृक्ष खर कहे तीक्ष्ण प्रचएड कहे भारी खएड कहे शिला महीधर जो पर्वतन के समूह चलत भये गोसाईंजी कहत कि जा समय केहरि कहे सिंहनाद करि भट भिरे खड्ग कहे तरवारि के खगे कहे लागेते खपुवा जो कादर ते खरके कहे भागे नखनसों दांतन सों भुजदएड बिहंडत कहे काटि डारत मूड़ तोरि बहाय मारे ते मूड़ झरि टूटि भूमि में परत हैं ३५ ॥

रजनीचर मत्त गयंद घटा बिघटै मृगराज के साज लरै । झपटै भट कोटि मही पटकै गरजै रघुवीर की सौंह करै ॥ तुलसी उत हांक दशानन देत अचेतभे वीर को धीर धरै । बिरुझो रण मारुत को बिरुदैत जो कालहु कालको बूझि परै ३६ ॥

निशाचर मत्त हाथिन के घटा कहे समूह बिघटै कहे नाश करिबे हेतु हनूमान्जी मृगराज कहे सिंह के साजते लड़ते हैं सो कहत कि श्रीरघुनाथजी की सौगंद करि गर्जिकै झपटि झपटि कोटिन निशाचर भटन को भूमि में पटकत हैं गोसाईंजी कहत कि उत रावण हांक देत ललकारत सुनि कौन ऐसो वीर है जो धैर्य धरि सकै ताते सब वानर वीर अचेत भये ता समय बिरदवालो वीर मारुत को पुत्र जो कालहू को काल देखि परत रणभूमि में बिरुझाय कै युद्ध करत है इहां मृगराज के साज में निशंकता कहे रघुवीर की सौंह में हृदय में सबलता करे गर्जिबे में विभव बिरुझाबे में हठ ३६ ॥

जे रजनीचर बीर विशाल कराल विलोकत काल न खाये । ते रणरोर कपीशकिशोर बड़े बरजोर परे फल पाये ॥ लूम लपेटि अकाश निहारिकै हाँकि हठी हनुमान चलाये । सूखिगे गात चले नभजात परे भ्रमवात न भूतल आये ३७ ॥

जे निशाचर वीर विशाल कहे बड़े भारी जिन की करालता विलोकिकै काल नहीं खाइ सक्यो इहां करालता देह की नहीं संभावित होत इहां इष्टदेवन सों वर पायबे की करालता जानिये यथा विराध अस्त्र करि न मरो तब रघुनाथजी जियत ही भूमि में गाड़ि लिये बाल्मीकी में प्रसिद्ध है यथा मकराक्ष लक्ष्मणजी को पकरि लिये अस्त्र सों नहीं मर्यो तब आपनी देह लक्ष्मणजी बढ़ाय दियो मकराक्ष के अंग फाटि गये यथा मेघनाद ऐसे जे निशाचर तपस्या करि इष्टदेवन सों तपको फल पाये ते काटे मारे पटके नहीं मारिसके याते बड़े बरजोर रहे तेई रोर कहे कठिन रण में कपीश केसरीकिशोर के संमुख परे ते मारे पटके न मरे

तौ हनुमान् हठी जो विना मारे न छोड़ै तिनकी लूम जो पूँछ
लपेटिकै आकाश निहारि भाव देवविमान में न लागि जा
आकाश देखि हांकि कहे ललकारिकै तेई निशाचरन
आकाश को चलाय दिये ते अमरात में परे सदा चलेजात आ
में घुमावनहार पवन में परे सदैव घूमत मरिकै देहैं सूखिगई
भूमि में नहीं आये यामें बुद्धि बल वर्णन है ३७ ॥

**जो दशशीश महीधर ईशको बीसभुजा खु
खेलनिहारो । लोकप दिग्गज दानव देव सबै सह
सुनि साहस भारो ॥ वीर बड़ो बिरुदैत बली अज
जग जागत जासु पँवारो । सो हनुमान हन्यो मुठि
गिरिगो गिरिराज ज्यों गाजको मारो ३८ ॥**

ईश जो महादेव तिनको महीधर कैलास ताको जो दश
बीसौ भुजन करिकै खेल खुलिकै खेलनहार है भाव प्र
कैलास उठाये पुनः जाको साहस कहे पराक्रम भारी सुनि
लोकप इन्द्रादि दिशा गज दैत्य देवतादि सबै सहमि जात का
बिरुदैत कहे वीरता को बानावालो बड़ो बली वीर जाके
प्रताप को पँवारा रामायणादि ते अजहूँ जग में जागत कहे प्रका
है ताही रावण के श्रीहनुमानजी मुष्टिका मारे सो कैसे
गयो यथा गाजके मारे गिरिराज पर्वतन को राजा हिमाचल
सुमेरु गिरिजाय यामें हनुमान्जी अतिबलवान् करि गने गये ३८

**दुर्गम दुर्ग पहारते भारे प्रचण्ड महाभुजदण्ड बने
लष्य में पष्यर तिष्यन तेज जे शूर समाज में गा
गने हैं ॥ ते बिरुदैत बली रणबांकुरे हांकि हठी ह**

**मान हने हैं । नाम लै राम देखावत बन्धु को घूमत
घायल घाय घने हैं ३९ ॥**

दुर्ग कहे कोट से दुर्गम कहे अजीत अरु पहाड़सम भारी पुष्टांग
जिनके महाभारी पुष्ट भुजदण्ड करिकै प्रचंड बने हैं लष्य कहे
लाखन वीरनमें पष्यर कहे श्रेष्ठ प्रबल तिष्यन कहे तीक्ष्ण तेज-
मान इत्यादि प्राकृत भाषा है जे योधा शूरन की समाज में गाज
कहे वज्रसम गने जाते हैं भाव जापर चोट करैं ताको नाशकारि
दें ऐसे बिरुदैत कहे वीरता के बानावाले रणबांकुरे बली वीर
निशाचरन को हाँकि कहे ललकारिकै हठी हनुमान् ने हने कहे
मारे तिनकी देहन में घने कहे बहुतेरे घायल ह्वैगये ते घायल
रण में घूमत हैं तिनको नाम लै लै श्रीरघुनाथजी बंधु जो
श्रीलक्ष्मणजी तिनको देखावत कि यह फलाना राक्षस है ताको
हनुमान्जी ने मारा है ३९ ॥

**हाथिनसों हाथी मारे घोड़े घोड़ेसों संहारे रथनिसों
रथ बिदरनि बलवान की । चंचल चपेट चोट चरण
चकोट चाहैं हहरानी फौजैं भहरानी यातुधान की ॥
बारबार सेवक सराहना करत राम तुलसी सराहैं रीति
साहेब सुजान की । लांबी लूम लसत लपेटि पटकत
भट देखौ देखौ लषण लरनि हनुमान की ४० ॥**

युद्ध में हनुमान्जी की फुरतई वर्णन यथा हाथिन को पकरि
हाथिन पै पटके घोड़ेन सों मारि घोड़ेन को नाश करे रथनसों
रथन को बिदारनि तूरिडारनि बलवान् हनुमानजी की चंचल
हाथन के चपेट जो चटकना की चोट से नख चरन को चकोटा करि

मांस नोचि लेना इत्यादि को चाहैं कहे देखै ताते यातुधान ज
राक्षस तिनकी सेना हहरानी कहे घबरानी ताते भहरानी क
यूथ फूटि फूटि भागन लगी गोसाईंजी सराहना करत सुजा
साहेब की रीति को कि सदा जनके गुण गाहक हैं यथा
देखि दोष कबहुँ न उर आने । सुनि गुनि साधुसमा
बखाने ॥ को साहेब सेवकहि नेवाजी । आपु समान साज स
साजी ॥ पुनः भगवद्गुणदर्पणे ॥ दोषादर्शी गुणग्राही भावग्राह
च राघवः ॥ ताते सेवक जो हनुमान्जी की बारबार सराह
श्रीरघुनाथजी करते हैं कि देखौ देखौ लषणलाल हनुमान् कै
कैसी लरनि बांकी है कि जा समय निशाचर भटन को लपे
भूमि में पटकत ता समय लंबी लूम जो पूंछ सो कैसी लसत क
शोभित होत ४० ॥

दबकि दबोरे एक बारिधि में बोरे एक मगन मही
में एक गगन उड़ात हैं । पकरि पछारे कर चरण
उखारे एक चीरि फारि डारे एक मींजि मारे लात हैं ।
तुलसी लषण राम रावण विबुध विधि चक्रपाणि
चण्डीपति चण्डिका सिहात हैं । बड़े बड़े बानइत वी
बलवान बड़े यातुधान यूथप निपाते बातजात हैं ४१

एकन को दबकि कहे घुरिकि दिये ते दबोरे कही दबिकै लु
रहे एकन को बहाय दिये ते समुद्र में बूड़ि गये एक मगन क
मूर्च्छित करि भूमि में डारिदये एकन को बहाय दिये ते आकाश
उड़े जात एकन को पकरि पटकि डारे एकन के हाथ पांव उखा
डारे नखन सों चीरि एकन के पेट फारिडारे एकन को लात

ारि मींजि डारे बड़े वीरताको बाना बांधे बड़े बली वीर जे
धानन के यूथपति हैं तिनको वातजात जो हनुमान्जी जा स-
य निपाते नाश करे तिनको देखि लक्ष्मणजी श्रीरघुनाथजी
औ रावण सब देवता ब्रह्मा विष्णु महादेव चंडिकादि सब हनुमान्-
जीको बल देखि सिहात ललचात हैं इहां हनुमान्जी की वीरता
खि अनेक सिहावते अद्भुत वीररस है ४१ ॥

प्रबल प्रचण्ड बरिबण्ड बाहुदण्ड वीर धाये यातु-
धान हनुमान लियो घेरिकै । महाबलपुञ्ज कुंजरारि
ज्यों गरजि भट जहां तहां पटके लँगूर फेरि फेरिकै ॥
ारे लात तोरे गात भागे जात हाहाखात कहै तुलसीश
ाखि रामकी सों टेरिकै । ठहर ठहर परे कहरि कहरि
उठै हहर हहर हर सिद्ध हँसे हेरिकै ४२ ॥

प्रबल कहे अति बलवान् प्रचण्ड कहे प्रतापवान् बरिबण्ड
कहे तेजवान् पुष्ट हैं भुजदण्ड जिनके ऐसे निशाचर वीर ते हे वाले
ड़ि धाय कै हनुमान्जी को घेरिलिये तिनको देखि महाबल-
ञ्ज जो हनुमान्जी कुंजरारि कहे सिंह ज्यों गर्जि कै लंगूर चारिउ
दिशि फेरि लपेटि लपेटि निशाचर भटन को जहां तहां पटकि
ारे अरु लातन मारि मारि अंग तूरिडारे जे बचे ते हाहा कहे
िहौरी करत भागे जात अरु टेरि टेरि कहत कि तुलसीश कहे
नुमान् तोको रघुनाथजी की शपथ हमको राखिले जे मारे गये
ठहर कहे ठौर ठौर घायल परे कहरि कहरि उठत इत्यादि
ौतुक हेरि कहे देखिकै हर महादेव अरु सिद्धगण हहर कहे
ायकै हँसत कि बड़े गुमान ते दौरे रहैं ताको फल भली भांति
यो इहां वीरता विपरीति ते हासरस भयो ४२ ॥

जाकी बांकी बीरता सुनत सहमत शूर जाकी आ
अबहूं लसत लंक लाहसी । सोई हनुमान बलवा
बांको बानइत जो है यातुधान सेना चले लेत थाहसी
कंपत अकंपन सुखाय आतिकायकाय कुम्भऊक
आय रह्यो पाइ आहसी । देखे गजराज मृगराज ज
गराजि धायो वीर रघुवीर को समीरसूनु साहसी ४३

वज्रांग आदि तीय बलवान् समर निशंक ऐसी बांकी बी
जा हनुमान् की सुन जे रणशूर हैं तेऊ सहमि कहे डेरायजात
जाके प्रताप रूप आंचते अबहूं लंका लाह सम लसत कहे दी
उठत सोई बांको बानावालो बलवान् हनुमान् जो निशाचरन
बल जोहै कहे देखबे हेतु सेना की थाह ऐसी लेत रणमें व
सों युद्ध करत चले तहां और की को कहै जो रण में कबहुं
कांप्यो ऐसो जो अकंपन सोऊ हनुमान्जी के युद्ध में कांपि
महाभारी है देह जाकी सोऊ आतिकायकी काय जो देह सो
में सूखिगई कुम्भकर्ण महाबली युद्ध में सम्मुख आयो सो हनुमा
जी के मुष्टिका की चोट पाइ आह करि रहिगयो इत्यादि स
बलकी थाह पाइके रघुवीरजी को दूत वीर साहसी कहे परा
समीर सूनु हनुमान् गार्जि निशाचरनपै कौन भांति धायो
हाथिन को देखि सिंह धावत है यामें सबल निशंकता वर्णन है ४

मत्त भटमुकुट दशकन्ध साहस शैल शृ
बिद्दरानि जनु वज्रटांकी । दशन धरि धरणि चिक्क
दिग्गज कमठ शेष संकुचित शांकित पिनाकी

चलत महि मेरु उच्छलत सायर सकल विकल विधि
बधिर दिशि विदिशि झाँकी । रजनिचरघरनि घर
गर्भअर्भक स्रवत सुनत हनुमानकी हांकबांकी ४४ ॥

हनुमानजी की हांक कैसी है मत्त कहे बल करिकै मदान्ध जे
भट हैं तिनको मुकुट कहे शिरोमणि है दशकन्ध ताको साहस जो
शैल सोई है पर्वत को शृंग ताके बिदरानि कही काटिबे को मानो
वज्रको टांकी है पुनः जा हांक को सुनि सभीत है दांतन सों
पृथ्वी धरिकै दिशागज चिकार करत कच्छप शेष संकुचित कहे
सिकुरिजात त्रिलोक नाशकर्ता पिनाकी जो महादेव सोऊ शंका-
सहित होत सुमेरु आदि पर्वत सहित भूमि डोलि उठत सायर
जो समुद्र ते सकल उछलत हैं जाको सुनि व्याकुल बधिर है
ब्रह्मा भागिबे हेतु दशौ दिशा झांकत कि कहां जाइये ऐसी बांकी
हांक हनुमान् जी की है जाको सुनतही निशिचरन के घरन में
घरनी जो स्त्री हैं तिनके गर्भ के अर्भक जो बालक ते स्रवत कहे
गिरि परत हैं यामें सबलता वर्णन है दशमात्रा झूलना छन्द है ४४॥

कौनकी हाँकपर चौंकि चण्डीश विधि चंड कर
थकित फिरि तुरग हाँके । कौनके तेज बल सीम भट
भीमसे भीमता निरखि करिनयनढाँके ॥ दास तुलसीश
के बिरद बरणत विदुष वीर विरुदैत बर बैरि धाँके ।
नाक नरलोक पाताल कोऊ कहत किन कहा हनु-
मान से वीर बाँके ४५ ॥

सर्वोपरि वीरता हनुमानजी की देखावत कि चंडीश कहे महादेव

विरंचि ब्रह्मा कौन की हांकपर चौंके इनको चौंकब पूर्व के का
में लिखि आये हैं चण्डकर सूर्य कौन की हांकपर थकित है थं
फिरि तुरंग जो घोड़े तिनको हांके इनहू को थँभिबो याही स
संभावित होत अथवा जन्म होत ही रथ सहित सूर्यन को लीलि
याते सदैव भय माने हैं जब बाल अवस्था में विद्या पढ़िबे
हहाय कै पहुँचैं तब रविरथ थँभिजाय पुनः हांके पर घोड़े
अरु भीमसेन ऐसे भट बलसींव कहे मर्य्यादा महाबली ते कौ
भीमता कहे भयंकर तेजको निरखि आंखी मूदिलिये भाव
भारत में अर्जुन के रथ ध्वजापर कराल रूपते गर्जे तासमय ह
मान्जी को देखि डराइ भीम आंखी मूँदि लिये अथवा जब ग
मादन पर फूल लेबे हेत अर्जुन भीमादि गये तब भयान
देखिबे को कहे तब हनुमान्जी भयंकर रूप देखाये तब ह
भीम आंखी मूँदि लिये यह पद्मपुराण में प्रसिद्ध है गोसा
कहत कि तुलसीश जो हनुमान्जी तिनको विरद कहे वीरता
यश ताको विदुष जो पंडितजन सदा वर्णन करत कि बिरुदैत
वीरता की विरदावलीवाले जो वीर वर कहे श्रेष्ठ वैरी राव
तिनपै हनुमान्जी की धांक लागत है धांक रुआब ग्रामीण बो
में प्रताप को कहत हैं स्वर्ग में देवता मृत्युलोक में मनुष्य पा
में नागादि तीनहूं लोक में हनुमान्जी की समता को बांको
कहां है भाव नहीं है अरु जो होइ तौ भूत काल पुराणादिक
कोऊ काह्वन कहत अथवा वर्तमान में कोऊ काहे नहीं कहत है ४

यातुधानावली मत्त कुञ्जरघटा निरखि मृगराजज
गिरितेटूट्यौ । विकट चटकन चोट चरण गहि पट
महि निघटि गय सुभट सत सबको छूट्यौ ॥ द

तुलसी परत धरणि धरकत झुकत हाटसी उठत जंबुकानि
लूट्यौ । धीर रघुवीर के वीर रणबाँकुरे हाँकि हनुमान
कुलि कटक कूट्यौ ४६ ॥

मत्त कुञ्जर कहे हाथी घटा कहे समूहन को निरखि मृगराज जो सिंह गिरि कहे पर्वतते ज्यों टूट्यौ कहे निशंक वेग ताते चोट करेउ त्यों यातुधान जो निशिचरन की अवली कहे पंक्ति बंधी सेनापै हनुमान्जी टूटे काहू को चटकना की विकट कहे कठिन चोट मारे काहू को पद गहि भूमिपै पटकि डारे ते निघटि कहे नाश भये तिनको देखि जे बाकी रहे ते सुभटन को सत कहे शूरता सबकी छूटिगई अधीर है भागे गोसाईंजी कहत कि निशाचरन को पटकत ताकी चोट परत भूमि धरकत कहे शंकित है झुकत कहे हालत है अथवा शंकित है निशाचर झुकत गिरि गिरि परत भागे जे घायल रहिगये तिनको मांस जम्बुक शृगालादि लूटि लिये यथा बाजार उठे अन्नादि जो पदार्थ परो रहत ताको भूखे लूटि लेत हैं धैर्यमान श्रीरघुवीर के वीर रण में बांकुरे हनुमानजी ने निशाचरनकी कुलि कटक जो सेना ताको कूटि डारे ४६ ॥

कतहुँ विकट भूधर उपारि अरिसैन बरष्षत ।
कतहुँ वाजिसों वाजि मर्दि गजराज करष्षत ॥ चरण
चोट चटकन चकोट अरिउर शिर बज्जत । विकटकटक
बिद्दरन वीर वारिद जिमि गज्जत ॥ लंगूर लपेटत पटकि
महि जयति राम जय उच्चरत । तुलसीश पवननंदन
अटल युद्ध क्रुद्ध कौतुक करत ४७ ॥

श्रीहनुमान्जी को रणकौतुक वर्णन करत कतहूं वृक्ष पहार

उखारि शत्रु की सेनापर वर्षा करत कहूं घोड़न सों घोड़ा कहूं हाथिन को कर्षत कहे खैंचि कै मर्दन करत कहूं चरण की चोट छातीपर कहूं चटकनाको चकोटा शत्रुन के शीश पै बज्जत कहे लागत कठिन सेना निशाचरनकी विदारन हेत वीर हनुमान्जी मेघसम गर्जत हैं निशाचरनको लंगूर में लपेटि भूमिपै पटकि श्रीरघुनाथजी की जयजयकार करत तुलसी के ईश पवननंदन अटल जो नहीं टरनेवालेते युद्ध में क्रोधते कौतुक करत हैं ४७ ॥

अङ्ग अङ्ग दलित ललित फूटे किंशुकसे हने भट लाखन लषण यातुधानके। मारिकै पछारिकै उपारि भुजदण्ड चण्ड खण्डि खण्डि डारे ते बिदारे हनुमानके ॥ कूदत कबंधके कदंब बंबसी करत धावत देखावत हैं लाघौ राघौ बानके । तुलसी महेश विधि लोकपाल देवगण देखत विमान चढ़े कौतुक मशानके ४८ ॥

यामें लक्ष्मणजी के मारे हनुमानजीके मारे श्रीरघुनाथजीके मारे राक्षसनके चिह्न वर्णन करत जिनके अंग अंग दलित कहे टूटे कटे घावनते रुधिर मांस की लालिमाते किंशुक जो पलाश कैसे वृक्ष ललित फूले से देखात ऐसे राक्षसन के लाखन बीरन को लक्ष्मणजी हने कहे मारे हैं जिनको पटकि कै मारि प्रचण्ड भुजदण्डन को उचारि खण्डि कहे तूरि तूरि भूमि में डारे हैं ते हनुमान्जी के बिदारे हैं जे बिना शिर के कबन्ध कदम्ब कहे समूह बम्बसी शब्द करत कूदत धावत हैं यह राघव बाण की लाघव कहे शीघ्रता है भाव ऐसे वेग ते बाण मारे जो शीश उड़ि

गये पर धर ठाढ़ नाचिरहो ऐसा कहि देवहू गण मृतक राक्षसन के चिह्न देखावत गोसांईजी कहत कि शिव ब्रह्मादि लोकपाल इन्द्रादि देवता विमानन पर ते रण मशान को कौतुक देखतहैं ४८ ॥

लोथिनसों लोहूके प्रवाह चले जहां तहां मानहु गिरिन गेरू झरना झरत हैं। शोणित सहित घोर कुंजर करारे भारे कूलते समूल वाजि विटप परत हैं ॥ सुभट शरीर नीरचारी भारी भारी तहां शूरनि उछाह कूर कादर डरत हैं। फेकरि फेकरि फेरु फारि फारि पेट खात काक कंक बालक कोलाहल करत हैं ४९ ॥

रुधिरकी सरिता कवि वर्णन करत हैं लोथिनसों लोहू की प्रवाह धार बहत सो मानों पर्वतनते गेरू के झरना झरत हैं औ और रुधिर सहित भयङ्कर हाथिन के समूह तेई भारी करारे हैं जब नदी बाढ़त तब किनारे के वृक्ष जरसहित उचरि परत हैं तैसे सजर वृक्षसे घोड़े गिरत हैं जे सुभटन के शरीर धारा में परे तेई नीरचारी कहे मीन मगर घरियाल हैं इत्यादिक भयङ्करता देखि तहां जे शूर वीर हैं तिनके मनमें युद्धकी उछाह है भाव वीर रसते पूर्ण हैं अरु जे कूर कहे कपटी कादरहैं ते डरत हैं फेरु जे सियार ते फेकरि कहे बोलि बोलि पेट फारि फारि खात यथा सरिता में बालक कोलाहल करत तथा काक औ कंक कहे कुही वा गीध ते कोलाहल करत ४९ ॥

ओझरीय झोरी कांधे आंतनिकी सेल्ही बांधे मूड़ के कमण्डल खप्पर किये कोरिकै। योगिनि जमाति जोरि झुण्ड बनी तापसिसी तीर तीर बैठी सो समर

सरि खोरिकै ॥ शोणितसो सानि सानि गूदा खात सतुवासे एक प्रेत पियत बहोरि घोरि घोरिकै । तुलसी वैताल भूत साथ लिये भूतनाथ हेरि हेरि हँसत हैं हाथ हाथ जोरिकै ५० ॥

समरसरि पै मेला वर्णन पेटकी ओझरी काढ़ि झोरी सी कांधे में डारे आंतनकी सेल्हीसी गरे में बांधे मुंडन के कमंडल लिहे कोरी कहे काटि खोपड़ी अर्थ को खप्पर लिहे ऐसी साजते योगिनिनकी जमाति के झुण्ड जुरे ते खोरि कहे नहाइ नहाइकै समरसरिके तीर २ तपस्विनी सी बैठी हैं ते शोणित जो रक्तरूप शर्बत में खोपड़ी को गूदा सानि सानि सतुवा से खात हैं कोऊ एक प्रेत बहोरि कहे फिरि फिरि घोरि घोरि शर्बत से रुधिर पियत हैं तहां जमातिन में कोऊ मालिक होत इहां भूतनाथ जो भैरव हैं ते वैताल भूतन को साथ लिहे समाज को अघाइ खात देखि २ नेहपूर्वक भूतन सों हाथ पकरि के हँसते हैं ५० ॥

रामशरासन ते चले तीर रहे न शरीर हड़ावरि फूटी । रावण धीर न पीर गनी लखि लैकर खप्पर योगिनि जूटी ॥ शोणित छीट छटान छुटी तुलसी प्रभु सोहै महाछवि छूटी । मानों मरकत शैल विशाल में फैलि चली बर बीरबहूटी ५१ ॥

श्रीरघुनाथजी के शरासन कहे धनुष ते ऐसे वेगते तीर छूटे जो शरीर में न रहे हाड़ फोरि निकसि गये सो पीर को रावणने नहीं गनी काहेते धैर्यवान् है तहां कोऊ भाव करिकै जो प्रभुके सम्मुख जीव होत सो अनित्य जानि देहको दुःख सुख नहीं गनते

हैं तहां रावण वैर भाव करि प्रभु के सम्मुख है याते देहकी पीर नहीं गनी तिन घावनते रुधिर की धारा चली ताको लखिकै पान करिबे हेतु खप्पर लै लै योगिनिन के झुण्ड जुटते भये सोई रुधिरकी धार छूटी ताकी छीटन की छटा करि प्रभु सोहत भये श्याम शरीर पै अरुण छीटन ते रण समय पाई जो महाछवि छूटी कहे फैलि रही ताकी कवि उत्प्रेक्षा करत मानों रणरूप वर्षाकाल पाइ मरकतमणि के विशाल शैल कहे पर्वत के ऊपर श्रेष्ठ बीरबहूटी फैलि चली हैं यामें युद्ध वीररसमय रूप वर्णते रुधिर छींट भूषित है ५१ ॥

कानन वास दशानन सों रिपु आनन श्रीशशि जीति लियो है । बालि महाबलशालि दल्यो कपि पालि विभीषण भूप कियो है ॥ तीय हरी रणबन्धु पर्यो पै भर्यो शरणागत शोच हियो है । बांहपगार उदार कृपाल कहां रघुवीर सों वीर बियोहै ५२ ॥

एकतौ कानन कहे वनमें वास जो स्वाभाविक उदासीन दूसरे रावण ऐसो बली सों शत्रुता ताहू पर जिनको आनन कहे मुख ऐसो प्रसन्न प्रकाशमान है जा श्री कहे शोभा सों चन्द्रमाको जीति लियो है महाबलशालि कहे कठिन बली बालि को दलिकै कपि जो सुग्रीव तिनको दया करि पाले अरु उदार दानी है विभीषण को भूप कियो तहां तिया जो श्रीजानकीजी हरिगईं अरु बन्धु श्रीलक्ष्मणजी घायल परे ताको शोच नहीं केवल शरणागत विभीषण को शोच हृदयमें भरोहै ऐसे बांहको पगार कहे देवाल जाकी आड़ पाये काहू चोटकी भय नहीं रहत तैसे श्रीरघुनाथ जाको बांह देत ताको सब भांति अभय करि राखत

ऐसो उदार कृपालु अर्थात् दान दया वीर श्रीरघुनाथजी के सम
बियो कहे दूसरो कहां है यामें दान दया वीर दोऊ वर्णनहै ५२

**मानी मेघनादसों प्रचारि भिरे भारी भट आपने
आपने पुरुषारथ न ढीलकी। घायल लषणलाल
सुनि बिलखाने राम भई आश शिथिल जगन्निवा
दीलकी॥ भाईको न मोह छोह सीयको न तुलसीश
कहै मैं विभीषण की कछु न सबीलकी। लाज बां
बोलकी निवाजेकी सँभारसार साहेब न रामसे बला
लेउँ शीलकी ५३॥**

युद्धमें मानी मेघनाद सों जे भारी भट हैं हनुमान् जामवानादि ते प्रचारिकै भिरे युद्धमें अपने पुरुषार्थ करिबे में काहूने ढील न करी काहू सों जीति न गयो पीछे लक्ष्मणजी युद्ध करत में शक्ति के लागे घायल भये सो हाल सुनि जगत्व्यापक श्रीरघुनाथजी बिलखाने रोदन करत में लंका जीतनो विभीषण को राज्य देनो जानकीजीको लावनो इत्यादि आश दिलते शिथिल कहे ढीली परिगई तहां भाई को मोह नहीं है काहेते सम्मुख मरण रण में क्षत्रियको धर्म है औ जानकीजी को छोह नहीं है काहेते पतिव्रता के प्राण पतिके संगही रहत औ विभीषण को राज्य देबेको कहो सो वचन पूरा नहीं भयो ताते श्रीरघुनाथजी बार बार यही बात कहत कि जो बात कही विभीषण को सो कछु सबील कहे पूरी कछु न करी इत्यादि अपने बोलकी लाज अरु बांह कहे अपने भरोसा की लाज है जिनको पुनः निवाजे कही अपने दीन्हे की सँभार है जिनको ऐसे साहबन के सारस सुसाहेब श्रीरघुनाथजी

की समान दूसरा नहीं है तिनको शील जो है ताकी बलाइ मैं लेउँ भाव गोसांईजी कहत कि शीलकी जो बाधा होइ सो मेरे ऊपर आवै जामें प्रभु को शील स्वभाव निर्विघ्न बना रहै ५३॥

**लीन उखारि पहार विशाल चल्यो त्यहि काल
विलम्ब न लायो। मारुतनंदन मारुतको मनको
खगराजको वेग लजायो॥ तीखी तुरा तुलसी कहतो
पै हिये उपमा को समाउ न आयो। मानों प्रतक्षण
पर्वतकी नभ लीक लसी कपि यों धुकि धायो ५४॥**

सजीवनिमूरि हेतु विशाल पर्वत द्रोणागिरि उखारि विलम्ब नहीं लगायो ताही काल में मारुतनन्दन ऐसी वेगताते चले जो मारुत को औ मनको औ गरुड़ तीनिहूकी वेगताको लजाये तीखी तुरा कहे तीक्ष्ण वेगता को तुलसी कहतो परन्तु समान उपमा को समाउ उरमें नहीं आयो भाव हनुमान्जीकी समता को वेग त्रिलोक में दूसरा नहीं है तौ कौनकी उपमा दीजिये ताते उत्प्रेक्षा करत मानों पर्वत की लकीर खिंचीसी आकाश में प्रत्यक्ष लसी अर्थात् दिव्य औषधिन करि ज्वलित पर्वत जात श्याम आकाश में अग्निकीसी लकीर शोभित प्रसिद्ध देखानी या भांति हनुमान्जी धुकि कहे शीघ्रता ते धावत भये ५४॥

**चल्यो हनुमान सुनि यातुधान कालनेमि पठयो
सो मुनि भयो पायो फल छलिकै। सहसा उखारो है
पहार बहु योजनको रखवारे मारे भारे भूरि भट दलिकै॥
वेग बल साहस सराहत कृपालु राम भरतकी कुशल
अचल लायो चलिकै। हाथ हरिनाथके बिकाने रघु-**

नाथ जनु शीलसिन्धु तुलसीश भलो माने भलिकै ५५ ॥

सजीवनमूरि हेतु हनुमान्जी चले सो हाल सुनिकै यातुधा रावणने कालनेमिको पठायो सो मुनि बनिकै छलै ताको फ पाये भाव हनुमान्जी छल जानिगये तुरतही मारिडारे जब द्रोण गिरि लेन लगे तहां इन्द्र के रखवार रहे ते मना किये तिनक हनुमान्जी मारे ते इन्द्र को खबरि दिये ते भारी भट बहुत धा तिनको दलिकै बहुयोजन को पहाड़ उखारि लिये सहसा लै शीघ्र आइगये इत्यादि शीघ्रता को बल इन्द्र के रखवारन क जीते इत्यादि साहस कहे वीरता को बल इत्यादिक दोऊ भां के बलकी प्रशंसा कृपालु श्रीरघुनाथजी करिकै कहत कि भर की कुशल औ अचल जो पर्वत दोऊ को हनुमान्जी चलिकै ला हरिनाथ जो हनुमान्जी तिनके हाथ रघुनाथजी मानहुँ बिकाइग काहेते तुलसी के ईश शील समुद्र हैं ताते भलीभांति ते हनुमान्जी को भलो सेवक करि माने यामें कृतज्ञ गुण देखायो है ५५ ॥

बाप दियो कानन भो आनन शुभानन सों वैरी भो दशानन सो तीयको हरण भो । बालि बलशालि दलि पालि कपिराजकै विभीषण निवाजि सेतु साग तरण भो ॥ घोर रारि हेरि त्रिपुरारि विधिहारे हिय घायल लषण वीर बानर बरण भो । ऐसे शोकमें त्रिलोककै विशोक पलही में सबहीके तुलसीके साहब शरण भो ५६ ॥

राज्य देनेको कहि पिता वनवास दियो सो अशुभता मनमें न

व्यापी आनन शुभानन भयो मंगलमय मुखचन्द्र प्रसन्न बनो रहो ताहू में त्रिलोकविजयी दशानन ऐसो वैरी भयो जा वैरते श्री-जानकीजी को हरण भयो ऐसेहू शोक में धैर्य न गयो महाबलवान् बालिको मारि शरणागत सुग्रीव को पालि कपिन को राजा कियो औ शरणागत विभीषण को नेवाजे लंकनायक कियो दुस्तर समुद्र में सेतु बांधि उतरे लंका में घोर युद्ध देखि शिव ब्रह्मा हृदय में हारि माने कि रावण को जीतनो दुर्घट है काहे ते लक्ष्मण ऐसे वीर घायल है वानरवर्ण भये यथा वानर घायल परे तथा भये अथवा घायल है जौन वर्ण लक्ष्मणजी भये ताही वर्ण सब वानर वीर अधीर हैगये ताते त्रिलोक शोकित भयो ऐसे शोक में त्रिलोक को पलही में श्रीरघुनाथजी विशोक कियो भाव सजीवनिमूरि मँगाय लक्ष्मण-जी को जिआय पुनः रावण को मारि विभीषण को राज्य दै सबको अभय करि दियो ऐसे तुलसी के साहब श्रीरघुनाथजी सबके शरणपाल भये यामें धृतिशरणपाल गुण है ५६ ॥

कुम्भकरन्न हन्यो रण राम दल्यो दशकन्धर कन्धर तोरे । पूषणवंश विभूषण पूषण तेज प्रताप गरे अरि ओरे ॥ देव निशान बजावत गावत धावतगो मन भावत भोरे । नाचत वानर भालु सबै तुलसी कहि हारे हहा भैया होरे ५७ ॥

कुम्भकर्णको रण में मारे कंधर कहे ग्रीवा तोरि रावण को दले पूषण सूर्यवंश के भूषण पूषण श्रीरघुनाथ सूर्यन के तेज प्रतापते ओरे कहे आसमानी पत्थर सम अरि रावणादि गरे कहे गलिगये ताते आनन्द है देवता निशान बाजा बजायकै नाचत हैं काहे ते

रावण की भय करिकै भागत रहैं सो धावत गो अर्थात् भगिहा
मिटी ताते परस्पर कहत कि हेरे भाइउ अब मनभावत भयो
गोसाईंजी कहत कि वानर भालु सब नाचत हैं अरु जे निशाचा
बाकी रहे तिनसों ब्यंग निरादर कहत कि भैया हारे हारे हा
ऐसा कहि हहायकै हँसत हैं ५७ ॥

मारे रण रातिचर रावण सकुलदल अनुकूल दे मुनि फूल वर्षतु हैं। नाग नर किन्नर विरंचि हरि ह हेरि पुलक शरीर हिय हेतु हर्षतुहैं॥ वाम ओर जानकी कृपानिधानके विराजैं देखत विषाद मिटै मोद सरसतु हैं। आयसु भो लोकनि सिधारे लोकपाल सब तुलसी निहाल कैकै दिये सरखतु हैं ५८ ॥

रातिचर राक्षसन को दल कुलसहित रावण को मारे ताते अनुकूल कहे प्रभुकी ओर मन सम्मुख करिकै इन्द्रादि देव अ मुनि प्रभुपै फूलनकी वर्षा करते हैं नाग जे पातालवासी नर जे मृत्युलोकवासी किन्नर जे स्वर्गलोकवासी औ ब्रह्मा विष्णु शिवादि के मनमें हर्ष भयो ताहेतुते प्रभु को निरखि प्रेम ते देह पुलकि आई काहेते कृपानिधान जो श्रीरघुनाथजी तिनके वाम ओर श्री जानकीजी विराजमान देखत सबके मनको विषाद मिटि गयो ताते सबके मनमें मोद सरसत कहे बाढ़त भयो गोसाईंजी कहत कि अभय को सरखत कैकै सब को निहाल किये कि अब तुमको काहूकी भय नहीं है आनन्द ते अपने घरमें बसौ ऐसो आयसु श्रीरघुनाथजी को भयो ताको सुनि जयजयकार करिकै सब लोक पाल अपने अपने लोकनको सिधारे ५८ ॥

सवैया ।

पुरुटालयपादपकल्पसुमूलसिंहासनरत्नन भानुसमः ।
सुखदास्थित पूषण पूषणवंशप्रकाशक नाशक शोकतमः ॥
गहि चामर छत्र सखा चहुँघा छबिसिंधु कथं नर वक्तुक्षमः ।
मनुजोजभवार्चितश्रीचरणं नित जानकि जानकिनाथ नमः १ ॥

इति श्रीरसिकलताश्रितकल्पद्रुमसियवल्लभपदशरणागतबैजनाथ-
विरचितेकवितावलीरत्नदीपिकाटीकायां लङ्काकाण्डंसम्पूर्णम् ॥

उत्तरकाण्ड ।

पीतांबरतडिद्भासं श्यामवर्णकलेवरम् ॥
कृपावारिधरं रामं वन्दे त्रैतापनाशनम् १ ॥

देवनकी भीति सहलोकन अनीति मेटि आये रण जीति लिये साथ खास दासनै। बाजत निशान पुर धूम आसमान देव साजि कै विमान आय अग्रपाकशासनै॥ छत्र चमर व्यजन अनुज लिये बैजनाथ वेद गान सोहत सुदीपद्रक्ष बासनै। राजनके राज महाराज राजा रामचन्द्र जानकी समेत आजु राजत सिंहासनै ॥

बालिसे वीर बिदारि सुकण्ठ थप्यो हरषे सुर बाजने बाजे। पलमें दल्यो दाशरथी दशकन्धर लङ्क विभीषण राज विराजे॥ राम सुभाव सुने तुलसी हुलसे अलसी हमसे गलगाजे। कायर कूर कपूतनकी हदतेऊ गरीबनिवाज निवाजे १॥

बालि ऐसे महावली वीरको बिदारि कहे मारिकै सुकंठ

सुग्रीवको थाप्यो भाव कपिनायक कियो पीछे श्रीजानकीजी कै
खबरि लेनेको भूलि गये ताहूपर प्रभु दयालु बनेरहे काहेते जनके
अवगुण प्रभु देखते नहीं यह सुहृदतागुण है यथा ॥ जेहि जन
पर ममता अरु छोहू । तेहि करुणाकर कीन न कोहू ॥ प्रमाण
भागवते हनुमद्वाक्ये ॥ न जन्म नूनं महतो न सौभगं न वाक्
बुद्धिर्नाकृतिस्तोषहेतुः ॥ तैर्यद्विसृष्टानपि नो वनौकसश्चकार सख्ये
बत लक्ष्मणाग्रजः १ ॥ ऐसो सौहार्दतागुणके बलते सुग्रीव को
हाल सुनि देवता हर्षित ह्वै बाजा बजाये अभिप्राय यह कि पीछे
भूलिजानो देवतनहूं को स्वभाव है पुनः प्रभु रावण को पल
में दलिकै लंका की राज्यपर विभीषण को विराजमान किये अर्था
शत्रुको भाई राक्षस घरते निरादर ह्वै कै शरण आयो ताको सख
मानि मिले पुनः लंकनायक किये यह सौशीलतागुण प्रभुको
यथा ॥ कोटि विप्र अघ लागै जेही । आये शरण तजौं नहिं तेही
प्रमाण भगवद्गुणदर्पणे ॥ शोणितोत्सिक्तसर्वाङ्गंक्रव्यादश्च जटा
यम् ॥ अङ्कमारोप्य पप्रच्छ सञ्चरकारमृतं नृपः १ ॥ ताते
राजसी स्वभाववाले आलसी हैं ते सौहार्दगुण को सुमिरि हुल
हृदय में आनंद भये गोसाईंजी कहत हैं कि जे हम ऐसे मलीन
ते प्रभुकी सुशीलता गुण के बलते गल कहे खुशी ह्वैकै गर्जत भ
काहेते कायर कहे जे भक्ति क्रिया में कादर हैं राजसी स्वभाववाले
कामासक्त इन्द्रादि औ क्रूर कहे छली मारीचादि औ कपूत को
जे पिता को धर्म त्यागै यथा रावणादि ऐसनहूं को गरीबनिवाज
श्रीरघुनाथजी निवाजे कहे स्वधाम दियो १ ॥

वेद पढ़ै विधि शम्भु सभीत पुजावन रावण सो
नित आवैं । दानव देव दयावने दीन दुखी दिन

दूरहिते शिर नावैं ॥ ऐस्यहु भाग भगे दशभालते जो
प्रभुता कवि कोविद गावैं । राम से वाम भये त्यहि
वामहि वाम सबै सुखसंपति लावैं २ ॥

जा रावण के समीप सडर ह्वैकै ब्रह्मा वेद पढ़िबे हेतु आवत हैं
अभिप्राय कि प्रपौत्र दूसरे आशीर्वादी यहि मायाते वेद सुनावत
जामें धर्म पर मन आवै अरु कुमार्गी बली जानि डरत हैं अरु
महेश सभीत सदा पुजावनहेतु जात जामें शीश अब न काटै औ
देवता दानव दयावने कहे रावणकी दया के प्यासे ते दीन हैं
ताते दीन कहे अति दुःखी ह्वै दूरिहीते शीश नावत जामें राजी रहै
ऐसो भारी भाग्य रावणकी एक ठौर को कहै दशौ माथन में दश
ठौर ब्रह्मा की लिखी सो हरिविमुखताते दशौ माथन ते भागि
गई ऐसी प्रभुकी प्रभुता है ताको कवि कोविद गावत लोक में
प्रसिद्ध है कि श्रीरघुनाथजी सों वाम कहे विमुख भये तेहि विमुख
जीवकी यावत् सुख संपत्ति है सो सब विमुख ह्वै जात यथा ॥
राम विमुख त्राता नहिं कोपी । भुजा उठाय कहौं प्रण रोपी ॥
प्रमाणं रुद्रयामले ॥ ये नराधमलोकेषु रामभक्तिपराङ्मुखाः ॥ जपं
तपं दया शौचं शास्त्राणामवगाहनम् । सर्वं वृथा विना येन शृणुध्वं
पार्वतिप्रिये २ ॥

वेद विरुद्ध मही मुनि साधु सशोक किये सुरलोक
उजारयो । और कहा कहौं तीय हरी तबहूं करुणाकर
कोप निवारयो ॥ सेवक छोहते छांड़ि क्षमा तुलसी
लख्यो राम सुभाव तिहारयो । तौलौं न दाप दल्यो
दशकन्धर जौलौं विभीषण लात न मारयो ३ ॥

मुनि साधुन को सशोक कहे दुःख दै पाप बढ़ाय भूमि भार किये औ देवलोक को ता उजारिहीं करि दिये ऐसे वेद विरुद्ध कहे अधर्ममार्ग में चलो ताके अवगुण और कहांतक कहो तीय श्रीजानकीजी को हरि लैगयो तहाँ तक प्रभु कोप नेशो काहेते करुणाके खानि हैं गोसाईंजी कहतु हैं कि हे श्रीरघुनाथजी तिहारो स्वभाव मैं जान्यों कि सेवक के द्रोह कहे मया ते क्षमा छांड़ि देतेहौ काहेते जबतक विभीषणके लात नहीं मारयो तबतक दशकन्धर को दाप कहे अहंकार नहीं दल्यो भाव जन को दुःख नहीं देखिसकत यह करुणा गुण है ३ ॥

शोकसमुद्र निमज्जत काढ़ि कपीश कियो जग जानत जैसो । नीच निशाचर वैरीको बन्धु विभीषण कीन्ह पुरन्दर ऐसो ॥ नाम लिये अपनाय लियो तुलसी सो कहो जग कौन अनैसो । आरत आरति भंजन राम गरीबनिवाज न दूसर ऐसो ४ ॥

बालिके डरते शोक कहे दुःखरूप समुद्र में निमज्जत कहे बूड़त में काढ़िकै सुग्रीव को जा भांति कपिनायक कीन सो रामायणद्वारा सब जानत हैं नीच स्वभाव निशाचर जाति दुष्ट पुनः वैरी रावणको बंधु ऐसे विभीषण को ऐसो कहे सौ इन्द्रसम ऐश्वर्यवान् कीन्हे गोसाईंजी कहत अपना को कि तुलसी सा अनइस जगत् में दूसरा कौन है सोऊ प्रभुकी शरणह्वै नाम लियो ताहू को प्रभु तुरंत ही आपन करि लियो ताते आरत जो दुःखित ताके दुःख को भञ्जनहार श्रीरघुनाथजी गरीबनेवाज हैं दूसरो नहीं है ४ ॥

मीत पुनीत किये कपि भालुको पाल्यो ज्यों काहु न बाल तनूजो । सज्जनसींव विभीषण भो अजहूं विलसै वरबन्धु वधूजो ॥ कौशलपाल विना तुलसी शरणागतपाल कृपाल न दूजो । कूर कुजाति कपूत अघी सबकी सुधरै जो करै नर पूजो ५ ॥

श्रीरघुनाथजी जैसे चंचल पशु कपि भालुन को पवित्र मित्र करि पाले तैसे कोऊ अपने तनते उत्पन्न बालक को नहीं पालत है अरु प्रभुकी कृपाते सज्जनता के सींव कहे मर्यादा विभीषण श्रेष्ठ बंधुसम जिनकी सज्जनता बन्धु बधूसम अजहूं विलसत है भाव श्रेष्ठ बन्धु बधूसम अजहूं प्रभु पालत हैं गोसाईंजी कहत हैं कि जे पुरवासिन को संग लै परधामको गये ऐसे कोशलपाल श्रीरघुनाथजी बिना शरणागत पाल कृपाल दूसरा नहीं है ताते चहै कुमार्गी कूर होइ चहै कुजाति होइ चहै पिताते विमुख कपूत होइ चहै पातकी होइ इत्यादि कर्मन की संदेह न करौ जो नर प्रभुको पूजो इष्ट मानि शरण आवो तौ सबकी सुधरैगी यामें सौलभ्यता गुण देखायो है ५ ॥

तीयशिरोमणि सीय तजी ज्यहि पावक की कलुखाई दही है । धर्मधुरन्धर बन्धु तज्यो पुरलोगन की विधि बोलि कही है ॥ कीश निशाचर की करणी न सुनी न विलोकि न चित्त रही है । राम सदा शरणागत की अनखौही अनैसी सुभाय सही है ६ ॥

जिन अतिव्रत धर्मरूप अग्निते कलुखाई कहे दाहकता जराई

शीतल करि अग्निमें प्रवेशह्वै कुशलपूर्वक निसरि आईं ऐसी प
ब्रता तियनमें शिरोमणि जानकीजी तिनको त्यागेउ अरु ध
धुरीण भक्तन में अग्रणीय ऐसे बन्धु लक्ष्मणजीको त्यागे य
नैमित्य लीला है पुरलोग अवधवासिनको बोलाइ भक्ति ह
हेतु अनेक सिखावन दियो उत्तरकाण्ड में अरु सुग्रीव विभीषण
जो करणी भौजाई में रत होना इत्यादि को रघुनाथजी न सु
न देखे न चित्तमें राखे काहे ते शरणागत की अनखौहे द
देबे योग्य अनैसी मना करिबे योग्य वार्ता करै ताको श्रीरघुनाथ
सहजही स्वभावते सहि लेते हैं ६ ॥

अपराध अगाध भये जनते अपने उर आनत ना
हिंनजू । गणिका गज गीध अजामिलके गनि पातक
पुंज सिराहिं न जू ॥ लिये बारक नाम सुधाम दि
ज्यहि धाम महामुनि जाहिं न जू । तुलसी भजु दीन
दयालहि रे रघुनाथ अनाथन दाहिन जू ७ ॥

शुद्ध शरणागती श्रीरामनामको माहात्म्य प्रभुकी दीन दयालु
जे अपने उरमें नहीं विश्वास आनत भाव जे शरण ह्वै प्रभुको न
भजत तेई जन अपराध के अगाध समुद्र ह्वै गये देखौ गणि
व्यभिचारिणी गज मदांध गीध मांसाहारी अजामील कुमा
इत्यादि के पाप गने ते नहीं सिराहिं असंख्य रहैं तेऊ बारक क
एकबार नाम लीन्हे ते प्रभु सुन्दर धाम में वास दीन्हें जा धाम
अनेकन यत्न करि महामुनिनको जाइबो कठिन है सो पतितन
देत गोसाईंजी कहत हैं रे मन ऐसे दीनदयालु श्रीरघुनाथजी
भजु जे अनाथन के सदा दाहिन हैं भाव दीनन को दया क
अपन्याय लेते हैं यह प्रभुकी दयालुता उदारता गुण है ७ ॥

प्रभु सत्य करी प्रहलाद गिरा प्रकटे नरकेहरि खम्भ
महा । झषराज ग्रस्यो गजराज कृपा ततकाल विलम्ब
किये न तहां ॥ सुर साखी दै राखी है पाण्डुवधू पट
लूटत कोटिक भूप जहां । तुलसी भजु शोचविमोचन
को जन को प्रण राम न राख्यो कहां ८ ॥

मुहिमां तोहिमां खड्ग खम्भमां इत्यादि प्रह्लाद की वाणी प्रभु
ने सांची करी अर्थात् महाकराल रूप नरसिंह खम्भा फोरि प्रगट
है हिरण्यकशिपु को मारे झखराज जो ग्राह जा समय गजराज
को ग्रस्यो पकरि लियो बूड़त में पुकार किये तहां तत्काल कहे
तुरतही प्रभु कृपा करि उबारे नेकहू विलम्ब नहीं कियो जहां
कोटिन राजनकी समाज में दुश्शासन पट लूटत कहे खैंचत में
पाण्डुवधू द्रौपदी की लज्जा राखी भाव चीर बढ़ाय दियो इत्यादि
को देवता साखी हैं गोसाईंजी कहत हैं कि ऐसे शोचविमोचन
प्रभुको भजु जनको प्रण श्रीरघुनाथजी कहां नहीं राखते हैं यामें
भक्त प्रतिज्ञापाल गुण है जा समय गोसाईंजीकी रुचि विचारि
कृष्णचन्द्र धनुर्धारी भये ता समय को यह कवित्त है ८ ॥

नर नारि उघारि सभामहँ होत दियो पट शोच
हर्यो मन को । प्रहलाद विषाद निवारण वारण तारण
मीत अकारणको ॥ जो कहावत दीनदयाल सही जेहि
भार सदा अपने प्रणको । तुलसी तजि आन भरोस
भजै भगवान भलो करिहैं जनको ९ ॥

नर अर्जुन की नारी द्रौपदी सभा में उघारि होत में पट बढ़ाय

देकै वाके मनको जो शोच लाज जीवको सो हरि लियो महाराज मनकी विषादके निवारणहार वारण कहे गजके तारणहार ऐसे अकारण कहे विना प्रयोजनके मीत प्रभु जे सांचे दीनदयालु कहा वत हैं जिनको अपने प्रणको पूरा करिबेको भार है ताते और को भरोसो छांड़ि भजै ता जनको भगवान् भलो करिहैं सदा भगवान कहे षट् ऐश्वर्य युक्त सामरस्त यथा महारामायणे ॥ ऐश्वर्येण च धर्मेण यशसा च श्रियैव च ॥ वैराग्यमोक्षषट्कोणैः संजातो भगवान् हरिः ६ ॥

ऋषिनारि उधारि कियो शठ केवट मीत पुनीत सुकीर्ति लही । निजलोक दियो शबरी खगको कपि थाप्यो सो मालुम है सबही ॥ दशशीश विरोध सभीत विभीषण भूप कियो जग लीक रही । करुणानिधि को भजु रे तुलसी रघुनाथ अनाथ के नाथ सही १० ॥

ऋषिनारि अहल्या को शाप ते उद्धार कियो शठ मूर्ख केवट नीचजाति निषाद को मीत करि पुनीत कहे पवित्र कियो जाने सुकीर्ति लही संसार में सुंदर कीर्ति पाई शबरी औ खग कहे गीध इनको अपनो धाम दिये कपि सुग्रीव को थाप्यो कपिनायक कियो सो सब जग जानत है दशशीशके विरोधते सभीत कहे डराय कै शरण आयो ता विभीषणको लंकाको भूप कियो जाकी लीक कहे निशानी रामायण में कथा सदा बनी रही गोसाईजी कहत हैं कि रे मन ऐसे करुणानिधिको भजु श्रीरघुनाथजी अनाथ के नाथ सही कहे सांचे हैं यह प्रणतपाल गुण है १० ॥

कौशिक विप्रवधू मिथलाधिप केशव शोच दल्यो पलमाहे । बालि दशानन बन्धुकथा मुनि शत्रु सुसाहब शील सराहै ॥ ऐसी अनूप कहै तुलसी रघुनायक की अगुणी गुण गाहे । आरत दीन अनाथन को रघुनाथ करै निज हाथन छाहै ११ ॥

कौशिक जो विश्वामित्रकी यज्ञ पूर्ण करे विप्रवधू अहल्याको शाप ते उद्धार किये धनुष तोरि मिथिलाधिप को प्रण राखेउ इत्यादि सबके शोच पलक मात्रमें दले बालि दशानन के बन्धु अर्थात् सुग्रीव विभीषण को अकंटक राज्य दियो इत्यादि कथा मुनि सुसाहब श्रीरघुनाथजी को शीलमयी स्वभावकी सराहना शत्रुभी करते हैं यथा कुम्भकर्ण कहै ॥ श्यामगात सरसीरुह लोचन । देखौं जाइ तापत्रयमोचन ॥ बन्धु वंश तैं कीन उजागर । भजेहु राम शोभा सुखसागर ॥ अगुणी कहे गुण रहितन के गुणन को ग्राही यथा वानर ऋक्ष चञ्चल पशु यथा ॥ प्रभु तरुतर कपि डारपर ते किया आपु समान ॥ पुनः ॥ ये सब सखा सुनहु मुनि मेरे । भये समर-सागर के बेरे ॥ ऐसो गुणरहितन के गुणग्राही विरदावली श्री-रघुनाथजी की ताको तुलसीदास अनूप कहते हैं समता योग्य दूसरो नहीं है काहेते आर्त जे दुःखित हैं यथा गज द्रौपदी दीन जे गरीब हैं यथा शबरी कोल भिल्लादि अनाथ जिनके दूसरो नाथ नहीं है यथा सुग्रीव विभीषण इत्यादि पै श्रीरघुनाथजी अपने हाथन छांहीं करत जामें कोई आंचर लागै यथा अम्बरीष ११ ॥

तेरे ब्यसाहे ब्यसाहत औरनि और ब्यसाहिकै बेचनहार । व्योम रसातल भूमि भरे नृप कूर कुसाहब से तिहुँ खारे ॥ तुलसी त्यहि सेवत कौन मरै रजते लघु

को करै मेरुते भारे । स्वामि सुशील समर्थ सुजान तोसों तुही दशरत्थ दुलारे १२ ॥

तेरे ब्यसाहे कहे दया वित्तदै जिनको मोल लिये भाव जि जीवनको शुद्ध करि भक्तिमें आरूढ़ करे ते औरन को शुद्ध क यथा ॥ नारद उपदेश दै यथा भरत ॥ जो न होत जग भ भरत को । अचर सचर चर अचर करतको ॥ इत्यादि अपनो भा देखाय और को भावीक करत औ और जे ब्रह्मादि देवता हैं ब्यसाहिकै बेचनहारे हैं भाव प्रथम अपनो मानि वरदान दि पीछे जैसो कर्म करै तैसो फल औरन के हाथ दिवायो यथ हिरण्यकशिपु रावण भस्मासुर ताते देवतादि जे स्वर्गमें हैं नागा जे पाताल में राजादि जे भूमि में हैं इत्यादि त्रैलोक्य में भरे हैं क्रूर कहे कपटी कुसाहब हैं तैसे तिहूंको खारे बने रहत भाव क्रोधित रहत हैं गोसाईंजी कहत हैं कि तिन कुसाहबनकी से करि क्रोध सहि सहि को मरै काहे ते रज ते लघुजीवन को मेरु भारी कौन करि सकत है यथा बाल्मीकि निषाद शबरी गीधा तुच्छ जीव जिनकी कृपाते महान् भये ऐसे स्वामी सुशील जे ऊं नीच नहीं विचारत शबरी के जूठे फल खाये गीधको अकोरा बैठारे समर्थ कहे जे बालि रावण को मारि सुग्रीव विभीषण को थाप्यो अथवा निषादादि के पाप नाश करि सुकृती करि दि सुजान कहे चतुर इत्यादि गुण सहित हे दशरथदुलारे तेरे समान तूही है दूसरा नहीं है १२ ॥

यातुधान भालु कपि केवट विहंग जो जो पाले नाथ सद्य सो सो भयो काम काज को । आरत अना

दीन मलिन शरण आये राखे अपन्याय सो स्वभाव महाराज को ॥ नाम तुलसी पै भोंड़े भागते कहायो दास किये अंगीकार ऐसे बड़े दगाबाजको । साहब समर्थ दशरत्थके दयाल देव दूसरो न तोसों तुहीं आपने कि लाज को १३ ॥

यातुधान विभीषण भालु जामवान् कपि सुग्रीवादि केवट निषादादि विहंग जटायु इत्यादि हे नाथ ! जिन जिनको पाले सो सो सद्य कहे तुरतही तुम्हारो काम करिबे योग्य है गये भाव सब आश भरोसा छांड़ि शुद्ध शरणागती धर्मपर आरूढ़ है गये आर्त गजादि अनाथ सुग्रीवादि दीन शबरी आदि मलीन कोलभिल्लादि जे जे शरण में आये तिनको आपन बनाय शरण में राखे ऐसो कृपाशीलमयी शरणपाल स्वभाव महाराज को है यथा ॥ कोटि विप्र अघ लागहिं जेही । आये शरण न त्यागहुँ तेही ॥ सनत्कुमारसंहितायाम् ॥ सत्यसन्धं जितक्रोधं शरणागतवत्सलम् । सर्वक्लेशापहरणं विभीषणवरप्रदम् ॥ गोसाईंजी कहत हैं कि पवित्र पूज्य तुलसी ऐसो मेरो नाम है अरु कर्मनते अपूज्य अपावन भांग सम भोंड़ो कहे अपावन हौं ऐसो बड़ो दगाबाज मोको प्रभु अङ्गीकार कीन्हेउ ताते मोहूं तुलसीदास कहायों हे दशरथ के सुवन समर्थ साहब तुमसम दयालु देव दूसरो नहीं है अपने शरणागत की लाज को राखनहार तोसों तुहीं है १३ ॥

महाबली बालि दलि कायर सुकंठ कपिराज किये महाराज हौं न काहू कामको । भ्रातघात पातकी निशाचर शरण आये किये अंगीकार नाथ येते बड़े

वामको ॥ राय दशरत्थके समर्थ तेरे नाम लिये तुल
से कूर को कहत जग रामको । आपने निवाजे
तौ लाज महाराज को सुभाव समुझत मन मुदि
गुलाम को १४ ॥

बालि ऐसे महाबली को दलिकै महाराज श्रीरघुनाथजी का
सुग्रीव जो काहू काम को नहीं ताको कपिराज कियो औ भ्रा
के घात की इच्छा जाके मन में ऐसो पातकी जाति निशाचर
बड़ो वाम कहे कुटिल विभीषण शरण आये ताको रघुनाथ
अङ्गीकार कीन्हे हे महाराज दशरथसुवन समर्थ तुम्हारे नाम
लिये ते तुलसी ऐसे क्रूरको सब जग रामदास कहत ताते महारा
श्रीरघुनाथजी को अपने निवाजे की सदा लाज है ऐसो स्वभा
समुझत गुलाम तुलसीदास मन में मुदित है १४ ॥

रूप शीलसिंधु गुणसिंधु बंधु दीनको दयानिधा
जानमणि वीर बाहु बोलको । श्राद्ध किये गीध
सराहे फल शबरी के शिलाशापशमन निबाह्यो ने
कोलको ॥ तुलसी उराउ होत रामको सुभाउ सुनि
को न बलिजाइ न बिकाइ बिन मोलको । ऐसे
सुसाहबसों जाको अनुरागन सो बड़ोई अभागो भाग
भागो लोभ लोलको १५ ॥

श्रीरघुनाथ को रूप गुणन को समुद्र है तामें ते कुछु कण मा
लिखत क्रमालङ्कार ते यथा प्रभु शीलसमुद्र हैं याते नीच ख
गीधकी श्राद्ध किये नीच दीन मलीनन को अपनो बनायो बड़ा

देना यह सौशील्य गुण है प्रभुमें यथा भगवद्गुणदर्पणे ॥ हीनै-
र्हीनैर्मलीनैश्च बीभत्सैः कुत्सितैरपि ॥ महतोच्छिद्रसंश्लेषं सौ-
शील्यं विदुरीश्वराः ॥ पुनः दीनबंधु हैं याते दीन शबरीके फलन
की प्रशंसा करे तहां ब्राह्मणादि वर्ण को विचार विना ज्ञानादिके
साधन विना गुण औगुण विचार विना अपनो करि लेना यह
सौहृद गुण है यथा भागवते हनुमद्वाक्यम् ॥ न जन्म नूनं महतो
न सौभगं न वाङ् न बुद्धिर्नाकृतिस्तोषहेतुः । तैर्यद्विसृष्टानपिनो
वनौकसश्चकार सख्ये बत लक्ष्मणाग्रजः ॥ पुनः दयानिधान हैं
याते शिलाशापको शमन कहे नाश करि अहल्या को दिव्य देह
बनाये तहां विना प्रयोजन अकारण प्रीति करना यह दयागुण है
सनत्कुमारसंहितायाम् ॥ त्रैलोक्यनाथं सरसीरुहाक्षं दयानिधिं द्वन्द्व-
विनाशहेतुम् ॥ पुनः जानमणि कहे सुजानन में शिरोमणिहैं याते
कोल भिल्लन को नेह निबाहे अर्थात् उनकी बोली में बातचीत
करत यह चातुर्य्यता गुण है कि प्रभु सबकी भाषा समुझत यथा
भगवद्गुणदर्पणे ॥ कीशानां भाषया रामः कीशेष्वुप्यपदेशिकः ॥
ऋक्षराक्षसपक्षेषु तेषां गीर्भिस्तथैव सः १ अन्यान्यदेशभाषाभिस्तत्रैव
व्यवहारकः ॥ सर्वत्र चतुरो रामः पारसीमपि पैठिवान् २ भूत-
प्रेतपिशाचानां भाषाविद्राघवः प्रभुः ॥ दैत्यदानवनागानां भाषा-
भिज्ञो रघूद्वहः ३ गीर्वाणवाणीनिपुणो रामस्तैःप्रणतं सदा ॥ कीट-
पक्षिपतंगानां रुतज्ञो रसिकोपि सः ४ महाशकुनिको रामः समुद्रा-
गमपारगः ॥ ग्रामारण्यपशूनां च भाषाभिर्व्यवहारकृत् ५ पुनः
जाको बाहु कहे भरोसा दै जो बोल बोलत ताके निबाहबे में वीर
हैं हर्ष सहित पूरा करत यह वीर्य गुण है यथा ॥ त्यागवीरो दया-
वीरो विद्यावीरो विचक्षणः । पराक्रममहावीरो धर्मवीरः सदा
स्वतः १ पञ्च वीराः समाख्याता राम एव स पञ्चधा ॥ रघुवीर

इति ख्यातिः सर्ववीरोपलक्षणः २ ऐसा स्वभाव श्रीरघुनाथजी के
जानि तुलसी उराउ होत भाव मन आनंद होत जा सुभाव के
सुनि विना मोल को बिकाइकै को न बलि जाइ ऐसेहू सुसाह
सों जाको अनुराग नहीं भाव प्रभु के प्रीति रंग में जाको मन नाहीं
रँगि गयो ते बड़े अभागी हैं काहेते विषयलोभ ते मन लोल के
चंचल है ताते उनकी भाग्य भागि गई है १५ ॥

**शूर शिरताज महाराजनिके महाराज जाको नाम
लेतही सुखेत होत ऊसरो । साहब कहां जहान जान-
कीश सो सुजान सुमिरे कृपालके मराल होत खूसरो॥
केवट पषान यातुधान कपि भालु तारे अपनायो तुलसी
सो धींग धमधूसरो । बोलको अटल बाँहको पगार
दीनबंधु दूबरे को दानि को दयानिधान दूसरो १६॥**

या कबित्त बिषे तीनि चरणके पांच पांच विशेषण क्रम ते
लागत चौथे चरणके विशेषण विपरीति ते लागत अंत आदि में
यथा अंत में जो पद है कि दूसरो भाव दूसरो नहीं है एक
रघुनाथही शूर शिरताज हैं यह शौर्य गुण प्रभु को स्मरण कीन्हे
ते यमराजके दण्डकी भय अरु कामादि की विघ्नता आपही नाश
ह्वैकै जीव शुद्ध ह्वैकै प्रभुमें लागत यथा भगवद्गुणदर्पणे ॥ अगणि-
तपापानस्मरान्भगवदेव शरणानपि यमो दण्डयिष्यतीति निश्-
चितैर्भगवत ऐश्वर्य्याद्यपरपर्य्यायशौर्य्यगुणानुसन्धानफलम् ॥ सो
शौर्य्यगुणते प्रभु केवटको अपन्याये अर्थात् जो समूह पाप रहैं ता
हेतु यमदंड को भय सों औ कामादि की विघ्नता सों सब क्षण में
प्रभु नाश करि दीन्हे शुद्ध ह्वै सन्मुख भयो अरु महाराजन के

महाराज कहे यावत् भगवान् के रूप हैं तिनके परे श्रीरामरूप है
ताते दयानिधान हैं सब के रक्षक हैं यथा मंत्रार्थे ॥ जानक्या सह
देवेशो रघुनाथो जगद्गुरुः ॥ रक्षकः सर्वसिद्धान्तवेदान्तेषुप्रगीयते १
याही दयागुणते प्रभु पाषाणते अहल्या की दिव्य देह करी पुनः
जिन प्रभुको नाम लेतही जो ऊषर है जिनके उरमें काहू सुकृति
को बीज नहीं जामत तेऊ सुखेत होत भाव सब सुकृत को फल
परे धामको अधिकारी होत यथा विष्णुपुराणे ॥ अवशेनापि यन्नाम्नि
कीर्तिते सर्वपातकैः ॥ पुमान् विमुच्यते सद्यस्सिंहत्रस्तमृगैरिव ॥
पाद्मे यथा ॥ सकृदुच्चारयेद्यस्तु रामनाम परात्परम् ॥ शुद्धांतः-
करणो भूत्वा निर्वाणमधिगच्छति १ यह प्रताप गुण दूबरेको दानि
है याही गुणते प्रभु विभीषणको अपनाये तहां ऊषर सम निशाचर
जाति सो नाम लिहे सुखेत सो भागवत भयो औ घर ते निरादर
दीन दूबर सो लङ्कनायक भयो और दूसरो जहान में नहीं है एक
रघुनाथही जी साहब कहे शरणागत पालिबे को वीर यथा ॥
त्यागवीरो दयावीरो विद्यावीरो विचक्षणः ॥ पराक्रममहावीरो
धर्मवीरः सदा स्वतः १ पंचवीराः समाख्याता राम एव स पञ्चधा ॥
रघुवीर इति ख्यातिः सर्ववीरोपलक्षणः २ इत्यादि बाह को पगार
कहे जाको भरोसा देत ताको निर्वाह करत यहि वीरता गुणते
प्रभु सुग्रीव को पाले कि महाबली बालि को मारि सुग्रीव को
कपिराज कीन्हे और सुजान दूसरा नहीं है एक जानकीश ही
सुजान कहे चतुर हैं जो सबकी भाषा समुझत यह प्रमाण पूर्वके
कबित्त में लिखो है सब की भाषा में बात करत ऐसे दीनबंधु हैं
सो दीनबंधु सुजानता गुणते कपि भालुन को पाले दीन पशुन
को सखा बनाये चतुरता गुणते उनकी बोली समुझत औ अटल
कहे अचल है जिनको बोल यथा ॥ रामो मिथ्या न भाषते ॥

ऐसे कृपालु को स्मरण करते ही खूसट सम अपावन कुरूपी सो
हंस सम विवेकी पावन होत यथा तुलसी धींग कहे कुमार्गी
धूसर मूर्ख खूसट सम ताहू को अपन्याय हंससम पावन करे १६

कीबेको विशोक लोक लोकपालहूते सब कहूं को भो न चरवाहो कपि भालुको । पविको पहार कि ख्यालही कृपालु राम बापुरो विभीषण घरौंधा हु बालको ॥ नामओट लेतही निखोट होत खोटे ख चोट बिन मोट पाइ भयो न निहालको । तुलसी बार बड़ी ढील होत शीलसिंधु बिगरी सँवारिबेको दू दयालको १७ ॥

इन्द्रादि लोकपालहुते कही बने रहे लोकिन रावणरूप शोक मिटाय लोकको विशोक कहे सुखी कोऊ न करि सकेउ औ स्वाभा विक में चंचल पशु कपि भालु तिनको चरवाहो कहे सुमार्ग कोऊ न लगाइ सक्यो औ विभीषण बापुरो बालकन कैसो बना धूरि कैसो घरौंदा निर्बलता को ख्यालही में कृपालु श्रीरघुनाथ पवि कहे वज्रसे पोढ़ो पहार सों अचल कियो यथा ॥ करहु कल्प भरि राज्य तुम म्वहिं सुमिरयहु मनमाहिं ॥ पुनि मम धाम सिधा रयहु जहां सन्त सब जाहिं ॥ जो तांबादि चांदीके भीतर हो ताको खोटा कहत यथा बानरन में चंचलता है जो चांदी तां मिलो है ताको खल कही यथा राक्षसन में विकारता जीवमें मिलो है तहां चहै खोटा होइ चहै खल होइ जापर प्रतापी राजा के टकसारी सिक्का नामांकित होत ता नाम की ओटते खरेकी जा पर चलत तैसेही खोटे खल प्रभु के नामकी ओट होतेही निखो

कहे खरे होत अरु चोट विना लागे भाव कर्म ज्ञानादि साधन विना कीन्हे मोट कहे भक्ति मुक्ति पाइ को नहीं निहाल भयो ताते बिगरीको सुधारिबे योग्य दूसरो दयालु नहीं है हे शीलसिंधु श्री रघुनाथजी अब तुलसी की बारको बड़ी ढील होती है भाव जल्दी क्यों नहीं अपन्यावत हौ १७ ॥

नाम लिये पूतको पुनीत किये पातकीश आरत निवारो प्रभु पाहि कहे पीलकी । छलिनकी छौड़ी सो निगोड़ी छोटी जाति पाँति कीन्ही लीन आपु में भा- मिनी भोंड़े भीलकी ॥ तुलसी औ तारिबो बिसारिबो न अन्तमोहूं नीकेहैं प्रतीति रावरे सुभाव शीलकी । देव तौ दयानिकेत देत दादि दीननकी मेरी बार मेरेही अभाग नाथ ढीलकी १८ ॥

पातकीश महापापी अजामील पुत्र को नाम हरि संबंधी मृत्यु समय कहे ताहूको पुनीत करि परधाम को पठायो पील गजराज पाहि कहे कि मैं शरणहौं ताहूकी आरत जो ग्राह पकरे को दुःख ताको प्रभु निवारे मिटाइ दिये औ शबरी जो छलिनकी छौड़ी कहे बेटी भाव काहू सुकृतिन की नहीं है पुनः निगोड़ी निकाम जाको जूठे अनूठे को ज्ञान नहीं है पुनः छोटी जाति ताहू में पांति रहित अर्थात् भीलन की पांति से निसरि ऋषि के यहां आई तहां अपर ऋषिन त्यागे ताते दोऊ पांति ते गई औ भोंड़ी जाति भील की स्त्री भीलिनि शबरी ताहू को प्रभु आपु में लीन कीन्ही ऐसो शीलमयी स्वभाव रावरे को है ताको मोको प्रतीति है कि तुलसीऊ को तारिबो बिसारिबो न अंत में तुलसिउको तारि हौ काहेते

देव जो श्रीरघुनाथजी कृपा के निकेत कहे स्थान हैं जे दीनन
दादि देत हैं भाव कोऊ शत्रु सतायो सभीत दीन है जो शरण
आयो ताको दुःख प्रभु मिटाये गोसाईंजी कहत कि मोको कामादि
शत्रु सतावत सो दुःख निवारिबे को प्रभु ढील किहे हैं सो मेरे
अभाग्यते तहां अपनो दोष प्रभु के गुण समुझि भरोसा राखे
यह भक्तनको लक्षण है यथा ॥ गुण तुम्हार समुझै निज दोषा
ज्यहि सब भांति तुम्हार भरोसा ॥ याते गोसाईं कहे हैं १८ ॥

आगे परे पाहन कृपा किरात कोलनी कपीश
निशिचर अपनाये नाये माथजू । साँची सेवकाई
हनुमानकी सुजानराय ऋणिया कहाये हौं बिकाने
ताके हाथजू ॥ तुलसीसे खोटे खरे होत ओट नामहीकी
महँगी माटी मगहूकी मृगमद साथजू । बात चले बात
को न मानिबो बिलग बलि काकी सेवा रीझि को नि-
वाजो रघुनाथजू १९ ॥

या कवित्त बिषे व्यंग्य वचनन में स्तुति है यथा मार्ग जात में
आगे परिगई ताते पाहन अहल्या को पवित्र कीन्हे किरात औ
कोलनी शबरी को कृपा करि अपनायो कपीस सुग्रीव निशिचर
बिभीषण तिनको माथ नायेते अपनाये भाव इन काहू ते कुछ काम
नहीं बनो अपनेही ओरते कृपा करे एक हनुमान्‌जी की सांची
सेवकाई है ताको सुजानराय श्रीरघुनाथजी कछु देबै नहीं कीन्हे
किन्तु ऋणियां कहाय ताके हाथ बिकाने यथा ॥ सुनु सुत तोहिं
उऋण मैं नाहीं ॥ ताते आपके नामके ओट होतही जे खोटे
तुलसी ऐसे तेऊ खरे होत अर्थात् मृगमद के सङ्ग मगकी माटी

महँगी होत अर्थात् जहां कस्तूरी गिरि परत ताको उठावत माटी
साथ में लागि आवत सो राहकी माटी कस्तूरी के साथ महँगी
बिकात है तैसे आपके नामके ओट खोटे जीव पावन होत हैं बात
परे पर बात कही जात ताको बिलग कहे बुरा न मानब मैं बलि
जाउँ हे श्रीरघुनाथजी काकी शुद्ध सेवकाई देखि काको निवाजे
अर्थात् जाको निवाजे ताको अपनी ओर ते कृपा करि निवाजे
भाव अकारण कृपा करि सर्वस्व देत औ जो शुद्ध ह्वै सेवा करत
ताके हाथ आपु बिकाइ जात यह व्याजस्तुति है १९ ॥

कौशिक की चलत पषाणकी परस पाइँ टूटत धनुष
बनिगई है जनककी । कोल पशु शबरी विहङ्ग भालु
रातिचर रतिनके लालचिन प्रापति मनककी ॥ कोटि
कलाकुशल कृपालु नतपाल बलि बातहू कितेक तृण
तुलसी तनककी । रायदशरथके समर्थ राम राजमणि
तेरे हेरे लोपै लिपि विधिहू गणककी २० ॥

कौशिक की चलत कहे विश्वामित्रकी बाइस ते प्रभु पदरज
परसेते पाषाण अहल्याकी बनिगई जानकीजी के हेतु धनुष तोरे
याते जनकजी की बनी भाव प्रण रह्यो भगवत्संबन्धी भये पुनः
कोलभिल्ल पशु जो मृगरूप मारीच विहंग जो जटायु ऋक्ष वानर
सुग्रीव जामवानादि रातिचर विभीषणादि ते सब रतिनके लालची
भाव लौकिक सुख दुर्लभ रहै तिनको मनके सुखकी प्राप्ति भई
भाव लोक परलोक दोऊ सुख समूह पाये इत्यादि जो जौन भांति
चाही ताको तैसेही सुख दीन्हेउँ याते कोटिन कला में कुशल कहे
सब भांति ते सुजान औ कृपाल नत जो नम्रता के पालनहार

ऐसे समर्थ आपु तहां बलिजाउँ तृण सम तनक तुलसी के तारिबे की केतिक बात है राजन में शिरोमणि महाराज दशरथ के समर्थ पुत्र तेरे कृपादृष्टि हेरेते विधि ऐसे गणक जे काल कर्म स्वभाव समुझिकै भाग्याभाग्य लिखत हैं ऐसी ब्रह्मा की लिखी लिपि जो पांति सोऊ लोपत कहे मिटिजात है भाव जापर कृपादृष्टि हेरत ताको काल कर्म स्वभाव मिटाइ देते हैं २० ॥

शिलाशाप पाप गुह गीधको मिलाप शबरी के बाप आप चलि गयो हौं सो सुनी मैं । सेवक सराहे कपिनायक विभीषणको भरतसभा सादर सनेह सुरधुनीमैं ॥ आलसी अभागी अघी आरत अनाथपाल साहब समर्थ एक नीके मन गुनी मैं । दोष दुख दारिद दलैया दीनबंधु राम तुलसी न दूसरो दयानिधान दुनीमैं २१ ॥

या कबित्त बिषे पांच विशेषण क्रमते चारिहू चरण ते अर्थ सिद्ध होत यथा शिलारूप अहल्याकी शाप उद्धार कीन्हे सो कैसी है अहल्या आलसी भाव जाने अपनो परायो पति न चीन्हे पर पति राति कीन्हे सो दोषको प्रभु दले पवित्र करि दीन्हे पुनः गुह के पाप दले कैसो रहै गुह अभागी जो हिंसारत नीच जातिमें जन्म भयो ताके पापन के फल दुःख ताको नाश करि प्रभु सुखी करि दीन्हे पुनः गीध सों मिलाप कहे अकोरामें लीन्हे सो गीध कैसा रहै अघी कहे पातकी मांस अहारी सुकृतरूप वित्त सों दरिद्री ताको दारिद दले सुकृतिन को शिरोमणि करे पुनः यह मैं सुनी है कि शबरी के धामको आपु चलिकै गयो है बाप कहे जगत के

पिता ते शबरी को माता करि माने गीतावली में लिखा है ॥ तेहि मातु ज्यों रघुनाथ अपने हाथ जल अंजुलि दई ॥ सो कैसी रहै शबरी आर्त कहेते गुरुको वियोग ऋषिन को त्याग ते आर्त ताते दीन रहै ताकी दीनता दलि सर्वोपरि करि दीन्हे ऐसे प्रभु दीनबंधु हैं पुनः सुग्रीव विभीषण को सुसेवक करि माने अरु राज्यसभा में आदर सहित प्रभु भरतजी सों प्रशंसा करे उनके सनेहको गंगाजी सम निर्मल पावन करि वर्णन करे ते सुग्रीव विभीषण कैसे रहैं अनाथ तिनको प्रभु महाराज किये गोसाईंजी कहत हैं कि मैं अपने मन में गुणिकै यह निश्चय कियो कि ऐसो दयानिधान दुनिया में दूसरो नहीं है अनाथपाल समर्थ साहब एक श्रीरघुनाथजीही हैं २१॥

मीत बालिबंधु पूत दूत दशकंधबंधु सचिव शराध कियो शबरी जटायुको । लङ्क जरी जो है जिय शोच सो विभीषणको कहौ ऐसे साहब की सेवा न खटाय को ॥ बड़े एक एकते अनेक लोक लोकपाल अपने अपने को तौ कहैगो घटाय को । सांकरे को सेइबो सराहबे सुमिरिबे को राम सो न साहिब न कुमति कटायको २२ ॥

शत्रु बालि ताके बंधु सुग्रीव को मित्र कियो पुत्र अंगद को दूत कियो भाव शत्रुसंबंधी की शंका न करे तैसे रावण के बंधु को सचिव करे यामें सबलता निःशंकता गुण दिखाये अरु शबरी गीध महानिषिद्ध तिनकी श्राद्ध कियो यामें सौशीलता गुण है बालिकी जो राज्यधानी सो निर्विघ्न सुग्रीव को दीन्हेउ अरु विभीषण को जरी लंका दीन्हे यह प्रभुके जीमें शोचहै तामें शंका

कि प्रभु शोच क्यों करते हैं ।। निमिषमात्र महँ भुवननिकाय।
रचै जासु अनुशासन माया ।। ऐसे समर्थ नई क्यों न करि दि
तहां उत्तर प्रभु भक्तनको मनोरथ प्रथम पूरा करिकै पीछे दि
ऐश्वर्य देते हैं यथा ध्रुव को प्रथम राज्य कराये पीछे अचल धा
दिये तैसे विभीषण की वासना अपने राज्य की रहै सो पूरी क
राय पीछे अपने धामको वास दिये ऐसे समर्थ सौशील सरल साह
की सेवा में को न खटाय भाव सबकी सेवकाई पार होइ तह
वैकुंठादि आदि अनेकन लोक हैं तिनके नायक यथा वरुण य
इन्द्र ब्रह्मा विष्णु महाविष्णु महाशंभु वासुदेवादि जेते लोकनाथ
ते एकते एक बड़े हैं तिनके सेवक अपने साहबनको घाटि को
कहेगो भाव अपने स्वामी को तौ सराहते हैं परंतु सबके प्रशंसा
करिबे योग्य गुण श्रीरघुनाथजी में हैं याते सब प्रशंसा करते हैं
कि सांकरे को सांकर आधि मनकी पीड़ा व्याधि देह की पीड़ादि
कौनहू दुःख होइ जो श्रीजानकीनाथको नाम स्मरण करै तौ स
दुःख नाश करि देतहैं ऐसी प्रशंसा नारदजी अंबरीष सों कहे हैं
यथा ब्रह्मवैवर्ते ।। आधयो व्याधयो यस्य स्मरणान्नामकीर्त्तनात्।
शीघ्रं वै नाशमायान्ति तं वन्दे जानकीपतिम् १ आदिपुराणे
श्रीकृष्णवाक्यम् ।। श्रद्धया हेलया नाम वदन्ति मनुजा भुवि।
तेषां नास्ति भयम्पार्थ रामनामप्रसादतः २ ।। पुनः श्रीरघुनाथकी
सेवा करिबे योग्य सुलभ स्वामी हैं जे सेवक को मन नहीं तोड़े
हैं यथा भागवते हनुमद्वाक्यम् ।। न जन्म नूनं महतो न सौभ
न वाङ् न बुद्धिर्नाकृतिस्तोषहेतुः ।। तैर्यद्विसृष्टानपि नो वनौकसस्
कार सख्ये बत लक्ष्मणाग्रजः ।। पुनः सराहबे योग्य जिनको य
पवित्र सब गावत यथा भागवते ।। रामस्य कोशलेन्द्रस्य चरित
किल्बिषापहम् ।। पुनः सुमिरिबे योग्य जिनको नाम सहजही पति

पावन है नन्दीपुराणे नन्दीश्वरवाक्यम् ।। सर्वदा सर्वकालेषु ये
प्रकुर्वन्ति पातकम् ।। तेपि श्रीरामसन्नाम जपं कृत्वा परंपदम् ।। ताते
कुमतिको काटनहार श्रीरघुनाथजीकी समान दूसरो साहबनहींहै२२।।

भूमिपाल व्यालपाल नाकपाल लोकपाल कारण कृपाल मैं सबैके जीकी थाहली । कादर को आदर काहूके नहीं देखियत सबनि सुहात है सेवा सुजान टाहली ॥ तुलसी सुभाय कहै नहीं कछू पक्षपात कौने ईश किये कीश भालु खास माहली । रामहीके द्वारपै बोलाइ सनमानियत मोसे दीन दूबरे कपूत कूर काहली २३ ॥

एक समय गोसाईंजी वृन्दावन में रहैं तहां कृष्ण उपासकों
ते तर्क कीन्हीं यथा तुलसीचरित्रे ब्रजवासी उवाच ।। चौपाई ।।
हमहूं दरश अवधको पायो । इतो प्रभाव दृष्टि नहिं आयो ।। और
न चमत्कार कछु देख्यो । दीन खीन भारी बहु पेख्यो ।। तापै
गोसाईंजी उत्तर दिये दो० और पुरिन सब बांटि लिय धनिक
धनेश नरेश । दीन खीन राखे शरण दीनानाथ दिनेश ।। पीछे
यह कबित्त कहै हैं ।। भूमिपाल जे राजा व्यालपाल शेषादि
नाकपाल इन्द्रादि लोकपाल ब्रह्मा आदिते सब के जी की थाह
ली अर्थात् पुराणादिकन में सब के चरित्र विदित हैं तिनको
सुनि विचारि सब को स्वभाव जानिलीन है कि नर राजा जे हैं
तिनको नीकी भांतिकी टहल करनेवालेनकी सेवा सुहाती है अरु
देवतादिकों को जप तप यज्ञादि कर्मकाण्ड विधिपूर्वक जानिबे में
सुजान टहल करनेवालेन की सेवा सुहात है यह लोकप्रसिद्ध है

कि काहू देवताको आराधन करै जो विधि सहित न करै तो देव
प्रसन्न न होइ किन्तु क्रोधित होइ ताते सबके जीको हाल जानि
यह निश्चय भई कि जे कोऊ कर्म करि नहीं सकत ऐसे जे काद
हैं तिनको आदर काहूके नहीं देखि परत गोसाईंजी स्वाभावि
में कहत कछु आपनी उपासनाको पक्षपात नहीं यह लोक वेद मे
प्रसिद्ध है यथा ॥ भाव कुभाव अनख आलसहू । नाम भज
मंगल दिशि दशहू ॥ प्रमाणं आदिपुराणे श्रीकृष्णवाक्यम् ॥
श्रद्धया हेलया नाम वदन्ति मनुजा भुवि । तेषां नास्ति भयं पार्थ
रामनामप्रसादतः ॥ ब्रह्मवैवर्ते शङ्करवाक्यम् ॥ व्रजंस्तिष्ठन्स्वपन्न
श्नन्ङ्व्यसन् वाक्ये प्रपूर्णके । श्रीरामनाम संकीर्त्य भक्तियुक्तः पा
व्रजेत् १ कथञ्चिन्नाम संकीर्त्य भक्त्या वा भक्तिवर्जिताः ।
दहते सर्वपापानि युगान्ताग्निरिवोत्थितः २ ब्रह्मपुराणेब्रह्मवाक्यम् ॥
प्रमादादपि संस्पृष्टो यथानलकणो दहेत् । तथौष्ठपुटसंस्पृष्टं
रामनाम दहेदघम् ॥ इत्यादि प्रमाण तौ असंख्य हैं प्रसिद्ध
विचारि देखौ सिवाइ श्रीरघुनाथजी और कौन ईश ने खास
महल की टहल को अधिकारी वानर ऋक्षन को कीन है जे ऐसे
आलसी हैं कि अपने रहबेको स्थान नहीं बनाइ सकत तिनसे
और क्या बनैगो ऐसे काहली कहे आलसी कूर कुमार्गी कोल
भिल्लादि गोसाईंजी कहत हैं कि मोहिं ऐसे दीन दूबरे कपूतन को
अपने द्वारपै बोलाइकै श्रीरघुनाथैजी सनोमान करत हैं २३ ॥

**सेवा अनुरूप फल देत भूप कूप ज्यों विहीन गुण
पथिक पियासे जात पथके । लेखे जोखे चोखे चित
तुलसी स्वारथ हित नीके देखे देवता देवैया घने गथ
के ॥ गीध मानों गुरु कपि भालु मानों मीतकै पुनीत**

**गीत शाके सब साहेब समर्थके । और भूप परखि सुलाखि
तौलि ताइ लेत लसमके खसम तुहींपै दशरथके २४ ॥**

जगमें जे राजा हैं ते सेवकन को तौ सेवाकी अनुकूल फल-
दायक हैं औ याचकन को कूप सम हैं अर्थात् जाके पास गुण
कहे रस्सी होइ तौ कूपते जल पावै विना रस्सी के पथिक राहके
पियासे चले जात तैसे गुणवानन को राजा दान देत बेगुण के
विमुख जात गोसाईंजी कहत हैं कि घने गथ कहे बहुती द्रव्य के
देनेवाले जे देवता हैं इन्द्रादि तिनको नीकी भांति विचारि देखे
कि अपने स्वार्थ के हितको चित्तते चोखे हैं भाव पूजा जप यज्ञादि
जो करत तापै प्रसन्न होत ताहूपै लेखा करिकै सुकृति योपिता
की अनुकूल फल देत यथा ॥ पुण्ये क्षीणे मृत्युलोके ॥ अरु
समर्थ साहब जो श्रीरघुनाथजी हैं तिनके यश कीर्ति करिकै शाके
जो प्रताप सो सब पुनीत पवित्रगीत कहे चरितको देव मुनि गान
करिरहे हैं कि जिनने अधम गीधको गुरु कहे बड़ा पिताके सम
माने अरु वानर रिच्छन को मीत करि माने जे चंचल पशु हैं
तहां और जे देवादि भूप हैं सो सब सेवक को परखि लेते हैं
खोटा है वा खरा औ सुलाखि लेते हैं भाव तन मनते एक रस
है कि नहीं औ तौलि लेते हैं भाव सेवकाई में पूरा है या नहीं
पुनः ताइ लेत भाव विघ्न देखाइ कसिलेत तब सेवा के योग्य
फल देत अरु लसम कहे खोटे अर्थात् नकामन के खसम कहे
स्वामी एक तुमहीं दशरथके नन्दनहौ यह लोकप्रसिद्ध है रघुनाथ
अनाथ के नाथ हैं २४ ॥

**रीति महाराजकी निवाजिये जो मांगनो सो दोष
दुख दारिद दरिद्र कैकै छोड़िये । नाम जाको कामतरु**

देत फल चारिताहि तुलसी बिहाइकै बबूर रेंड़ गोड़िये। याचै को नरेश देश देश को कलेश करै देहैं तो प्रसन्न ह्वै बड़ी बड़ाई बोड़िये। कृपापाथनाथ लोकनाथ नाथ सीतानाथ तजि रघुनाथ हाथ और काहि ओड़िये २५॥

श्रीरघुराज महाराज की यह रीति है कि जा मांगनेवाले को नेवाजत हैं ताको दोषादि ते रहित करि भवफंद ते छोड़ाइ देते हैं काहेते जिनको नाम कल्पवृक्ष जो चारिउ फल देत यथा दानिन में शिरोमणि रघुवंश ताके नाथ रघुनाथ ते अर्थफल दैकै दारिदको मिटाइ देत सर्व धर्मशिरोमणि आह्लादिनी ऐसी सीता तिनके नाथ हैं ताते धर्मफल दै काम क्रोधादि दोषको मिटाइ देत पुनः सब कामनादायक लोकनाथ तिनके नाथ हैं ताते कामफल दैकै दैहिक दैविक भौतिकादि दुःख मिटाइ देत कृपापाथनाथ कहे कृपासागर हैं याते मोक्ष फल दैकै भवबन्धन ते छोड़ाय देत हैं ऐसे श्रीरघुनाथजीको त्यागि और कासे हाथ पसारिये अर्थात् देश देशन में क्लेश सहि नरेशन को कौन यांचै आखिर जो प्रसन्न ह्वै बड़ी बड़ाई मानि देहैं तौ बोड़िये कहे दमड़ी की कौड़िये तौ देहैं ताते कल्पवृक्ष त्यागि बबूर सकंटक वृक्ष तीक्ष्ण देवता औ रेंड़ असार नरेशन की सेवा कौन करे २५ ॥ इहां तक अश्वासन अर्थात् गुण है प्रभु के अवभर्त्स अर्थात् जीवके अवगुण वर्णन यथा॥

जाके विलोकत लोकप होत विशोक लहै सुरलोक सुठौरहि। सो कमला तजि चंचलता अरु कोटिकला रिझवै शिरमौरहि॥ ताको कहाय कहै तुलसी तु

जाहि न मांगत कूकुर कौरहि। जानकिजीवन को जन ह्वै जरिजाउ सो जीह जो यांचत औरहि २६॥

जाके सुदृष्टि विलोकत लोकप कहे इन्द्रादिको ऐश्वर्य होत अरु जीव विशोक कहे दुःखरहित ह्वै सुरलोक ऐसा सुन्दर ठौर लहत कहे पावत है ऐसी कमला जो लक्ष्मीजी तेऊ अपनो चंचलस्वभाव छांड़िकै सकल शिरमौर जो श्रीरघुनाथजी तिनको कोटिन कला करिकै रिझावत हैं भाव जाद्र्व्यको लोभ करत सो लक्ष्मी प्रसिद्ध प्रभु की चेरी है ऐसे श्रीरघुनाथजी को दास कहायकै हे तुलसी देवादि के द्वार द्वार पै कूकुर सम कौरके हेतु तुच्छ सुख भोगत ताको लाज नहीं लागत है काहे ते जानकी जीवन को जन ह्वै कै जो और की याचना करै ताकी जीह जरिजाउ काहे ते सब के सिद्धिदाता श्रीरघुनाथजी हैं यथा ॥ हरिहि हरिता विधिहि विधिता शिवहि शिवता जेहि दई। सो जानकीपति मधुर मूरति मोदमय मंगलमई ॥ तत्र प्रमाणं रुद्रयामले शिववाक्यम् ॥ यत्प्रभावेण हर्त्ताहं त्राता विष्णुः प्रजापतिः॥ यत्प्रसादेन कर्त्ताभूद्देवो ब्रह्मा प्रजापतिः॥ ये नराधमलोकेषु रामभक्तिपराङ्मुखाः॥ जपं तपं दया शौचं शास्त्राणामवगाहनम्॥ सर्वं वृथा विना येन शृणुध्वं पार्वतिप्रिये॥ पुनः पुलहसंहितायां विष्णुवाक्यम् ॥ सावित्री ब्रह्मणा सार्द्धं लक्ष्मी नारायणेन च ॥ शंभुना रामरामेति पार्वति जपति स्फुटम् २६ ॥

जड़पंच मिले जेहि देह करी करनी लघुधा धरणीधरकी। जनकी कहु क्यों करि है न सम्हार जो सार करै सचराचरकी॥ तुलसी कहु राम समान को आन है सेवकि जासु रमा घर की। जग में गति जाहि

जगत्पतिकी परवाहि है ताहि कहा नरकी २७॥

जड़ पंचतत्त्व यथा आकाश श्याम वायुहरित अग्नि अरुण जल श्वेत पृथ्वी पीत इत्यादि पांचों जड़ हैं औ परस्पर विरोधी हैं अग्नि जल ते विरोध वायु पृथ्वी ते विरोध तिन को मिलाय देह रची तामें दश इन्द्री ताके देवता विषय यथा श्रवण देव आकाश बिषे शब्द १ त्वचा देव पवन बिषे स्पर्श २ नेत्र देव सूर्य बिषे रूप ३ रसना देव वरुण बिषे रस ४ नासिका देव अश्विनीकुमार बिषे गन्ध ५ इति सदेव विषे ज्ञानेन्द्री पुनः पग देव यज्ञ विष्णु बिषे चलन १ गुदादेव यमराज बिषे मलत्याग २ लिंगदेव प्रजापति बिषे मैथुन ३ मुखदेव अग्नि बिषे भक्षण ४ हाथदेव इन्द्र बिषे व्यवहार ५ इति सदेव बिषे कर्मेन्द्री तहां एक एक तत्त्वते द्वै२ इन्द्री यथा मुख कान आकाश ते १ त्वचा बाहु वायु ते २ नेत्र पद अग्निते ३ रसना लिंग जलते ४ गुदा नासिका पृथ्वी ते ५ अथ प्रकृति लोभ १ मद २ मान ३ काम ४ क्रोध ५ इति प्रकृति आकाश को वास शीश में मुख कानद्वारा भक्षण सुनब अहार १ धावन चलन २ सकोरन ३ पसारन ४ उत्क्रमण ५ इति प्रकृति वायु की नाभी में वास नासिका द्वारागन्ध अहार १ श्वास १ प्रश्वास २ क्रिया है २ पुनः निद्रा १ कांति २ क्षुधा ३ आलस ४ जमुहाई ५ इति प्रकृति अग्निकी पित्तमें वास नेत्र द्वारा रूपअहार १ पुनः रक्त १ पसीना २ मूत्र ३ बीज ४ लार ५ इति प्रकृति जल की ललाट में वास लिंग जिह्वा द्वारा मैथुन षट्रस अहार १ पुनः अस्थि १ मांस २ त्वचा ३ नाड़ी ४ रोम ५ इति प्रकृति पृथ्वी को हृदय में वास गुदा द्वारा ५ पुनः वायु आकाशते चित्त है देव जीव है १ जलते मन देव चन्द्रमा २ पृथ्वी ते बुद्धिदेव

ब्रह्मा ३ अग्निते अहंकार देव रुद्र ४ पुनः योग १ विराग २ स्मरण ३ ज्ञान ४ विज्ञान ५ उच्चाटनादि ६ चित्त के अंश हैं १ पुनः जप १ यज्ञ २ तप ३ त्याग ४ आचार ५ ध्यानादि ६ बुद्धि के अंश हैं २ पुनः कर्म १ अकर्म २ विकर्म ३ नेम ४ संकल्प ५ विकल्पादि ६ मन के अंश हैं ३ पुनः मान १ क्रोध २ ईर्षा ३ पारुष्य ४ हिंसा ५ शत्रुतायुत ६ अहंकारके अंश हैं अथ वायु अंगवास यथा हृदय में प्राण १ गुदामें अपान २ नाभी में समान ३ कंठ में उदान ४ सर्वशरीर में व्यान ५ नाभी में नाग ६ नेत्र में कूर्म ७ क्षुधा में क्रिकिल ८ जमुहाई में देवदत्त ९ मृत्यु में धनंजय १० अथ नाड़िका दाहिने पिंगला १ वामे इंगला २ मध्य सुषुम्ना ३ त्रिपुटी में महाशब्द ४ वामनेत्रे गांधारी ५ दाहिननेत्रे हस्तिनी ६ रसना में नाग्नि ७ दहिने कर्णे पूषा ८ वामकर्णे पश्चिनी ९ मुखे विलंबिका १० स्थलस्थाने शंखिनी ११ अथ वाणी नाभी में परा सो राम तत्त्वनिरूपिणी १ हृदय में पश्यंती जीवात्मनिरूपिणी २ कंठ में मध्यमा धर्मार्थकामस्वर्गादिवार्ता ३ जिह्वा में वैखरी प्राकृत व्यवहार ४ अथ पंचकोश अन्नमय १ प्राणमय २ मनोमय ३ ज्ञानमय ४ विज्ञानमय ५ इत्यादि को विश्वाभिमानी प्रजापति देवता जाग्रत अवस्था वैखरी वाणी इति पंचभौतिक स्थूलशरीर ॥ अथ सूक्ष्म ॥ पंचप्राणमनोबुद्धिर्दशेन्द्रियसमन्वितम् ॥ अपञ्चीकृतमस्थूलसूक्ष्मांगं भोगसाधनम् ॥ इति सूक्ष्म शरीर ॥ अथ कारण ॥ अविद्या भगवच्छक्तिर्विर्द्धजीवस्य बंधनम् ॥ सदसद्भ्यामनिर्वाच्या शरीरं सापिकारणम् इति कारण शरीर इत्यादि रचना धरणीधर जो श्रीरघुनाथजी करी है जो और की करी नहीं है सकत सो प्रभु को लघुधा कहे कुछ बड़ी बात नहीं है ऐसे समर्थ जो प्रभु हैं ते अपने जनको क्यों न संभार करिहैं जो चराचर

की सार कहै सब के सेहारिकै भोजन देत ताको भक्त नाहक सं देह करत यथा महाभारते ।। भोजनाच्छादने चिन्तां वृथा कुर्वन्ति वैष्णवाः ।। योसौ विश्वंभरो देवो स भक्तान् किमुपेक्ष्यति ।। गोसाईं जी कहत कि श्रीरघुनाथजी की समता को समर्थ और कौन है काहे ते जिनके घरकी सेवकिनी श्रीलक्ष्मीजी हैं ताते जगत्पति जो श्रीरघुनाथ की गति जाको है ताको नरकी परवाहि कहा है २७॥

जग यांचिये कोऊ न यांचिय तौ जिय यांचिये जानकीजानहि रे । जेहि यांचत याचकता जरि जाइ जो जारत जोर जहानहि रे ॥ गति देखु विचारि विभीषणकी अरु आनु हिये हनुमानहि रे । तुलसी भजु दारिद दोष दवानल संकट कोटिकृपानहि रे २८॥

हे जिय जगमें काहूको न यांचिये निष्काम भजन करिये कदाचित् सकाम ह्वै याचिये तो जानकीजान श्रीरघुनाथही जी को यांचिये काहेते जो यांचकता दारिद्रता रूप अपने जोरते जहानको जारि रही है अर्थात् आशा महादुःख है सोई दुःखरूप यांचकता प्रभु के यांचेते जरिजाती है भाव श्रीरघुनाथजी के याचेते फिरि यांचकता रहि नहीं जाती है काहे ते जो लोकहू परलोक ते पूर्ण काम करि देते हैं ताको आगे देखावत कि विभीषण की गति विचारि देखु भाव सकाम रहे तिनको लंका को राज्य दिये पीछे परधाम दिये पुनः हनुमान्जी की गति हिये में आनु अर्थात् निष्काम रहे तिनके प्रभु वश भये गोसाईंजी कहत कि दारिद दोष रूप वनके जारिबे को दावानल समान है अरु कोटिन भांति के संकट काटिबे को कृपाण सम है ऐसे प्रभु को रे मन भजु २८ ॥

सुनु कान दिये नित नेम लिये रघुनाथहि के गुणगाथहि रे । सुख मंदिर सुन्दररूप सदा उर आनि धरे धनु भाथहि रे ॥ रसना निशिवासर सादर सो तुलसी जपु जानकिनाथहि रे । करु संग सुशील सुसंतन सों तजि कूर कुपंथ कुसाथहि रे २९ ॥

अनुरागी भक्तनकी क्रिया अपने मनते उपदेश करते हैं प्रथम कीर्ति यश प्रताप सौशीलतादि अनेक गुण जो श्रीरघुनाथजी केहैं ताकी गाथा कहे कथा ऐश्वर्य माधुर्य मिश्रित लीला रामायणादि को नेम लिये कान दैकै नित श्रवण करु नेम लिये को यह भाव कि कर्मइन्द्रिन की विषय रोकि शौच संतोष तप जप ईश्वर निष्ठादि सहित विधिपूर्वक श्रवण औ कान दिये को भाव मनादि वासना रहित समचित ह्वै कर्णादि ज्ञानेन्द्रिन की विषय रोकि विचार श्रद्धा सहित श्रवण सुखमंदिर कहे जीवन के सुखदायक जे गुण हैं क्षमा करुणा उदार वात्सल्य शरणपालादि समूह जामें भरे हैं ऐसो श्याम तन करकमलन में धनुष बाण धारण कटि में भाथ कहे तरकस पीतांबर शोभित चन्द्र सो प्रसन्न वदन सर्वांग सुठौर विना भूषणौ भूषित ऐसो सुन्दर रूप श्रीरघुनाथजी को उरमें आनु अथवा सुखमंदिर अयोध्यामध्ये हेमरत्नमंदिर में श्रीजानकीजी सहित प्रसन्नरूप यथा महारामायणे ।। सीतायुतं रघुपतिं च विशोकमूर्त्तिं पश्यन्ति ते निशि मुदा परमेण रम्यम् ।। भाव प्रसन्नरूप सुखमंदिर आसीन ध्यान करिबे को चाही उपासकनको याते गोसाईंजी कहत रे मन रात दिन रसनाते आदर सहित श्रीजानकीनाथ को जपु तहां रसना सों जपिबेको कहे आदर

सहित जानकीनाथ को कहे रसना सों जपिबेको क्यों कहे ता
अंतर में नाम जपे जीवनमुक्त होत है परन्तु न प्रेमापरा भक्ति हो
न रघुनाथजी को समीपी होइ यथा महारामायणे ॥ अन्तर्जपन्ति
ये नाम जीवन्मुक्ता भवन्ति ते ॥ तेषां न जायते भक्तिर्न च राम
समीपकः ॥ ताते जे अनुरागी हैं ते रसनासों जपत यथा महा
रामायणे ॥ जिह्वयाप्यन्तरेणैव रामनाम जपन्ति ये ॥ तेषां प्रेम
पराभक्त्या नित्यं रामसमीपकाः ? श्रीरामनामरसनाग्रपठनि
भक्त्या प्रेमा च गद्गदगिरोप्यथ हृष्टलोमः ॥ सादर कहिबे को
यह भाव कि रूखा नाम निरादर होत ताते आदर सहित लाड़
दुलार को नाम अनुरागिनके जपिबेको चाही यथा सनत्कुमार
संहितायाम् ॥ श्रीरामचन्द्र रघुपुङ्गव राजवर्य राजेन्द्र राम रघुनायक
राघवेश ॥ राजाधिराज रघुनन्दन रामभद्र दासोहमद्य भवतः श
रणागतोस्मि ॥ पुनः ॥ रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे ॥
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ॥ याही हेतु जानकीनाथ
कहे औ कूर कुपंथी यथा वज्रसूच्याम् ॥ चार्वाकाश्चतुराः स्वतर्क
निपुणा देहात्मवादे रताः सर्वे वामनिरस्तदुस्सहमहाद्वैते पराशंकि
काः ॥ कर्तारं प्रभजन्ति पापनिरता भूतेषु ये निर्दयास्तेषामादिद
कल्पमेवहि फलं वैशास्ति मोक्षं परम् ॥ इत्यादि नास्तिकनकी
कुसंगति त्यागि कै सुसंत शीलवान् यथा महारामायणे ॥ शान्तः
समानमनसश्च सुशीलयुक्तस्तोषक्षमागुणदयामृजुबुद्धियुक्तः ॥
विज्ञानज्ञानविरतिः परमार्थवेत्ता निर्द्धामकोभयमनः स च रामभक्तः ॥
ऐसे अनुरागी भक्तन की संगति करु २९ ॥

**सुत दार अगार सखा परिवार विलोकु महा
कुसमाजहि रे । सबकी ममता तजि कै समता सजि
संतसभा न विराजहि रे ॥ नर देह कहा करि देखु**

**विचारु बिगारु गँवार न काजहि रे । जनि डोलहि
लोलुप कूकुर ज्यों तुलसी भजु कोशलराजहि रे ३० ॥**

रे मन सुत जो पुत्र दारा जो नारि सखा जो सनेही परिवार
के यावत् लोग हैं तिनको महाकुसमाज दुःखदायी करिकै विलोकि
कै सबकी ममता तजिकै ताग सम खैंचि समता कहे वासना
त्यागि एकाग्रचित्त करिकै प्रभु में मन लगाउ इति शेषः यह
भक्तन को स्वाभाविक चाही यथा ॥ सबकी ममता ताग बटोरी ।
ममपद मनहिं बांधि वर डोरी ॥ शिवसंहिता में हनुमान्जी कहे
यथा ॥ पुत्रवत्पितृवद्रामो मातृवन्मम सर्वदा ॥ श्यालवद्भ्रामवद्रामः
श्वश्रूवच्छ्वशुरादिवत् ॥ इत्यादि सर्वसंबंध प्रभु में मानने को चाही
या रीतिते संतन की समाज में विराजमान रहै नहीं तौ विचारि
देखु नरदेह में कहा है भाव सारांश कुछ नहीं है एक हरिभजन
सार है हे गँवार सो काज न बिगारु लोलुप कहे परधन पर-
दारादि में मन लगाये कूकुर ज्यों भड़ेई हेतु वा कौर हेतु घर घर
मांगत न डोलु हे तुलसी के मन कोशलराज को भजु ३० ॥

**विषया परनारि निशा तरुणाई सुपाइ पर्‌यो
अनुरागहि रे । यमके पहरू दुख रोग वियोग विलो-
कतहू न विरागहि रे ॥ ममतावशते सब भूलि गयो
भयो भोर महाभय भागहि रे । जरठाई दिशा रवि-
काल उयो अजहूं जड़ जीव न जागहि रे ३१ ॥**

परस्त्रीहेतुक विषया कहे परकियारत शृंगार परस्पर अवलो-
कन आलम्बन है षट्ऋतु शोभा राग रंग सुगंध त्रिविध पवन
पुष्पवाटिकादि उद्दीपन है षट् भांति परकिया यथा ॥ विदग्धा

लक्षिता गुप्ता कुलटा मुदितानुसैनादि के हाव भावादि में काम
सक्तीत्यादि विषयरूप रात्री में तरुणाई रूप निद्रा बढ़ी ताते प
नारी के अनुराग में परे भाव वाही रंग में मन रँगि गयो इत्यादि
विषय रति सुख में परि हरि शरणागती भूलि गयो याही जीव
को सोई जाना है तहां यमराज प्रभुके कोतवाल हैं जो कसू
करत ताको दंड देत यह वेद पुराण द्वारा लोक में प्रसिद्ध है
यथा बुधविलासे ॥ देखे नरक बहुत दुखदाई । करि करि सुधि
बहुत पछिताई ॥ अष्टधातु पुतरी करि ताती । लंपटको लपटाव
छाती ॥ परतिय नगन देखि ललचाई । फोरत काक आँखि
दुखदाई ॥ इत्यादि वचन लोक में प्रसिद्ध तेई जीवको जगावने
वाले यमके पहरू हैं पुनः परस्त्री रतमें मानस कायिक अनेक रोग
होत यथा भय लज्जा कलंक अपमानादि मानसिक रोग हैं गरमी
सुजाक प्रमेह नाताकती आदि कायिक इत्यादि अनेक रोगहैं पुन
वियोग कहे विप्रलंभ यथा पूर्व अनुराग अभिलाष चिन्ता गुण
कथन स्मृति उद्वेग प्रलाप उन्माद व्याधि जड़ता मरणादि वियोग
में इत्यादि अनेक दुःख विलोकतहू विषय ते विराग नहीं होत
सो ममता वशते ज्ञान वैराग सब भूलिगयो भाव विषयराति में
सोवतै रह्यो अब यमयातनादि महाभयरूपी भा कहे प्रभा धामको
गहे भोर भयो जरठाई जो जरा अवस्था सो पूर्व दिशा है तामें
कालरूप सूर्य उदय भयो भाव मरणकाल आइ गयो है जड़ जीव
अजहूं नहीं जागत ३१ ॥

जनम्यौ जेहि योनि अनेक क्रिया सुख लागि
करी न परै बरनी । जननी जनकादि हितू भय भूरि
बहोरि भई उरकी जरनी ॥ तुलसी अब रामको दास

कहाइ हिये धरु चातककी धरनी । करि हंसको वेष
बड़ो सब सों तजिदे बक वायस की करनी ३२ ॥

गोसाईंजी अपने मनते कहत कि ज्यहि योनि में जन्म पायो
ताही तनके सुख लागि कहे सुखके हेतु अनेक क्रिया कहे कर्त-
व्यता कीन्हे जो बर्णिबे योग्य नहीं भाव नीच ऊँच विचार रहित
तहां जन्म होते ही जननी हितू भई पीछे पिता हितू भयो सयान
भये पर भाई बहिन परिवार नात आदि बहुत हितू भये युवा भये
पर उरकी जारनहारी जो नारि है सो हितू भई अथवा पूर्व जे सब
हितू भये तिनकी ममता वशते पीछे जरनि कहे त्रयताप में जीव
जरत भयो हे तुलसी अब श्रीरघुनाथजी को दास कहायो ताते
अब चातककी धरणी कहे सबको आश भरोसा छांड़ि अनन्य
है प्रभुकी शुद्ध शरणागति हिये में धारु काहे ते हंसको वेष करि
कै भाव श्रीरामभक्तन को वेष यथा महारामायणे ॥ भाल च
रम्यतिलकं विवरेखदीप्तं रामस्य पादसदृशं स च पीतमध्ये ॥
कंठे तथा तुलसिदासलसद्भुजे वै तप्तेन बाणधनुषांकितराम-
भक्तः ॥ यथा सब पक्षिन में उत्तम हंस तथा सबके भक्तन में उत्तम
श्रीरामभक्तहैं यथा शिवसंहितायाम् ॥ इन्द्रादिदेवभक्तेभ्यो ब्रह्म-
भक्तोऽधिको गुणैः ॥ शिवभक्ताधिको विष्णुभक्तः शास्त्रेषु गीयते ॥
सर्वेभ्यो विष्णुभक्तेभ्यो रामभक्तो विशिष्यते ॥ रामादन्यः परो
ध्येयो नास्तीति जगताम्प्रभुः ॥ तस्माद्रामस्य ये भक्तास्ते नमस्याः
शुभार्थिभिः ॥ ऐसे श्रीरामभक्तरूप हंसको वेष किहे तौ बक कहे
बकुला और काक कौवा इनकी करणी त्यागि दे बक की करणी
कहे देखाउ में सूरति साधु की मन में असाधु बकध्यानी लोक
में प्रसिद्ध हैं भाव छली काक करणी मन चञ्चल वचन कटुक
कर्म कुटिल भाव चण्डाल ३२ ॥

भलि भारतभूमि भले कुल जन्म समाज शरीर भलो लहिकै । ममता करषा तजिकै बरषा हिम मारुत घाम सदा सहिकै ॥ जो भजै भगवान सयान सोई तुलसी हठ चातक ज्यों गहिकै । नत और सबै विषबीज बये हर हाटक कामधुका नहिकै ३३ ॥

याके अन्तर्गत सुकृतिरूप कृषी वर्णन है तहां पहिले अच्छी भूमि चाहिये तहां भारतखण्ड की भली भूमि है तामें मध्य देश जहां गंगा यमुना सरयू प्रयाग चित्रकूट बृन्दावन काशी मिथिलादि सुक्षेत्रन के मध्य श्रीअयोध्याजी जो विष्णुको मस्तक है यथा पद्मपुराणे ॥ एतद् ब्रह्म ादं वदन्ति मुनयोऽयोध्यापुरी मस्तके ॥ ऐसी भूमि सब सुकृत को उपजावनहारी है पुनः ब्राह्मणादि सुकृतरूप कृषीके स्वाभाविक अधिकारी हैं ऐसे उत्तम कुल में जन्म पायो तहां अयोध्यादि में सत्संग हेतु रामभक्तन की समाज भली है अरु विघ्न रहित निरुज भलो तन लहि भाव नरतन पाइकै ताते ममता औ कर्षा कहे प्रीति वैर त्यागिकै वर्षा जाड़ व हवा घाम सहिकै गोसाईंजी कहत कि चातक की हठ गहिकै भाव अनन्य है जो श्रीरघुनाथजी को भजै सोई सयान है जो भक्तिरूप धान्य उपराजै औ जो और कर्तव्यता करे ते मानौ नरतनरूप सोने को हर तामें सन्त समाजरूप कामधेनु नहिकै विषबीज बये भाव विषय में मन लगाये महादुःख फलहै ३३ ॥

सो सुकृती शुचि मंत सुसन्त सुजान सुशील शिरोमणिस्वै । सुर तीरथ तासु मनावत आवत पावन होत है ता तनछ्वै ॥ गुणगेह सनेह को भाजन सो सबहीसों उठाय कहौं भुजद्वै । सतिभाव सदा छलछांड़ि सबै तुलसी जो रहै रघुवीर कोह्वै ३४ ॥

कर्मनेष्ठी की सुकृति सांची तबैहै जो रामसनेह होइ शुचिमंत कहे तप तीर्थ नेष्ठी की पुनीतता तबै सांची है जो रामसनेह होइ सुसन्त कहे शांत रसवालेन की शांत तबै सांची जो रामसनेह होइ सुजान कहे ज्ञानिन को ज्ञान तबै सांचो जो रामसनेह होइ सुशील शिरोमणि की सज्जनता तबै सांची जो रामसनेह होइ रामसनेह हीकी देह छुये सब पवित्र होत ताते देवतीर्थ आदि सब रामसनेही को आगमन मनावत हैं गोसाईंजी कहत कि मैं दोऊ भुजा उठायकै खुलिकै सबसों कहतहौं कि जो रामसनेह को भाजन है सो सब गुणनको गेह है भाव सब गुण आपही आइजाते हैं जो सब छल छांडिकै सतिभावते सदा रघुवीर को सनेही है रहै काहेते श्रीराम ते परे दूसरा तत्त्व नहीं है यथा पद्मपुराणे ॥ रामान्नास्ति परो देवो रामान्नास्ति परं व्रतम् ॥ नहि रामात्परो योगो नहि रामात्परो मखः ३४ ॥

सो जननी सो पिता सोइ भ्रात सो भामिनि सो सुत सो हित मेरो । सोई सगो सो सखा सोइ सेवक सो गुरु सो सुरसाहब चेरो ॥ सो तुलसी प्रिय प्राण समान कहांलौं बनाइ कहौं बहुतेरो । जो तजि देहको गेहको नेह सनेह सो रामको होइ सबेरो ३५ ॥

जननी कहे माता सोई है पिता सोई है भाई सोई है स्त्री सोई है पुत्र सोई है हितकारी सोई है सगी सम्बन्धी सोई है सखा सोई है सेवक सोई है गुरु सोई है देवता सोई है साहब सोई है

धेरो सोई है इत्यादि सम्बन्धी कहां तक बहुत बनाइकै कही तुलसी को प्राणन के समान प्रिय सोई है जो पुत्रादि देहको ने तजि द्रव्यादि गेहको नेह त्यागि श्रीरघुनाथजी को सनेही है शरणागत सबेरे होइ भाव वृथा दिन न गँवावै यामें या प्रयोजन है कि हरिसनेहिन ते सनेह करै और सों नहीं सने राखना ३५ ॥

रामहैं मातु पिता सुत बंधु औ संगि सखा गुरु स्वामि सनेही । रामकी सौहैं भरोसो है रामको रामरँगी रुचि राचौ न केही ॥ जीवत राम मुये पुनि राम सदा रघुनाथहिकी गति जेही । सोई जियै जगमें तुलसी नत डोलत और मुये धरि देही ३६ ॥

जिनके माता पिता पुत्र भाई संगी मित्र गुरु स्वामी सनेही एक रघुनाथैजी हैं सौहैं कहे सम्मुख है जिनको मन रघुनाथै जीको भरोसा राखेहै जिनकी रुचि रघुनाथैजी के सनेह रंगमें रँगी है राचौ न केही जिनकी रुचि और में नहीं पगी है इत्यादि अनन्य भक्तनकी स्वाभाविक रीति है यथा ॥ स्वामि सखा गुरु मातु पितु जिनके सब तुम तात ॥ मनमंदिर तिनके बसहु सिया सहित द्वउ भ्रात ॥ यथा शिवसंहिता में हनुमान्जी कहे हैं ॥ पुत्रवत्पितृवद्रामो मातृवन्मम सर्वदा ॥ श्यालवद्रामवद्रामः श्वश्रूवच्छ्व शुरादिवत् ॥ पुत्रीवत्पौत्रवद्रामो भागिनेयादिवन्मम ॥ सखीवत्सखि वद्रामः पत्नीवदनुजादिवत् ॥ यः प्रीतिः सर्वभावेषु प्राणिनामनपा यिनी ॥ रामे सीतापतावेव निधिवन्निहिता मुने ॥ अरु जीवत लोक में आश भरोसा मुये परलोक आश भरोसा जिनके सदा

एक रघुनाथही जी को है सोई जगमें जीवत हैं यथा ध्रुव हनुमानादि औ जे प्रभु की शरण नहीं हैं ते और सब मृतक सम देह धरे जग में डोलत हैं भाव पिशाचरूप हैं यथा पद्मपुराणे ॥ स्थानं भयस्थान न रामकीर्तिः रामेतिनामामृतशून्यमास्यम् ॥ सर्पालयं प्रेतगृहं गृहं तदत्रार्च्यते नैव महेन्द्रपूज्यः ३६ ॥

सिय रामस्वरूप अगाध अनूप विलोचन मीनन कोजलुहै । श्रुति रामकथा मुख रामको नाम हिये पुनि रामहि को थलुहै ॥ मति रामहिं सों गति रामहिंसों रति रामसों रामहिको बलुहै । सबकी न कहै तुलसी के मते यतनो जग जीवनको फलुहै ३७ ॥

रूप कहे जो विना भूषण भूषित होइ यथा ॥ अंगानि भूषिता येव निष्काद्यैश्च विभूषणैः ॥ येन भूषितवद्भाति तद्रूपमिति कथ्यते ॥ ऐसो जो श्रीजनकनंदिनी रघुनन्दन को उपमारहित जो रूप है सोई निर्मल अगाध जल है तामें जे अपने विलोचन कहे नेत्रनको मीनकरि रूपही में मग्न रहते हैं पुनः जैसे मृगा गानको सुनत तैसे जे रामानुरागी श्रीरामकथा को मन लगाइ काननसों सुनत हैं पुनि श्रीरघुनाथके जे मधुर नाम हैं तिनको आदर सहित मुखते सदा उच्चारण करत हैं थल कहे वासस्थान श्रीरघुनाथजी को परिकर सहित भावना करिकै हिये कमल में राखत है पुनः मति कहे बुद्धि जाकी सपतत्त्व निरूपण में सदा रहत है पुनः गति पहुँच भाव शरणागत रघुनाथैजी के हैं रति कहे प्रीति रघुनाथैजी में है बल कहे भरोसा जाके एक श्रीरघुनाथैजी को है इत्यादि सब भांतिते जो रघुनाथजीको है तुलसी के मतते यतनोई

जगत् में जीवनको फल है सबको मैं नहीं कहतहौं भाव कोई भल वारो अनख न मानै मैं अपने मत सों कहतहौं ३७ ॥

दशरत्थके दानिशिरोमणि राम प्रसिद्ध पुराण सुन्यों यशमैं । नर नाग सुरासुर याचक जो तुमसों मन भावत पायो नकै ॥ तुलसी करजोरि करै बिनती जु कृपा करि दीनदयाल सुनै । जेहि नेह सनेह न रावरे सों ऐसी देह धरायकै जाय जियै ३८ ॥

दशरथनन्दन दानिन में शिरोमणि हैं ऐसा यश पुराणन में प्रसिद्ध मै सुन्यो है नर मनुष्य नाग शेषादि सुर इन्द्रादि असुर प्रह्लादादि जो याचक है आपुसों याचना कीन्हे सो मन भावत कौन नहीं पायो भाव सब पायो तुलसी कर जोरिकै बिनती करत है जो दीनदयाल कृपा करिकै सुनौ कौन बिनती करत हौं कि जो देहधारी है आपुसों सनेह नहीं करत भाव रघुनाथजी सों विमुख है ऐसी देह धराइकै विमुखता करनेवाले जाय जियैं अर्थात् मरिजाइँ तौ भला है काहे ते काको प्रभु पूर्णकाम नहीं करैं कवित्त में चारि चरण चारि भांति के सो मध्यम तुकान्त में एक भेद मिस्वर होत भाव स्वरते तुकान्त होत याको भेद काव्यनिर्णय के बाईस उल्लास के प्रारम्भ में है जाको सन्देह होइ सो देखिलेइ ३८ ॥

झूंठो है झूंठो है झूंठो सदा जग संत कहंत जे अंत लहा है । ताको सहै शठ संकट कोटिक काढ़त दंत करंत हहा है ॥ जानपनी को गुमान बड़ो

तुलसी के विचार गँवार महा है । जानकिजीवन जानन जान्यो तो जान कहावत जान कहा है ३९ ॥

जे अद्वैतवादी सन्तहैं ते कहते हैं कि हम जगत् को अन्त लहा कहे पावा है कौन अन्त पावा है कि जगत् सदा झूंठा है झूंठा है झूंठा है त्रिबार कहेते तीनिउँ कालमें झूंठा है न पूर्व में सांचा रहा न अब सांचा है न आगे सांचा होइगो इत्यादि कहते तौ झूंठा है अरु ताही जगमें हानि निन्दापमान पराजय काम क्रोध लोभ ममता ईर्षा रोगादि को कोटिन जो संकट हैं तिनको सहते हैं भाव शोक के अभिमानी हैं पुनः लाभ सुत वित्त नारि जाति पांति कुल युवा तन मान बड़ाई निरोगतादि पाइकै दांत काढ़त हहाय कै हँसत हैं भाव हर्ष के अभिमानी हैं ताहू में जानपनी कहे ज्ञान को गुमान मन में है ते तुलसी के मत ते गँवार कहे महा-मूर्ख हैं काहे ते हर्ष शोक अभिमानादि अज्ञानता यही जगकी सचाई औ जीव को धर्म है यथा हर्ष विषाद ज्ञान अज्ञान जीव धर्म अहमिति अभिमान इत्यादि अज्ञान में तौ बँधे औ ज्ञान के गुमान ते भक्ति को निरादर किहे हैं यह मूर्खता है यथा ॥ जे असि भक्ति जानि परिहरहीं । केवल ज्ञानहेतु श्रम करहीं ॥ ते शठ कामधेनु गृह त्यागी । खोजत अर्क फिरहिं पयलागी ॥ प्रमाणं महारामायणे ॥ ये रामभक्तिममलां सुविहाय रम्यां ज्ञाने रताः प्रतिदिनं परिक्लिष्टमार्गे ॥ आरान्महेन्द्रसुरभीं परित्यज्य मूर्खा ह्यर्कं भजन्ति सुभगे सुखदुग्धहेतुम् ॥ भागवते ॥ श्रेयः श्रुतिं भक्तिमुदस्य ते विभो क्लिश्यन्ति ये केवलबोधलब्धये । तेषामसौ क्लेशल एव शिष्यते नान्यद्यथा स्थूलतुषावघातिनाम् ॥ ताते जान कहे ज्ञान पाइ जो जानकीजीवन को न जान्यौ तौ जान कहावत परिजान

कहाँ है भाव विना भक्ति ज्ञानच्युति भये भवसागर में परते हैं यथा ॥ जे ज्ञानमान विमत्त तव भय हरणि भक्ति न आदरी ॥ ते पाइ सुरदुर्लभपदादपि परत हम देखे हरी ॥ प्रमाणं भागवते ॥ संसारकूपे पतितं विषयैर्मुषितेक्षणम् । ग्रस्तं कालाहिनात्मानं कोऽन्यस्त्रातुमिहेश्वर ३९ ॥

तिनते खर शूकर श्वान भले जड़ता वशते न कहैं कछुवै । तुलसी ज्यहि राम सों नेह नहीं सो सही पशु पूंछ बिखानन द्वै ॥ जननी कत भारमुई दशमास भई किन बांझ गई किनच्वै । जरि जाउ सो जीवन जानकिनाथ रहै जगमें तुम्हरो बिन ह्वै ४० ॥

शुभाशुभ कर्म रस्सी में बांधे जगभारवाही ऐसी कर्मकाण्डी ते खर सम हैं योग क्रियाभिमानी मलभक्षक सिद्ध पुष्टाङ्ग ऐसे योगी शूकर सम हैं ज्ञान बल मुँह जोर अकारणवाद भूंकना ऐसे ज्ञानी श्वानसम हैं भाव विना रामसनेह कर्मकाण्डी खर सम योगी शूकर सम ज्ञानी श्वान सम पुनः कहत कि नाहीं तिनते खर शूकर श्वान भले हैं काहे ते जड़ता के वशते तौ नहीं हैं श्री ज्ञानी आदि चैतन्य ह्वै विमुखता करते हैं ताते गोसाईंजी कहत कि जाको नेह श्रीरघुनाथजी सों नहीं है ते सही कहे सांचो पशु हैं विना पूंछके बांड़े विना द्वै सींगके मुड़वा ऐसे कुरूपी भाव पशुओं में सुभग नहीं ऐसे हरिविमुखन की जननी गर्भ के भारते दश मासलौं काहे को मरि मिटी बांझ क्यों न भई च्वै कहे गर्भ डारि क्यों न दियो हे जानकीजीवन विना तुम्हारो ह्वैकै जे जगमें जीवत हैं तिनको जीवन जरि जाउ भाव वै मरिजाइँ ४० ॥

गज वाजि घटा भले भूरि भटा वनिता सुत भौंह तकैं सबकै । धरणी धन धाम शरीर भलो सुरलोकहुँ चाहिय है सुखस्वै ॥ सब फोटक साटकहैं तुलसी अपनो न कछू सपनो दिनद्वै । जरिजाउ सो जीवन जानकिनाथ जियै जगमें तुम्हरो बिनह्वै ४१ ॥

गज वाजि कहे हाथी घोड़ादि घटा कहे समूह चतुरङ्गिनी सेना तामें भले मनमाने योधा भूरि कहे बहुत हैं औ वनितादि पुत्र पर्यन्त यावत् समाज हैं ते सब कोऊ भौंहैं तकत भाव आज्ञानुकूल हैं औ धरणी धन धाम इच्छापूर्वक भलो शरीर निरुज अर्थात् सप्तांग राजश्री पूर्ण हैं यथा ॥ स्वाम्यमात्यसुहृत्कोशराष्ट्रदुर्गबलानि चेत्यमरः ॥ इत्यादि तौ लोकमें सुखी हैं सोई अपने सुख की चाह सुरलोकहू की राखते हैं भाव तीर्थ तप दान यज्ञादि करिकै सुरलोक सुखके अधिकारी भये इत्यादि सब सुख फोटक साटक हैं अर्थात् विना श्रीरामशरणागत सब सुख बकला बूसा सम असार है गोसाईंजी कहत कि स्वप्ने कैसो सुख द्वै दिनकी लोकसंपदा में अपनो कुछ नहीं है तामें मन लगावते हैं ताते हे जानकीजीवन विना तुम्हारो ह्वैकै जे जग में जीवत हैं तिनको जीवन जरिजाव भाव वै मरिजाइँ तौ और को तौ न विमुखता देइँ ४१ ॥

सुरराज सो राज समाज समृद्धि विरञ्चि धनाधिप सो धनभो । पवमानसो पावक सो यम सोमसो पूषनसो भवभूषनभो ॥ करि योग समाधि समीरन साधिकै धीर बड़ो वशहू मनभो । सब जाइ सुभाइ कहै तुलसी जो न जानकिजीवन को जनभो ४२ ॥

सहित समाज इन्द्रसों राजा होइ समृद्धि कहे संपूर्ण ऋद्धि सहित ब्रह्मा सों समर्थ होइ धनाधिप कुबेर सम धनवान् होइ पवमान कहे पवन सों बलवान् होइ पावक सों तेजवान् होइ यमराज सों दण्डधारी सोम चन्द्रमा सों शीतल होइ भव जो संसार ताको भूषण कहे प्रकाशक पूषण कहे सूर्यनसम होइ योग अष्टांग यथा यम १ नेम २ आसन ३ प्रत्याहार ४ प्राणायाम ५ धारणा ६ ध्यान ७ समाधि ८ इत्यष्टांग तहां अहिंसा सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य असंग्रह इति पांच यम हैं शौच संतोष तप जप निष्ठा ये पांच नियम हैं स्वस्तिकादि चौरासी आसन हैं तामें चारि मुख्य हैं यथा योगशास्त्रे ॥ सिद्धपद्मं तथा सिंहं भद्रश्चैव चतुष्टयं इत्यादि ॥ आसन प्रत्याहार कहे अद्धा न स्वल्पाहारी यथा योग शास्त्रे ॥ सस्निग्धमधुराहारश्चतुरांशे विवर्जितः । भुज्यते हरिसं प्रीत्यै मिताहारः स उच्यते ॥ प्राणायाम कहे मन्त्रयुक्त दक्षिण श्वासा खैंचै आठ बार सो पूरक है थांभि राखै बत्तिस बार सो कुम्भक है वाम श्वासा सोरह बार करि छांड़ै सो रेचक है याते चित्त में प्रकाश होत है इति प्राणायाम धारणा कहे नासिकाग्रभाग दृष्टिदै नाभीचक्रादि वस्तु बिषे चित्त स्थिर करना इति धारणा है चित्तका ध्येयाविषयक जो वृत्ति प्रवाह सो ध्यान है इत्यादि भेदशून्य अर्थमात्र कामना होइ जेहिमो सो समाधि है इत्यादि योगकरि समाधि लगाइ पुनः समीर कहे वायु यथा हृदय में प्राण गुदामें अपान नाभी में समान कंठ में उदान सब देह में व्यान श्रीराम नाभी में नाग नेत्र में कूर्म क्षुधा में कृकल जमुहाई में देवदत्त मृत्यु में धनंजयादि समीरनको साधिकै बड़ो धैर्यमान है मनहूको जीतिलये गोसांईजी स्वाभाविक में कहत कि जो जानकीजीवनको जन न भयो तौ योगादि यावत् साधन हैं सो

जाय कहे वृथाहैं यथा रुद्रयामले ॥ ये नराधमलोकेषु रामभक्ति-पराङ्मुखाः ॥ जपं तपं दया शौचं शास्त्राणामवगाहनम् ॥ सर्वं वृथा विना येन शृणुध्वं पार्वति प्रिये ४२ ॥

कामसे रूप प्रताप दिनेशसे सोमसे शील गणेश से माने । हरिचन्दसे सांचे बड़े विधिसे मघवासे महीप विषयसुखसाने ॥ शुकसे मुनि शारदसे वकता चिरजीवन लोमशते अधिकाने । ऐसे भये तौ कहा तुलसी जोपै राजिवलोचन राम न जाने ४३ ॥

कामसमान रूपवान् होइ दिनेश कहे सूर्यसम प्रतापवान् होइ सोम कहे चन्द्रमासम शीलवान् होइ गणेश से माने कहे पूज्यमान होइ हरिश्चन्द्रसे सांचे कहे धर्मवान् होइ ब्रह्मासों बड़ो भयो विषय रससाने सुरसहित मघवा कहे इन्द्रसे राजा भयो शुकदेव ऐसो मुनि भयो शारदा से वक्ता विद्वान् भये चिरंजीवन में लोमश से आयुर्बल भयो इत्यादि सब गुण पूर्ण भयो औ राजीवलोचन श्रीरघुनाथजी को न जान्यो भक्त न भयो ताको गोसाईंजी कहत कि सब गुण भये ते का भयो आखिर सब गुण लौकिक नाशवान् हैं भक्ति अचल है राजीवलोचन रामेत्यर्थः ॥ तत्र रेफः परमब्रह्मवाचकः स श्रीरामस्य लोचनकञ्जयोः तेजः यथा महा-रामायणे ॥ तेजोरूपमयो रेफो श्रीरामाम्बककञ्जयोः ॥ कोटिसूर्य-प्रकाशश्च परब्रह्म स उच्यते ॥ पुनः रेफस्याकारः प्रकाशवाचकः ॥ स श्रीराममुखमण्डलस्य तेजोरूपः यथा ॥ रामास्यमण्डलस्यैव तेजोरूपे वरानने ॥ कोटिकंदर्पशोभाढ्यो रेफाकारोहिविद्धि च ॥ पुनः दीर्घाकारः जगत्स्थितिवाचकः स श्रीरामवक्षसस्तेजरूपः यथा मध्याकारो महारूपः श्रीरामस्यैव वक्षसः पुनः जीवशब्दोजगत्पा-

लने सगुणवाचकः॥ ताते राजीवकी उत्पत्ति पालन दिव्यगुणादि अर्थ भयो यथा रामानुजकृतमंत्रार्थे ॥ राम एव हि लोकानां उत्पत्ति-स्थितिकारकः । एवंभूतो व्यापनशीलः श्रीरामो रकारार्थः रकारवा-च्या रादाने इति धातोः राति गृह्णाति कुक्षौ विश्वमिति रः रा दी-प्ताविति धातोः राति प्रकाशते इति रः इत्यनेन जगज्जन्मादिकर्तृ-त्वेन रकारस्य सर्वेश्वरत्वञ्जगत्कारणत्वञ्च सिद्धं उक्तञ्च हारीते॥ रकारमैश्वर्यबीजन्तु मकारस्तेन संयुतः । अवधारणयोगेन रामो यस्मान्मनुः स्मृतः ॥ यद्वा रमु क्रीडायामिति धातोर्डप्रत्यये रमयति सुखदुःखादिदातृत्वेन विश्वमिति रः ॥ एतेन जगत्पालकत्वं सिद्धं यद्वा रमधातोर्विसर्गार्थिकत्वं तदा जगतो रमयति उत्पादयति इति रः इत्यनेनाखिलब्रह्मांडानंतापरिच्छिन्नैश्वर्यविशिष्टोपहतपाप्मावि-ज्वरो विमृत्युर्विशोको विजिघित्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्य-संकल्प इत्यादिगुणविशिष्टत्वं सिद्धं अयं रकारो योगरूढः तत्र योगेन जगज्जन्मादिकर्तृत्वाकर्तृत्वं प्रसिद्धं रूढ्या तु अखण्डब्रह्म-वाचकत्वं परवाचकत्वेन प्रधानः सर्ववेदाश्रयत्वाच्च सर्वलोकस्य कार-णत्वात् ईश्वरप्रतिपाद्यत्वादखण्डब्रह्मवाचक उक्तञ्च ॥ वीर्ये यथा स्थितो वृक्षः शाखापल्लवसंयुतः । तथैव सर्ववेदा हि रकारेषु व्यवस्थिताः ॥ रकाराज्जायते ब्रह्म रकाराज्जायते हरिः रकारा-ज्जायते शम्भुः रकारात्सर्वशक्तयः ॥ आदावंते तथा मध्ये रकारेषु प्रतिष्ठितः । विश्वं चराचरं सर्वमवकाशेन नित्यशः ॥ यथा करण्डे रत्नानि गुप्तन्यन्यैर्न दृश्यते । तद्वन्मन्त्राश्च वेदाश्च रकारेषु व्यवस्थिताः ॥ इति पुलहसंहितावचनात् रघुनाथस्य साक्षाद्रकार-वाच्यस्य परब्रह्मवाचकत्वं सिद्धम् ॥ तहां रेफको अर्थ परब्रह्म भयो रेफकी अकार को शोभामय प्रकाश भयो भाव अकार सहित रेफ प्रकाशमय सोहत अरु दीर्घ अकार उत्पत्ति पालन अर्थ भयो

औ सौशील वात्सल्य करुणा दयादि जो दिव्य गुण हैं ते जीव शब्द को अर्थ गुणनिधि भयो लोचन कहे दयादृष्टि है सदा जिनके ऐसे राजिवलोचन को जे न जानैं तौ रूपादि यावत् गुण हैं ते सब वृथा हैं ४३ ॥

झूमत द्वार अनेक मतंग जँजीर जरे मद अंबुचुचाते । तीखे तुरंग मनो गति चञ्चल पौनके गौनहुते बढ़ि जाते ॥ भीतर चन्द्रमुखी अवलोकति बाहिर भूप खड़े न समाते । ऐसे भये तौ कहा तुलसी जो पै जानकीनाथके रङ्ग न राते ४४ ॥

मदअम्बु कहे मदको जल गंडस्थल में चुचुवात ऐसे मस्त मतंग कहे हाथी अनेकन जँजीरन में जकड़े जिनके द्वारपै झूमत हैं औ तीखे कहे तीक्ष्ण मनोगति जिनकी मनकी ऐसी गति ऐसे चंचल हैं जो पवनहूं की गौन ते बड़ो वेगते बढ़ि जाते हैं ऐसे घोड़े समूह जिनको प्राप्त हैं सुन्दर मंदिर के भीतर चन्द्रवदनी स्त्री अवलोकत कहे आज्ञा निहारत है बाहर द्वारपै समूह भूप खड़े जो दरबार में अँबात नहीं ऐसे ऐश्वर्यवान् भयो तौ काह भयो अन्तसमय कोऊ संग न जाहिंगे गोसाईंजी कहत कि जो पै जानकीनाथ के रंग न राते भाव श्रीरघुनाथजी की प्रीति रंग में जिनको मन रँगि न गयो रामानुरागी न भयो तौ सब ऐश्वर्य वृथा है यथा भागवते ॥ रायः कलत्रं पशवः सुतादयो गृहा मही कुञ्जरकोशभूतयः ॥ सर्वेऽर्थकामाः क्षणभंगुरायुषः कुर्वन्ति मर्त्यस्य कियत्प्रियं चलाः ४४ ॥

राज सुरेश पचासकको विधिके करको जो पटो

लिखि पाये । पूत सपूत पुनीत प्रिया निज सुन्दरता रतिको मद नाये ॥ संपति सिद्ध सबै तुलसी मनकी मनसा चितवै चित लाये । जानकिजीवन जाने विना जन ऐसेहु जीवन जीवत जाये ४५ ॥

सुरेश जो इन्द्र ताके पचास गुण राजा होइ ताको पट्टा कहे पुष्टता को पत्र ब्रह्मा के हाथ को लिखा पायो भाव कल्पान्तलों बनोरहै पुनः पुत्र सपूत होइ पुनीत प्रिया कहे पतिव्रता स्त्री होइ जाने अपनी सुन्दरताके आगे रतिको मान मर्दन करो है सम्पति कहे सम्पूर्ण द्रव्य सिद्धि यथा देह अनुरूप को प्राप्ति सो अणिमा है स्थूलरूप सो महिमा लघु देह होइ सो लघिमा है सहित देवता परेन्द्रिय में प्रवेश होइ सो प्राप्ति है दिव्यदृष्टि सो प्रकाम्य है माया के अंश प्रेरणा सो ईशिता है विषयभोग में मन स्ववश सो वशिता है मनोरथ प्राप्ति सो अवश्यति है इत्यष्टौ सिद्धि भगवत्प्रधान हैं पुनः क्षुधादि रहित सो अनूर्मित्व है दूरि वस्तु देखना दूरदर्शन दूरे श्रवण मनसम गति देह सो मनोजव है इच्छारूपधारी कामरूप है अपर में प्रवेश परकाय प्रवेश है इच्छामरण स्वच्छन्द मृत्यु है देवसम अप्सरन की क्रीड़ा प्राप्ति सो देवानां सहक्रीड़ा दर्शन है संकल्प प्राप्ति सो यथा संकल्प है जाकी आज्ञा अभंग सो आज्ञा अप्रतिहतगाति है इति दश सिद्धी गुणसम्बन्धी हैं तीनिउँ कालकी बात जानै सो त्रिकालज्ञत्व है शीतोष्णजित सो अद्वंद्व है पराये चित्तकी बात जानै सो परचित्ताभिज्ञाता है अग्न्यादि के तेजको थांभै सो अग्न्यर्कांबुविषादीनां प्रतिष्टम्भ है काहूसों पराजय न होइ सो अपराजयहै इति पांच सिद्धी तुच्छ हैं सब तेइस सिद्धी हैं ते सब मनकी मन से चित्त लगाय कै चितै रहीं भाव

जो मनोरथ होइ सोई करैं गोसाईंजी कहत कि जानकीजीवनको विना जाने से ऐसेउ जन हैं ते जीवत में जीवन जाये कहे मृतक समान हैं ४५ ॥

कृश गात ललात जो रोटिनको घर बात घरे खुरपा खरिया । तिन सोनेके मेरु से ढेर लहे मन तौ न भरो घर पै भरिया ॥ तुलसी दुख दूनों दशा दुहूं देखि कियो मुख दारिदको करिया । तजि आश भो दास रघुपतिको दशरत्थके दानि दयादरिया ४६ ॥

आपनो काल पाय दुष्टकर्म उदयते दारिद्र प्रकाश क्लेश आतप पीड़ित ताते गात कहे देह कृश कहे दूबरि हैरही क्षुधा सोई उष्ण आकुलीते अन्नशीतलता चाह ताते रोटी कहे भोजन की चाहते ललचात फिरत हैं घरे कहे घर बिषे घरबात कहे घरकी मर्यादा सिरिफ खुरपा खरिया है भाव घास छोलि बेचिबो जीविका है तिनहीं को कोऊ काल पाइकै सुकर्म उदय भयो भाग्य प्रकाश ते सुख शीतलतारूप सोने के मेरु पहाड़ सम धनको ढेर लहे कहीं पाये ताते घर तौ भरिभया पै मन नहीं भरो आशा बनी रही गोसाईंजी कहत कि दूनोंदिशा दूना दुःख देखि अर्थात् दारिद्र दशा में जो सुखकी आशा रहै सोई सुख दशा में आशा बनी रही इत्यादि दोऊ दशा में आशारूप दूनों दुःख देखिकै दारिद्रको मुख करिया कहे स्याही लगायकै मनरूप देशते निकारि दिये भाव आशा छांड़ि दिये ते सुखी हैगयो यथा ॥ आशापाशैव ये दासास्ते दासा जगतामपि । आशा दासीकृता येन तस्य दासायते जगत् ॥ ताते आशको तजिकै श्रीरघुपतिको दास भयो जे दशरथनन्दन दया के दरिया कहे समुद्र हैं ४६ ॥

को भरि है हरिके रितये रितवै पुनि को हरि जो भरि है। उथपै तेहि को जेहि राम थपै थपिहै तेहि को हरि जो टरि है॥ तुलसी यह जानि हिये अपने सपने नहिं कालहुते डरि है। कुमया कछु हानि न औरनकी जौ पै जानकीनाथ मया करि है४७॥

हरि श्रीरघुनाथजी के रितये कहे खाली किहे ताको और को भरि है लङ्का दुष्ट राक्षसन ते खाली करे ताको कोऊ न भरिसक्यो अरु हरि जाको भरि हैं ताको पुनः कौन रितवै कहे खाली करैगो यथा विभीषण को लङ्का में भरे ताको कोऊ न खाली करि सक्यो अरु जाको श्रीरघुनाथजी थापि हैं ताको कौन उथापै कहे उखारैगो यथा ध्रुव प्रह्लाद अम्बरीष हैं अरु जाको हरि टारि हैं ताको कौन थापैगो यथा हिरण्यकश्यप बालि जो जन शरण आवै ताको अभय करिदेत यथा बाल्मीकीये ॥ मित्रभावेन संप्राप्तं न त्यजेयं कदाचन। दोषो यद्यपि तस्य स्यात्सतामेतदगर्हितम्॥ सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते। अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम ॥ ताते जाकी श्रीरघुनाथजी रक्षा करत ताको काहूकी भय नहीं है ऐसो अपने हियेमें जानि गोसाईंजी कहत कि हम सपनेहू में कालहू को नहीं डरते हैं काहेते जो जानकीनाथ कृपा करि हैं तौ और देवादि की कुमयाते हानि नहीं ४७॥

व्याल कराल महाविष पावक मत्त गयन्दन के रद तोरे। शासति सङ्कि चली डरपैहुते किङ्करते करनी मुख मोरे॥ नेकु विषाद नहीं प्रह्लादहिं कारण केहरिके बलहोरे। कौन कि त्रास करै तुलसी जो पै राखि हैं राम तौ मारिहै कोरे ४८॥

हिरण्यकश्यप प्रह्लादजी के ऊपर व्याल कहे सर्प कराल छुड़ाइ दिये ते शङ्का मानि भागे महाविष हालाहल दिये सोऊ निर्विष है गयो पावक में फूंकि दियो सोऊ शीतल भई मत्तगयन्द छांड़े तिनके दांत रघुनाथजी तोरे ताते भागे इत्यादि यावत् शासति किये सो सब शंका करि भागि चलो ताते शासति करनेवाले जे किंकर तिनके हुते तेऊ आपनी कुटिल करणी को डर मानि तापै मुँह फेरिलिये भाव अब हमते यह काम न होइगो अरु प्रह्लादजी को नेकु कहे थोरहू विषाद न भयो याको यह कारण कि केहरि कहे नरसिंह तिनको बल है रह्यो गोसाईंजी कहत कि कौनकी त्रास करै जोपै श्रीरघुनाथ राखिहैं तौ और कौन मारिहै ४८॥

कृपा जेहिकी कछु काज नहीं न अकाज कछू जेहिके मुख मोरे। करै तिनकी परवाहि को जाहि विषान न पूंछ फिरै दिनदोरे॥ तुलसी जेहिके रघुवीर से नाथ समर्थ सुसेवत रीझत थोरे। कहा भवभीर परी तेहि धौं बिचरै धरनी तिनसों तृण तोरे ४९॥

जे धन राजादि मद में माते हरिसनेहिनसों विमुख तिनको कहत कि जाकी कृपा किहे आपनो कछु काज नहीं अरु जाके मुखफेरे आपनो अकाज नहीं तिनसों जो हरिसनेही होइ तौ विषय सनेहिनते परवाहि करै काहेते जाहि कहे जिनके विषाण कहे सींग पूंछ हीन मुण्डे बांड़े पशुसम दौरे फिरते द्वै दिनकी जिन्दगानी में गोसाईंजी कहत कि जाके श्रीरघुवीर ऐसे समर्थ स्वामी हैं जे थोरेही सनेह सेवाते

रीझते हैं यथा वाल्मीकीये ॥ सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते॥
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम ॥ पुनः ॥ हनुमन्नाटके॥
या विभूतिर्दशग्रीवे शिरश्छेदेऽपि शंकरात् ॥ दर्शनाद्रामदेवस्य सा
विभूतिर्विभीषणे ॥ ताते श्रीरघुनाथ ऐसे स्वामी को जो सेवक है
ताको भव कहे संसार में कहांधौं भीरपरी भाव कछु संकट न
परैगो ताते लोकमानी लोग जेहैं तिनसों सनेह तृणसमान तोरि
अभय ह्वै भूमिपै विचरै ४९ ॥

कानन भूधर वारि बयारि महा विष व्याधि द
अरि घेरे । संकट कोटि जहां तुलसी सुत मात पित
हित बंधु न नेरे ॥ राखि है राम कृपालु तहां हनुमा
से सेवकहैं जेहि केरे । नाक रसातल भूतलमें र
नायक एक सहायक मेरे ५० ॥

जो भूमिपै विचरै को कहै तामें शङ्का कि भूमिपै अनेक वि
हैं ताहेतु प्रसिद्ध कहत कि वनमें पहाड़न में नदी आदि जल
औ महाविषय की बयारि कहे जहां वन में हालाहल जहर के
वृक्ष होत ताकी बयारि लागे मनई मरि जात अरु वाराह श्र
व्याघ्र भूत ज्वरादि यावत् व्याधि हैं दावाग्नि अरु अरि घेरे को
ठग चोर भीलादि से घिरे शत्रु के सम्मुख इत्यादि कोटिन संक
जहां है तहां माता पिता पुत्र भाई हितकर कोऊ नेरे नहीं जो
सहाय करै गोसाईंजी कहत कि जहां संकट परो तहां श्रीरघुना
जी कृपालु राखिहैं संकट ते उबारि हैं तहां त्रिदेव पूज्य इतने बड़
स्वामी ते तुच्छ कामना की सहायता मांगनो सेवक की ढिठाई
ताके हेतु कहत कि जिनके हनुमान् ऐसे सेवक जे रामभक्तन
व्याधि निवारणार्थ पञ्चमुख धारे हैं चारि चारिउ दिशा को ए

आकाश को जहां भक्तन को बाधा देखत ताको तुरतही निवारत
यथा तन्त्रागमे ॥ येन भक्तेन विप्रेन्द्र सर्वापद्भ्यां विनिर्ययौ ॥
कुर्वन्तु शरणं तस्य सर्वशत्रुहरं परम् ॥ पुनः ब्रह्माण्डपुराणे ॥
श्रीरामहृदयानन्दं भक्तकल्पमहीरुहम् ॥ अभयं वरदं द्वाभ्यां कलये
मरुतात्मजम् ॥ ताते नाक कहे रसातल तहां देव नागादि की जो
भय भूतल में शत्रु आदि भय यावत् हैं तहां एक श्रीरघुनायक मेरे
सहायक हैं एक समय अकबर बादशाह सिद्धाई देखबे को गोसाईंजी
को बँधुवा करे ता समय यह कवित्त कहि हनुमान्जी को स्मरण
कियो तब बांदर कोटिन पैदा ह्वै दिल्ली उजारि दिये ५० ॥

जबै यमराज रजायसुते मोहिं लै चलिहैं भट बांधि
नटैया । तात न मात न स्वामि सखा सुत बंधु विशाल
विपत्ति बटैया ॥ शासति घोर पुकारत आरत कौन सुनै
चहुँ ओर डटैया । एक कृपालु तहां तुलसी दशरत्थ
को नन्दन बंदि कटैया ५१ ॥

इहांतक जीव के दोष कहे अब भय दर्शन यथा मृत्यु समय
जब यमराज की रजायसु ते भट यमगण ग्रीवा बांधि कै मोको लै
चलिहैं ता समय की विशाल कहे बड़ीभारी विपत्ति को बटैया कहे
सहायक माता पिता स्वामी सखा पुत्र भाई कोऊ नहीं है तहां
जन्मान्तर के पापनके फलहेतु यमगण दण्ड देत ताकी शासति
कहे दुख घोर कहे महाकठिन परेते आरतह्वै पुकार करत तामें
कौन सुनै चारहू ओरते डटैया कहे सब दण्डदायकै हैं अथवा
दीनकी पुकार को सुनैया दूसरा नहीं है तहांकी बन्दी काटनेवाला
एक दशरथको नन्दन कृपालु है काहेते जो अवशौ ह्वैकै नामको
उच्चारण करै तौ तुरतही सब पाप भागते हैं जैसे सिंह के त्रासते

मृग भागते यथा ब्रह्माण्डपुराणे ॥ अवशेनापि यन्नाम्नि कीर्तिते
सर्वपातकैः ॥ पुमान्विमुच्यते सद्यः सिंहत्रस्तमृगैरिव ५१ ॥

जहँ है यमयातन घोर नदी भट कोटि जलच्चर दंत
टेवैया । जहँ धार भयंकर वार न पार न वोहित नाव
न नीक खेवैया ॥ तुलसी जहँ मात पिता न सखा
नहिं कोऊ कहूँ अवलम्ब देवैया । तहँ हैं बिनु कारण
राम कृपालु विशाल भुजा गहि काढ़ि लेवैया ५२ ॥

जहां यमयातना कहे पीड़ा ताके देनेवाले कोटिन भट वी
दयारहित अरु नदी वैतरणी घोर है काहेते जामें अनेकन जलचर दां
पैनाय रहे हैं फारिखावे को जहां धारा भी भयंकर है काहेते वा
ते पार नहीं सूझि परत है औ न वोहित कहे जहाज है न नाव
न नीक खेवनहार है जो सुगम उपायते उतारै यमपुरी की व्याख्या
रामाश्वमेध में है और भागवत में पंचमस्कन्ध के अन्त अध्याय
समूहते एक वैतरणी को लिखत हौं यथा ॥ ये त्विह वै राजन्या
राजपुरुषा वा अपाखंडान् धर्मसेतून् भिदन्ति ते संपरेत्य वैतरण्यां
निपतन्ति भिन्नमर्यादा तस्यां निरयपरिखाभूतायनद्यां यादोगणै
रितस्ततो भक्ष्यमाणा आत्मना न वियुज्यमानाश्चाभिरह्यमाना
स्वाघेन कर्मपाकमनुस्मरंत उपतप्यन्ते विण्मूत्रपूयशोणितकेशनखा
स्थिमेदोमांसवसावाहिन्यामुपतप्यन्ते ॥ गोसाईंजी कहत जा
यमपुरी में माता पिता सखादि कोऊ अवलम्ब कहे सहारा
देवैया नहीं है तहां विना कारणै विन हेतु जे कृपालु श्रीरघुनाथ
तेई विशाल भुजाते गहिकै काढ़ि लेवैया हैं ५२ ॥

जहँवां हित स्वामि न संग सखा वनिता सुत बं

बापु न मैया । काय गिरा मनके जनके अपराध सबै
छल छांड़ि क्षमैया ॥ तुलसी तेहि काल कृपाल बिना
दुजो कौन है दारुण दुःख दमैया । सुजहां सब संकट
दुर्घट शोच तहां मेरो साहब राखै रमैया ५३ ॥

जहां यमपुरी में हितकर न स्वामी न संगी सखा न वनिता
न पुत्र न भाई न माता न पिता तहां काय कहे देहके गिरा कहे
वचन के औ मनादि के करे यावत् सब अपराध हैं आपने जनके
तिनको छल छांड़ि कै सत्य सत्य क्षमा करनहार श्रीरघुनाथजी
हैं यथा सनत्कुमारसंहितायाम् ॥ मानसं वाचिकं पापं कर्मणः
समुपार्जितम् ॥ श्रीरामस्मरणेनैवं तत्क्षणान्नश्यति ध्रुवम् ॥ इदं
सत्यमिदं सत्यं सत्यमेतदिहोच्यते ॥ गोसाईं कहत जा काल में
यमपुर में लेखापरी ता काल में श्रीरघुनाथ कृपालु विना दारुण
कहे कठिन दुःखको दमैया नाश करैया दूसरा कौन है एक रघु-
नाथैजी हैं यथा अध्यात्म्ये ॥ को वा दयालुः स्मृतकामधेनुरन्यो
जगत्यां रघुनायकादहो ॥ स्मृतो मया नित्यमनन्यभाजा ज्ञात्वा
स्मृता मे स्वयमेव यातः ॥ ताते जहां सब तरहते दुर्घट संकट को शोच
यहां मेरो साहब रमैया राखत है रमैया कहे जो सबको अपना में
रमावै सबमें रमै अध्यात्म्ये ॥ यस्मिन् रमन्ते मुनयो विद्ययाज्ञान-
संप्लवे ॥ तं गुरुः प्राह रामेति रमणाद्राम इत्यपि ५३ ॥

तापसको वरदायक देव सबै पुनि बैर बढ़ावत
बाढ़े । थोरेहि कोप कृपा पुनि थोरेहि बैठिकै जोरत
तोरत ठाढ़े ॥ ठोंकि बजाय लिये गजराज कहांलौं

कहौं केहिसों रदकाढ़े । आरतके हित नाथ अनाथके रामसहाय सही दिन गाढ़े ५४ ॥

ब्रह्मादिक यावत् देवताहैं ते सब तापस को बरदायकहैं भाव जो तपस्या करत ताको वर देत पुनः वाही भक्तके बाढ़े बलिष्ठ भयेपर सबै देव वैर बढ़ावत यथा हिरण्यकश्यप तपस्या करै तब ब्रह्माजी वरदान दै अचल करैं पुनः जब बलिष्ठ परो तब बैर बढ़ाय ईश्वर ते प्रार्थना करे कि यहि दुष्टको बध करौ जब मरि कै फिरि रावण भयो तपस्या करो तब फिरि वर दै अचल करे जब रावण बलिष्ठ भयो तब फिरि वैर बढ़ाय ईश्वर ते प्रार्थना करे कि रावण को मारो ताते कोप करत तो थोड़े दिनको कृपा करत तो थोड़े दिनको अरु बैठिकै प्रीति जोरत औ ठाढ़े होतही प्रीति तोरि देत तहां बैठबे उठबे की अवधि क्षणमात्र की है भाव क्षणही में प्रीति क्षणही में बैर ताते सब देवनकी करतूतिरूप सिक्का को गजराज ने ठोंकि बजाइ परखि लियो सब खोटेही ठहरे क्यहिसों क्यहिसों गजराज ने रद कहे दांत भाव खीसें काढ़ि विनय कासों नहीं करे यह कहांतक कहौं सबसों पुकार करे काहू देवने ग्राह सों न उबारे एक रघुनाथजी उबारे ताते आरत दुःखित के हितकर औ अनाथके नाथ औ गाढ़े दिनके सहायक श्रीरघुनाथजी सही कहे सांचे हैं ५४ ॥

जपयोग विराग महा मखसाधन दान दया दम कोटि करै । मुनि सिद्ध सुरेश गणेश महेश से सेवत जन्म अनेक मरै । निगमागम ज्ञान पुराण पढ़ै तपसानल में युग पुंज जरै । मनसों प्रण रोपि कहै तुलसी रघुनाथ विना दुख कौन हरै ५५ ॥

जप कहे सिद्धि साध्य सुसिद्धि अरि ऋणी धनी शुभ दिशा मुहूर्त्त कूर्मचक्र शोधि जीवन जनन ताड़नादि संस्कार करि मंत्र पुष्टाक्षर प्रति सहस्र सपादलक्ष पुरश्चरण भूमिशयन सत्य वचन सूक्ष्म भोजन श्रद्धा विश्वासयुत इति जप करै योग कहे यम नेम आसन प्रत्याहार प्राणायाम धारणा ध्यान समाधि इत्यष्टांग योग करै वैराग्य में चारि भेद विषय को विष सों अधिक मानै सो हेतु वैराग्य है पुनः जो विषय को व्यवहार करि वेद आज्ञा ते कर्मकरि हरि अर्पण करि फल त्यागत दूजो जो फल न खाना ताको वृक्ष क्यों लगावना याते विषय को स्वरूपै त्यागत ये द्वौ भेद स्वरूप वैराग्य हैं पुनः जो वस्तु त्यागै ताकी फिरि कुछ वासना न उठै अभिमान न आवै ताको फल वैराग्य कही पुनः सब लोकन को ऐश्वर्य्य महा विष मानि त्यागै ताकी अवधि वैराग्य कही पुनः चारि भेद तामें असार को त्यागि सार को ग्रहण सो जितमान वैराग्य है पुनः मोहदल जीति विवेकदल बलिष्ठ करै कालकी विषय जीतै सो वितरेक वैराग्य है पुनः मनादि की विषय रोंकि इन्द्रिन में ईश्वर को प्रकाश मानै सो एक इन्द्रिय वैराग्य है पुनः त्रिलोक विषय मानापमानादि को स्वरूप ही त्यागै सो वशीकार वैराग्य है पुनः चारि भेद निधन निरादर ते मन्द वैराग्य है कथादि श्रवण ते तीव्र वैराग्य जो देहैं ते वैराग्य सो तीव्रतर है जो मोक्षहू सों वैराग्य सो तीव्रतम है महा मख कहे अश्वमेध गोमेध नरमेध वाजपेय साधन कहे चारि मुक्ति हेतु प्रथम वैराग्य सो पूर्व कहि आये हैं दूसर विवेक सारासार को विचार तीसर षट् सम्पत्ति यथा वासना त्याग सम है श्रवणादि इन्द्रिन की विषय रोंकना दम है विषय ते पीठ देना उपरति है शीतोष्ण सहना तितिक्षा है गुरु वेदान्त वाक्य में विश्वास श्रद्धा है चित्त एकाग्र समाधानादि षट् चतुर्थ है मेरी मुक्ति होइगी

यह मुमुक्षुतादि चारि साधन करै मुक्ति हेतु अरु दान कहे देशकाल
सुपात्र विचारि श्रद्धा सहित वासना रहित शान्त चित्त आदर ते
देना यह दान सो करै दया कहे निर्हेत सब जीवन को सुख देना
ऐसी दया सदा करै दम कहे श्रवणादि इन्द्रिन की विषय रोंकि
देना इत्यादि कोटिन उपाय करै जीव को दुःख काहू सों नहीं
छूटै पुनः मुनि कहे मननशील सिद्ध कहे जिनको सिद्धि प्राप्त है
सुरेश जो सबल देवराज हैं गणेश विघ्ननाशक प्रथम पूज्य हैं महेश
जो सब पदार्थदाता ऐसे समर्थादि की सेवा करत अनेक जन्म
मरै जीव को दुःख काहू सों नहीं छूटै निगम कहे वेद यथा ऋग्वेद
ताको उपवेद आयुर्वेद है चिकित्सा शास्त्र वैद्यक यजुर्वेद ताको
उपवेद धनुर्वेद युद्धशास्त्र बाणविद्या सामको उपवेद गन्धर्ववेद
सङ्गीत शास्त्र गानविद्या अथर्ववेद ताको उपवेद अर्थशास्त्र
शिल्पविद्या नीतिविद्या वेदन के षडंग यथा शिक्षा १ गृह्यसूत्र २
व्याकरण ३ निरुक्त ४ छन्दशास्त्र ५ ज्योतिष ६ आगम कहे शास्त्र
प्रथम मीमांसा के जैमिनि आचार्य यामें यज्ञादि धर्म विषय है धर्म
ज्ञानही प्रयोजन है यथोक्त कर्म के अनुष्ठान करिकै पुरुषको परम
पुरुषार्थ लाभ होत है द्वितीय वैशेषिक शास्त्र याके आचार्य कणाद
मुनि यामें पदार्थ विषय है पदार्थ तत्त्वज्ञान प्रयोजन है भावाभाव
द्वै पदार्थ में द्रव्यादि छः पदार्थ भाव में ताके समान विरुद्ध धर्म
जानिये ते पदार्थन के अनेक धर्म को ज्ञान होत तामें निवृत्ति धर्म
उत्पन्न जो आत्मसाक्षात्कार ताते मोक्ष होत है तृतीय न्यायशास्त्र
याके आचार्य गौतम मुनि याको विषय प्रमाणादि सोरह पदार्थ
हैं ताको ज्ञान प्रयोजन है पदार्थ तत्त्वज्ञान ते मोक्ष होत चतुर्थ
योगशास्त्र याके आचार्य पतञ्जलि मुनि चित्तवृत्ति रोंकनी विषय
है निर्विकल्प समाधि प्रयोजन है अपने निरुपाधि रूप में स्थित सो

मोक्ष है पञ्चम सांख्यशास्त्र याके आचार्य कपिल मुनि यामें प्रकृति
पुरुष को विवेक विषय है और आत्यन्तिकी दुःखत्रय की निवृत्ति
प्रयोजन है विवेक ते मोक्ष होत षष्ठ वेदांत शास्त्र याके आचार्य वेद-
व्यास मुनि यामें जीव ब्रह्म को एकता शुद्ध चैतन्यता विषय है
आनन्द प्राप्त प्रयोजन है सारासार विवेक ते मोक्ष होत इत्यादि
सबभरबे को ज्ञान होय पुराण कहे ब्रह्म ब्रह्माण्ड वामन ब्रह्मवैवर्त्त
मार्कण्डेय भविष्यादि षट् पुराणैं राजसी हैं नारदी विष्णु वाराह
गरुड़ पद्म भागवतादि षट् पुराणैं सात्त्विकी हैं मीन कूर्म लिङ्ग
शिव स्कन्द अग्न्यादि षट् पुराणैं तामसी हैं इत्यादि को पढ़ै
सर्गादि दशाङ्ग जानै पुनः तपसानल कहे पञ्चाग्नि आदि तापतमें
पुञ्ज कहे बहुत युगलौं जरा करै परन्तु जीव को दुःख काहूसों न
छूटै ताते गोसाईंजी प्रण रोपिकै अपने मनसों कहते हैं कि हे
मन श्रीरघुनाथजी विना तेरो दुःख कौन हरैगो विना श्रीरघुनाथजी
की भक्ति सब वृथा है यथा रुद्रयामले ॥ ये नराधमलोकेषु
रामभक्तिपराङ्मुखाः ॥ जपं तपं दया शौचं शास्त्राणामवगाहनम् ॥
सर्वं वृथा विना येन शृणुध्वं पार्वति प्रिये ॥ मनसों कहिबे को यह
भाव कि कोऊ मतवाला तर्क मानै ताते अपने मन सों कहत
अनन्यता देशते ५५ ॥

पातक पीन कुदारिद दीन मलीन धरे कथरी
करवा है। लोक कहै विधिहू न लिख्यो सपनेहूं नहीं
अपने बरवा है॥ रामको किंकर सो तुलसी समुझेही
भलो कहबो न रवा है। ऐसे को ऐसो भयो कबहूं न
भजे बिन वानर को चरवाहै ५६ ॥

पातक जो पाप तिन करिकै पीन कहे मोटोहौं कुदारिद करिकै अन्न वस्त्रहीन ताते दीन दुःखित मलीन है रह्यों वसन नाते कथरी पात्र नाते करवा धरे कहे लिहे इदंदशा विलोकि लोग कहत अर्थात् अभागी हैं अरु विधिहू न लिख्यो तहां विधिको लिखना द्वै भांति होत है एक कर्माक्षर हस्तपद शीशादि की रेखा जो सामुद्रिकविद्यासों जानो जात यथा ॥ यस्य मीनसमा रेखा कर्म-सिद्धिश्च जायते । धनाढ्यः स तु विज्ञेयो बहुपुत्रो न संशयः ॥ एककाल अक्षर जो लग्न कुण्डली में जैसे ग्रह परत तैसे फल ज्योतिष जातक सों जानो जात यथा ॥ लग्नस्थाने निशानाथे त्रिकोणे जीवभास्करे । कर्मस्थाने भवेद्भौमो राजयोगःस उच्यते ॥ इत्यादि भाग्य उत्तम एकहू ब्रह्माने नहीं लिख्यो अरु आपने वर कहे श्रेष्ठता बाहै कहे हाथन को बल सपनेहूं में नहीं है कि हम कछु करि सकैंगे ताते लोक वेद आपने तीनो मतते नकाम हौं सोई तुलसी श्रीरघुनाथजी को किङ्कर सेवक जैसो भयो तैसो समुभै ही बनत है काहेते आपनी बड़ाई आपने मुखते कहिबो यह बात जगमें रचा नहीं है सलिल रीति नहीं है बल्कि दूषण है ताते अपना नाहीं कहे परन्तु और महात्माओं ने कहे हैं यथा नाभाजी भक्तमाल में लिखे ॥ कलि कुटिल जीव निस्ताराहित बाल्मीकि तुलसी भये ॥ ताते वानर को चरवाहो जो श्रीरघुनाथजी तिनके विना भजे ऐसे नाम को ऐसो समर्थ कबहूं नहीं भयो है अर्थात् जो कोऊ भयो सो रघुनाथैजीको भजिकै भयो यथा बाल्मीकि शबरी गीध निषाद अरु वानर चञ्चल पशु आलसी कादर तिनको सबल करि सुमार्ग में लगायो याते वानर को चरवाहो कहे ५६ ॥

मात पिता जग जाय तज्यो विधिहू न लिखी

कछु भाल भलाई । नीच निरादर भाजन कादर कूकुर टूकन लागि ललाई ॥ राम सुभाव सुन्यो तुलसी प्रभुसों कह्यो बारक पेट खलाई । स्वारथ को परमारथ को रघुनाथ सो साहब खोरि न लाई ५७ ॥

जग में तो माता पिता जाया कहे स्त्री नकाम जानिकै त्याग कियो और भाल जो माथ तामें भलाई भाग्यकी रेखा ब्रह्मा ने कछु नहीं लिखी ताते भाग्य ते नीच लोक में निरादर ताको भाजन कहे पात्र बाहुबल हीन ताते कादर ताते यथा कूकुर टूकन हेतु ललचात फिरत रहौं तब श्रीरघुनाथजी को स्वभाव सुन्यों कि महाउदार दानी हैं यह जानिकै एकही बार प्रभु सों पेट खलाय कै अपनी गरज कह्यो सो स्वारथ को जो सुख लोक में परमार्थ को जो सुख परलोक में सो सब पूर्णकरे याते श्रीरघुनाथ ऐसे सुसाहेब को खोरि न लगावा चाहिये जो कछु कसरि सो आगे कहत ५७ ॥

पाप हरे परिताप हरे तन पूजि भो हीतल शीतलताई । हंस कियो बकते बलि जाऊँ कहां लौं कहौं करुणा अधिकाई ॥ काल विलोकि कहै तुलसी मन में प्रभुकी परतीत अघाई । जन्म जहां तहँ रावरे सों निबहै धारि देह सनेह सगाई ५८ ॥

श्रीरघुनाथजी कृपा करिकै मेरे पाप हरे अर्थात् पावन करे काहेते जाने कि मेरो तन जग मैं पूज्य भयो और परिताप हरे सन्ताप मिटाये काहेते जान्यो कि हियतल जो हृदय तामें शीतलता आई और सर्वभक्षी पाखण्डी बकसम रहौं ताको सारासार विवेकी शुद्ध हंस सम किये ऐसे प्रभु की मैं बलि जाऊं

करुणा की अधिकारता कहांतक कहौं प्रभु की प्रतीत के बलते मन अघानो है परन्तु काल कहे समय की भयते कि या समय में कोऊ धर्म पार नहीं जात याते अथवा कालमृत्यु थोड़े दिनकी जीवन जबलग चैतन्य भयो तबलग काल पहुँचि गयो फिरि जन्म पाये जबलग चैतन्यता आई तबलग विक्षेप रहो ताते यह डर कि अल्पज्ञ जीव प्रभु सनेह भूलि न जाई याते गोसाईंजी कहत कि कर्माधीन जन्म जहां पावों तहां आपते सनेह सगाई कहे नाता सो देह भरि निबहै भाव भक्ति बनी रहै ५८ ॥

लोग कहैं अरु हौंहू कहौं जन खोटो खरो रघुनायक हीको । रावरी राम बड़ी लघुतायश मेरो भयो सुखदायक हीको ॥ कै यह हानि सहौ बलिजाउँ कि मोहूं को निज लायक हीको । आनि हिये हित जानि को ज्यों हौं ध्यान धरो धनुसायक ही को ५९ ॥

लोकों में सब कहत अरु मोहूं कहतहौं कि खोटो वा खरो हौं एक रघुनायकही को गुलाम हौं अपर को नहीं हौं महाराज यामें आपकी बड़ी लघुता है कि ऐसे महाराज ह्वैके तुलसी ऐसे कुबुद्धी को सेवक किये यही यश मेरो मेरे हृदय को सुखदायक भयो अर्थात् इतने बड़े समर्थ स्वामी को सेवक कहायो तौ मैं धन्य हौं मैं बलिजाउँ हे करुणासागर कितौ अपनी लघुता की हानि सहौ कितौ आपने किंकर होबे लायक मोहूं को करिये तहां रामभक्तन के लक्षण यथा महारामायणे ॥ अन्ये विहाय सकलं सदसच्च कार्यं श्रीरामपङ्कजपदं सततं स्मरन्ति । श्रीरामनामरसनाप्रपठन्ति भक्त्या प्रेम्णा च गद्गदगिरोऽथ हृष्टलोमाः ॥ सीतायुतं रघुपतिश्च

विशोकमूर्त्तिं पश्यन्त्यहर्निशमुदापरमेण रम्यम् । शान्ताः समानमनसः स्वसुशीलयुक्तास्तोषक्षमागुणदयामृजुबुद्धियुक्ताः ॥ विज्ञानज्ञानविरतिः परमार्थवेत्ता निर्धामकोऽभयमनः स च रामभक्तः ॥ ऐसो सुभाव जब होइ तब आपकी कैंकर्य्यता करबेयोग्य होउँ यह मेरो हित जानिकै आपने हृदय में दया आनिकै ऐसो अनन्य कीजै जामें मैं धनुशायकही को भाव धनुषधारी रूपको ध्यान करौं और रूपहू में मनु न लागै ५९ ॥

आपुहौं आपुको नीके कै जानत रावरो राम भरायो गढ़ायो । कीर ज्यों नाम रटै तुलसी सो कहै जग जानकीनाथ पढ़ायो ॥ सोइहै खेद जो वेद कहै न घटै जन जो रघुवीर बढ़ायो । हौं तौ सदा खरको असवार तिहारोई नाम गयंद चढ़ायो ६० ॥

इहांतक तौ कबित्त में भय दर्शायो अब राम सनेह नामबल दृढ़ता हेतु प्रार्थना करत हे श्रीरघुनाथजी भरायो गढ़ायो कहे बनायो मैं आपही को हौं ऐसो अपना को मैं नीकी भांति आपुही जानत हौं औ जगत् भी यही बात कहत कि याको जानकीनाथै ने पढ़ायो अर्थात् तुलसी के हृदय में भक्ति को प्रकाश रघुनाथैजी की कृपाते है अरु मैं कैसो हौं कि यथा कीर कहे सुवा सम मुख ही ते नाम रटत हौं भाव हृदय में रामसनेह नाहीं है सोई बात को मेरे मन में खेद है काहेते जो वेद कहत कि जेहि जन को श्रीरघुवीर बढावत हैं सो फिरि नहीं घटत है यथा श्रुतिः ॥ तस्मात्त्वमुद्धवोत्सृज्य चोदनां प्रतिचोदनाम् ॥ याहि सर्वात्मभावेन मामास्याह्यकुतोभयम् १ नारदीयपुराणे ॥ श्रीरामस्मरणाच्छीघ्रं समस्तक्लेशसंक्षयः ॥ मुक्तिं प्रयाति विप्रेन्द्र तस्य विघ्नो न बाधते २

तातेहौं कहे मैं तौ सदा खर को असवार रजक व चाण्डालवत् तित मलक्रिया को पात्रहौं परन्तु आपको नाम मोको गयन्द को हाथी पर चढ़ायो भाव महाराज सम मानि जगत् माथ नावत है ताकी लाज कीजै ६० ॥

छारते सँवारिकै पहाड़हूते भारी कियो गारो भयो
पांचमें पुनीत पक्ष पाइकै । हौंतौ जैसो तब तैसो अ
अधमाई कैकै भरो पेट राम रावरोई गुण गाइकै
आपने निवाजेकी पै कीजै लाज महाराज मेरी ओ
हेरिकै न बैठियो रिसाइकै । पालिकै कृपाल व्याल
बालको न मारिये औ काटिये न नाथ विषहूको
रूखलाइकै ६१ ॥

छार कहे धूरि हलकी नीच निरादर तैसो मैं रहौं ताको श्रीरघुनाथजी सँवारि कै पहाड़हू ते भारी कियो अर्थात् अचल पुष्ट उच्च पूज्यमान करि दियो औ पुनीत श्रीरामभक्ति को पक्ष पाइकै पांच कहे सन्तन की समाज में गारो कहे गरू भयो अथवा पांच कहे गाणपती सौर शाक्त शैव वैष्णवादि पांच में गरु कहे रामभक्तन में गिनती भयो अरु हौं कहे मैं तौ जैसो तब रहौं तैसो अबहूं मन शुद्ध हरिशरणही भया काहे ते अबहूं अधमता करिकै पेट भरत हौं कौन अधमाई है हे श्रीरघुनाथजी आपु को गुण गाइकै जगत् को रिझाइ पुजावत जो द्रव्यादि पावत सो पेटही में लगावत कुछ सुकृति में नहीं लगावत याते आपुके प्रसन्न हेतु नहीं गुण गावतहौं ताते अपने निवाजे को पै कहे जो आपु दया करि बड़ाई दीन्ही है तापै लाजको अर्थात् अपनी ओरते

पादृष्टि राखे रहिये अरु मेरी करणी की ओर हेरि रिसाइकै बैठिये काहे ते हे कृपालु जो व्याल कहे सर्पहू को बालक लिये तौ अपने पालेकी लाज करि ताहू को न मारिये ताही ति जो विषहूको रूख लगाइये ताहू को न काटिये तथा मैं पुही को पाल्यो पोषोहौं ६१ ॥

वेद न पुराण गान जानो न विज्ञान ज्ञान ध्यान
रणा समाधि साधन प्रवीनता । नाहिं न विराग
ग याग भाग तुलसी के दया दान दूबरो हौं पापही
पीनता ॥ लोभ मोह काम कोह दोष कोष मोसों
न कलिहू जो सिखिलई मेरिये मलीनता । एकही
रोसो राम रावरो कहावतहौं रावरे दयालु दीनबन्धु
दीनता ६२ ॥

या कवित्त में वेदादि के यावत् भेद हैं सो सब पचपन के कवित्त में बिस्तारे हैं याते यहां सूक्ष्म लिखत हौं चारिउ वेद अठारहौं पुराणादिको गान कछु नहीं जानतहौं ज्ञान कहे अपनो रूप चीन्हिबो विज्ञान कहे ब्रह्मको जानिबो ध्यान कहे इष्ट में चित्त लगावना धारणा कहे नासिकाग्र दृष्टि दे नाभिचक्रादि वस्तु बिषे चित्त स्थिर करना समाधि कहे अखण्ड ध्यान इष्ट में लय होना ताके जो साधन यम नियमादि की प्रवीणता एकहू नहीं है विराग कहे विषय को त्याग योग अष्टांग करि मन स्थिर करना कहे याग अश्वमेधादि तुलसी की भाग्य में एकहू नहीं है एक श्रीरघुनाथजी की दयारूप दान पाइबे को दूबरो कहे भूखा हौं अरु अपने पापन करिकै पीनता कहे मोटा हौं

काम क्रोध लोभ मोहादि दोषन को कोष कहे खज़ाना मो समान दूसरे जहान में कौन है जो कलियुग ने जो रीति सिखिलई है सो मेरीही मलीनता है ताते मो समान कुटिल दूसरा नहीं है जो कहौ ऐसे कुटिलहौ तौ तुम श्रीरामदास काहे को कहावते हौ ताको कहत हे श्रीरघुनाथजी रावरे दयालु दीनबन्धु हौ भावदीन पर अकारण दया करि कृतार्थ करते हौ अरु मेरे दीनताहै याही एक भरोसे सों मैं आपको दास कहावत हौं नहीं तौ न कहावतो ६२॥

रावरो कहावौं गुण गावौं राम रावरोई रोटी द्वैहौं पावौं राम रावरीहि कानिहौं । जानत जहान मन मेरेहू गुमान बड़ो मान्यो मैं न दूसरो न मानत न मानिहौं ॥ पांच की प्रतीत न भरोसो मोहिं आपनोई तुम अपनाइहौ तबैही परि जानिहौं । गढ़ि गुढ़ि छोलि छालि कुन्द कैसी भांई बातैं जैसी मुख कहौ तैसी जीय जब आनिहौं ६३ ॥

हे श्रीरघुनाथजी रावरो कहे आपही को गुलाम कहावौं अरु आपहीके करुणा दया उदारता सों शीलादि जो समूह गुण हैं तिन को गावौं पुनः राम कहे रकार मकार जो द्वै वर्ण हैं तेई द्वै रोटी पावौं अर्थात् श्रीरामनाम ही की उर में भूख है अरु कानि कहे मर्यादा लाज आपही की है अरु अनन्यता मेरी को जहान जानत॥ यथा तुलसी मस्तक तौ नवे जब धनुष बाण लेउ हाथ इत्यादि व्रत ते प्रसिद्ध है कि गोसाईंजी अनन्य रामोपासक हैं यह लोक जानत है अरु मेरेहू मन में बड़ो गुमान है अनन्यता को यथा ॥ एक भरोसो एक बल एक आश विश्वास । स्वाति बुन्द

रघुवंशमणि चातक तुलसीदास ॥ इत्यादि दूसरे को न आगे मान्यो है न अब मानतहौं न पीछे मानिहौं पांच कहे ब्रह्मा विष्णु महेश देवी गणेशादि पंच देवनकी मोको प्रतीति नहीं है अथवा पांच कहे पंच जग के लोग जो मोको श्रीरामभक्त कहत सो मोको प्रतीति नहीं है औ अपनोई कहे आपनी अनन्यता की मोको प्रतीति नहीं है कि यामें मैं भक्त ह्वै गयों हे श्रीरघुनाथजी जब तुम अपनैहौ तामें जब परिहौं तब आपही जानि जैहौं कौन भांति ताको कहत यथा कुदेर लकड़ीको गढ़ि डौलयावत छोलिकै सफा करत भाई कहे खरादिकै चीकनी करत तैसे मेरी बातैं यथा गुण गावौं आपुको कहावौं नामकी भूख है इति गढी गुढी है दूसरे को नहीं मानत हौं यह मेरे गुमान है ताको जहान जानत इति छोली छाली है पांचकी न प्रतीति न आपनो भरोसो आपके भरोसे हौं इति कुन्द कैसी भाई इत्यादि बातैं जो मुखसों कहत हौं तैसी जब मेरे जीव में करि देहौ तब जानिहौं कि मोको आपनो गुलाम बनायो ६३ ॥

वचन विकार करतब हू खुवार मन विगत विचार कलिमलको निधानु है । रामको कहाई नाम बेचि बेचि खाइ सेवासंगति न जाइ पाछिले को उपखानुहै ॥ तेहू तुलसीको लोग भलो कहै ताको और दूसरो न हेतु एक नीके कै निदानु है । लोकरीति विदित विलोकियत जहां तहां स्वामी के सनेह श्वानहूको सनमानु है ६४ ॥

वचन विकार कौन विकारता है कहत नाम बेचि बेचि खाउँ

द्रव्य पाइबे हेतु जगत् में श्रीराम नामको माहात्म्य सुनावत हौं करतब खुवार कहे कर्म खोटे हैं कौन भांति श्रीरघुनाथजी की सेवा पूजा नहीं करतहौं अरु मन विचाररहित कालिमल कहे पाप को निधान कहे घर ह्वै रहो हौं भाव विचार नहीं पापही मनमें भरो है काहेते सत्संगतिमें नहीं जात है तहां रामदास कहाई औ वचन कर्म मनादि में बेकार तौ काहे ते रामदास सब कहत तापै पिछले लोगन की कहनूति उपखान कहे मसलापर बात कहनो सो अंत में कहैंगे ऐसो तुलसी कुटिल ताहू को लोग भलो कहत ताको और दूसरो हेतु नहीं है निदान कहे कारण एक यही रीति लोक में विदित जहां तहां विलोकियत कहे देखियत है कि स्वामी के सनेह श्वानहूं को सन्मान है यही उपखान कहनूति है यथा ॥ ज्यों स्वामि मया कूकुर सनमान । त्यों राम कृपा तुलसीको मान ॥ पुनः ॥ घटहिं राम दुनियां सब हारी। टेढ़ लरिका गाउँ गोहारी ६४ ॥

स्वारथको साज न समाज परमारथको मोसो दगाबाज दूसरो न जगजाल है । कैन आयों कौं न करोंगो करतूति भली लिखी न विरञ्चिहू भलाई भूलि भाल है ॥ रावरी शपथ रामनामहीं की गति मो इहां झूठो झूठो सो तिलोक तिहूं काल है । तुलसी को भलो पै तुम्हारे ही किये कृपालु कीजै न विलंब बलि पानी भरी खाल है ६५ ॥

स्वार्थ को साज कहे लोक सुखके जो अंग हैं यथा ॥ सुन्दरी वनिता १ अतरादि सुगन्ध २ सुन्दर वसन ३ भूषण ४ गानतान ५

तांबूल ६ उत्तम भोजन ७ गजादि वाहन ८ इत्यष्टौ सौभाग्य अंग यथा ॥ भगवद्गुणदर्पणे ॥ सुगन्धं वनिता वस्त्रं गीतं ताम्बूल-भोजनम् ॥ भूषणं वाहनश्चेति भाग्याष्टकमुदीरितम् ॥ १ ॥ इत्यादि एकहू नहीं है परमार्थ को समाज कहे तीर्थ व्रत यज्ञ तप जप ज्ञान योग्य वैराग्य शांति संतोषादि ते एकहू नाहीं हैं जाल कहे माया प्रपंच यावत् जगत् है तामें मो समान दगाबाज दूसरो नहीं है औ भली करतूत कहे सुकर्मादि न आगे कै आयों है न अब करत हौं न फिरि करिहौं भलाई कहे सुखद रेखा माथे में ब्रह्मा भूलिहू कै नहीं लिखी हे श्रीरघुनाथजी रावरी कहे आपुकी शपथ करि कहत हौं कि मेरे एक श्रीरामनामहीं की गति है और को आश भरोसा नहीं है यह मैं सांची कहत हौं काहे ते आपके इहां जो झूठा है सो तीनहूं लोक तीनहूं काल में झूठा वाको विश्वास कोऊ न करैगो ताते मेरी बातको प्रमाण करिये हे कृपालु तुलसी को भलो तुम्हारे ही कियेपै होइगो याते अब विलम्ब न करिये काहेते पानी भरी खाल है यह उपखान कहनूति है यथा पानी भरी खाल रहि नहीं सकती है शीघ्रही सरिजाती है तथा देहको ठेकाना नहीं तहां ईश्वरकी भलाई तौ जीवके हेतु है देह अनित्य की क्यों सन्देह करैं याको यह भाव कि जो कहे हैं कि तुलसी को भलो पै तुम्हारे ही किये कृपालु तहां तुलसी नाम देह मात्रको है ताते यही देह अपनो गुलाम करि लीजै जामें दूसरी देह न धरिबे परै ६५ ॥

रागको न साज न विराग योग याग जिय कायर न छांड़ि देत ठाटिबो कुठाटको । मनोराज करत अकाज भयो आजु लगि चाहे चारु चोर पै लहै न

टूक टाटको ॥ भयो करतार बड़े कूरको कृपालु अति पायों नाम पारस हौं लालची बराटको । तुलसी बनी है राम रावरे बनाये नातौ धोबी कैसो कूकुर न घरको न घाटको ६६ ॥

राग कहे लोकस्नेह ताको साज कहे अष्टांग भोग यथा वनिता सुगन्ध वसन भूषण गान तांम्बूल भोजन वाहनादि सो एकहू नहीं है औ विराग कहे संसार के त्याग में योग अष्टांग यथा ॥ यम नेम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि अरु याग अश्वमेधादि सोऊ नहीं है सुख के हेतु अनेक उपायरूपी कुठाटको ठाटब ताको जीव कादर छांड़ि नहीं देत कायर याते कहे कि कीन एकौ नहीं होत वासना सबकी राखत इत्यादि मनोराज कहे मनोरथ करत आजुतक अकाज भये काहे ते चारु चीर कहे सुन्दर दुशाला जरबफ्तादि की तौ चाह करत अरु लहै कहे पावत नहीं टाटको पुरानो टूकरा भाव बड़े सुखकी चाह औ थोरहू सुख नहीं पावतो ऐसो मैं कूर कहे कपटी ताहूपै करतार कृपालु भयो काहेते बराट कहे कौड़ी को मैं लालची भाव तुच्छ देव व भूतादि की चाह अरु पायों पारससम श्रीराम नाम ताते तुलसी की जो बनिहै सो हे श्रीरघुनाथजी रावरे कहे आपुके बनाये बनि है नाहीं तौ धोबी कैसो कूकुर न घरको न घाट को यह कहनूति उपखान है अर्थात् जो श्रीरघुनाथजी कृपा न करैं तौ लोक परलोक एकहू न बनि परी यथा ॥ घाटै जाय धोबिनियां मारै घरमा दीन्हों फरका । धोबीकेरो कूकुर ऐसो घाटक भयो न घरका ६६ ॥

ऊंचो मन ऊंची रुचि भाग नीचो निपटही लोक-

रीति लायक न लंगर लबारुहै । स्वारथ अगम परमारथ की कहां चली पेटकी कठिन जग जीवको जवारुहै ॥ चाकरी न आंकरी न खेती न बनिज भीख जानत न कूर कछू किसम कबारुहै । तुलसी की बाजी राखी रामहीके नाम नतु भेंट पितरनसों न कहूमें बारुहै ६७ ॥

ऊंचो मन कहे मान बड़ाई आदि को मनोरथ है ऊंची रुचि कहे भूषण वसनादि भोजन छादनादि नीके की चाह औ भाग्य निपट नीचो है भाव एकहू आश पूर्ण नहीं है लोकरीति कहे यथा शीलता उदारता कोमलता सत्कारता धैर्य धर्मादि जो उत्तम लोकरीति है ताके लायक एकहू नहीं हौं काहे ते लंगर कहे कुमार्गी लबारु कहे झूठाहौं स्वार्थ कहे भोजन वसन इच्छा-पूर्वक मिलनो यही अगम है तौ परमार्थ कहे परलोक की कहां चली है काहे ते पेटभरि भोजन मिलिबो सुख जग में कठिन है औ जीव सुखतौ जबारु कहे जानहारै है काहेते जब क्षुधा लागत तब धर्म कर्म कुछ नहीं बनि परत है तहां क्षुधा पूर्ण को जो उपाय यथा चाकरी सोऊ नहीं आंकरी कहे खानि ते खोदि कोऊ पदार्थ मिलत सोऊ नहीं खेती नहीं बनिज भीख अरु काहूभांति कबारु नहीं जानत काहे ते सुभाव कूर कहे टेढ़ा है ताते जीविकाकी एकौ सूरति नहीं है तौ क्षुधावन्त ते परमार्थ कैसे बनै औ चौरासी लक्ष योनिरूप कोठा घूमि नरदेह रूप चौपर कीसी बाजी आई जो अबकी पांसा न परो भाव हरि शरण न भये तौ फिरि वाही चौरासी को गयो तैसे नरदेह रूप तुलसी की बाजी

को श्रीरघुनाथजी के नामही ने राखी भाव कृपाकरि अपनो करि
लियो जो प्रभु कृपा न करते तौ मेरे जीवोद्धार की कुछ सूरति
न रहै कौनभाँति यथा भेंट पितरन सों न मूड़हू में बारु है यह
कहनूति उपखान है यथा पितरनको भेंट देबेको वृषोत्सर्ग तेरहीं
नित्यकुम्भ बरषी श्राद्ध गया पीछे क्षौरकर्म भी पितृकाजही है
तहां और कर्म की को कहै पितृ भेंट देबे को मूड़ में बारभी नहीं
है कि क्षौरकर्म भी तौ कराय डारिये तैसे हरि शरणागत को
उपाय मो में एकहू नहीं है ६७ ॥

अपतउतार अपकारको अगार जग जाको छां
छुये सहमत व्याधबाधको । पातक पुहुमि पालिबे को
सहसाननसो कानन कपटको पयोधि अपराधको ॥
तुलसी से वाम को भो दाहिनो दयानिधान सुन
सिहात सब सिद्ध साध साधको । रामनाम ललि
ललाम कियो लाखनि को बड़ो कूर कायर कपू
कौड़ी आधको ६८ ॥

अपतउतार कहे पतितन में पतित अपकार कहे पर अक
कारक जो कर्म ताको अगार कहे घरुहौं जग में अपावन कैसो है
कि व्याध जो जीवहिंसक बाधक विघ्नकर्त्ता तेऊ जाकी छां
छुवत सहमत डरे हैं काहेते पापरूपी पृथ्वी पालिबे को सहसान
जो शेष समहौं भाव भूमिसम गरु भारी पाप शीशपर धरे मो
बोझ नहीं जानि परत है औ कपट को कानन कहे वन हौं अ
अनेक कपट करतहौं अपराधको पयोधि कहे समुद्र हौं ऐसे तुल
वाम कहे कुटिल को दयानिधान श्रीरघुनाथजी दाहिने भ

भाव अपनी शरण करिलियो ताको देखि सुनिकै अणिमादिक
सिद्धी प्राप्तवाले सिद्ध मन वश करनवाले साधु साधना करने-
वाले साधकादि सब सिहात कहे ललचात कि हम ऐसे न भये
जो कैसो भयो ताको कहत कि ऐसो बड़ो कूर कहे कुमार्गी
कायर कहे धर्म कर्म करिबे में कादर कपूत कहे कुलधर्म सों विमुख
ऐसो नकाम आध कहे फूटी कौड़ीको पोंगी कौड़िउको नहीं ऐसे
तुलसी को श्रीरामनाम ने ललित कहे सुन्दर ललाम कहे रत्न
करि दियो जो लक्षनके मोल को अथवा कपूत यथा क कहे जल
ताकी पूत आसमानी पत्थर कपूतहै सो कूर बड़ो याते कहे कि
जहां गिरत तहां कृषी दालि डारत कायर याते कहे कि घाम
पारि लागतही गलिजात मोल जाको कौड़ीको नहीं ऐसो कूर
कादर कपूत हिमोपलसम तुलसी को श्रीरामनामने लाखन के
मोलको सुख पुष्ट हीरा बनायो जो लोकमें प्रकाशित है यह अर्थ
म याते करे कि तंत्रन में हिमोपल को हीरा है जानेकी क्रिया
लिखी है परन्तु शक्तिवान् को काम है यथा श्रीरामनाम तुलसी
को पावन करे क्रिया यथा ॥ चनखारस्य खवदै पुटंवह्निहिमोपले ।
हिं मधूकतैलेग्नि स्वपकं हीरकं भवेत् ॥

सब अङ्गहीन सब साधन विहीन मन वचन मलीन
न कुलकरतूतिहौं । बुद्धि बलहीन भाव भगति
हीन दीन गुण ज्ञानहीन हीन भागहू विभूतिहौं ॥
तुलसी गरीबकी गई बहोरि रामनाम जाहि जब जीह
जहूको बैठो धूतिहौं । प्रीति राम नामसों प्रतीति राम
नामकी प्रसाद रामनामके पसारि पायँ सूतिहौं ६९ ॥

यम नेमादि योग के सब अंग करि हीनहौं विवेक वैराग्य समादि षट् सम्पत्ति मुमुक्षुतादि साधन करि विहीनहौं मन मलीन भाव विषय आसक्त हौं वचन मलीन भाव परदोष गावत हौं कुल करतूति कुलके शुभ कर्म ते हीनबुद्धि बल चतुरता करि हीन औ भक्तके जे भावहैं दासता सख्यतादि ताहू करि हीन दीन वित्तहीन गुण यथा विद्या कारीगरी आदि ज्ञान सारासार को विचारहीन औ भाग्य विभूति कहे ऐश्वर्य इत्यादि सबते हीन हौं इत्यादि तुलसी की गई ताको बहोरि कही फेरि आनि दई श्रीरामनाम ने जाको जीह सो जपत में बैठे श्रीरामहू को धूतिहौं कहे छलिहौं भाव पाप पुण्य को फल दुःख सुख नरक स्वर्ग श्रीरघुनाथजीकी आज्ञाते है तहां सुकृति तौ मेरे हई नहीं है पाप समूह है सो नाम जपि ताके बलते पाप को उल्लंघि जाउँगो यथा यमन हराम कहि पार भयो ऐसो नामको प्रभाव है ता रामनाम में मेरी प्रीति है ताते मोको राम नामकी प्रतीति है कि श्रीराम नामके प्रसादते पायँ पसारिकै सोइहौं भाव पाप शत्रु कामादि चोरनसों निर्भय ह्वैकै ६९ ॥

मेरे जान जबतेहौं जीवह्वै जनम्यो जग तबते
बेसाह्यो दाम लोभ मोह काम को । मन तिनहीं को
सेव तिनहीं सो भाव नीको वचन बनाइ कहौं हौं
गुलाम राम को ॥ नाथहू न अपनायो लोक झूठी
ह्वैपरी पै प्रभुहूते प्रबल प्रताप प्रभु नाम को । आपनी
भलाई भलो कीजै तौ भलोई नतौ तुलसी को खुलैगो
खजानो खोटे दाम को ७० ॥

मेरे जान जबते मैं जीव ह्वै जग में जन्म पायों तबते लोभ मोह काम को दाम कहे सिक्का कमायों बेसाह्यों खजाना भरेउँ काहेते जान्यों कि लोभादिक ही की सेवा में मन लागत है औ तिनहीं में प्रीति भाव नीको है अर्थात् अन्तर में चाह लोभादिक ही की है औ मुखसों वचन बनाइ कै कहत हौं कि मैं श्रीरघुनाथजी को गुलाम हौं तहां रघुनाथजी ने न अपनायो भाव सांचो दास न करिलियो औ लोकहू में मेरी दासता झूठी ह्वै ठीक परी भाव यह सब सांच माने कि तुलसी झूठो रामदास है ऐसी मेरी बिगरी पै प्रभुके नामको प्रताप प्रभुहू ते प्रबल है अभिप्राय यह कि रूप एक ठौर रहत ता रूप को प्रताप नामी द्वारा लोक में प्रकाशित होत ताको सुनि सब आपही डरत जो निर्बलहू ह्वै प्रतापी को नाम लेइ तौ वाको कछु भय नहीं होत तैसे रामनाम के भरोसे मैं हौं ताते अपनी भलाईते मोको भलो कीजै तौ भली है नाहीं तौ तुलसी के कमाये जन्मान्तर के कामादि खोटे दामन के खजाना खुलैगो भाव मेरी खोटाई जाहिर होयगी यथा लोभ को सिक्का पाखण्ड है तामें सुवेष रूप सोना देखाउ में अशरफी है भीतर तृष्णा कुधातु भरी विडम्बना खोटाई प्रकटी मोह की सिक्का ममता तामें मायारूप चांदी देखाउ में रुपैया भीतर मिथ्या दृष्टि कुधातु भरी अज्ञानता खोटाई प्रकटी कामको सिक्का सौहार्दता है तामें प्रीतिरूप तांबा देखाउ में पैसा लोलुपता भीतर लोह भरो कलङ्कता खोटाई प्रकटी ७० ॥

योग न विराग जप याग तप त्याग व्रत तीर्थ न
धर्म जानौं वेदविधि किमिहै । तुलसी सो पाचन
भयो है नहिं ह्वैहै कहूं शोचै सब याके अघ कैसे प्रभु

क्षमिहै ॥ मेरे तौ न डरु रघुवीर सुनो सांची कहौं खल अनखैहैं तुम्हैं सज्जन न गमिहै । भले सुकृती के सङ्ग मोहिं तुला तौलिये तौ नाम के प्रसाद भार मेरी ओर नमिहै ७१ ॥

योग अष्टाङ्गादि विराग जग सो उदासीनता जप विधिसहित मन्त्र जाप याग अश्वमेधादि तप पञ्चाग्न्यादि त्याग विषय छोड़ना व्रत चांद्रायणादि तीर्थ प्रयागादि धर्म सत्य शौच तप दानादि वेद की विधि कैसी है इत्यादि एकहू नहीं जानत हौं याते तुलसी सम पोच कहे नीच न भयो है न है न आगे कहूं होइगो याते सब शोच करते हैं कि या तुलसी के अघ प्रभु कैसे क्षमा करैंगे ताको मोको कछु डर नहीं है श्रीरघुनाथजी मैं सांची बात कहत हौं ताको सुनो जो मोको अपनाइहौ तौ ताको सुनि खल तौ अनखै हैं तुम्हैं ईर्षा करि हैं परन्तु सज्जन न अनखैहैं काहेते उनको गमि है वेद पुराण ते नाम को प्रभाव जानते हैं नाहीं तौ आपु भले सुकृती के साथ मोको तुला नाम तराजू पर धरि तौलिये तौ आपुके नाम के प्रसादते मेरी ओर भार नमि है गरु परि है काहे ते सतयुग में ध्यान त्रेता में यज्ञ द्वापर में अर्चा करि बहुत काल में जो फल प्राप्त होत रहै सो फल कलियुग में श्रीराम नाम के स्मरण मात्र में प्राप्त होत है तथा ॥ विष्णुपुराणे ॥ ध्यायन्कृते यजन् यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेऽर्चयन् ॥ यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ श्रीनामकीर्त्तनात् १ दृष्टं श्रुतं मया सर्वं यत्किञ्चित्सारमुत्तमम् ॥ परन्तु रामनामैकं वैभवं परतः परम् ७१ ॥

जाति के सुजाति के कुजाति के पेटागि वश खाये

टूक सबके विदित बात दुनी सो । मानस वचन काय किये पाप सत्य भाय राम को कहाय दास दगाबाज पुनीसो ॥ रामनामको प्रभावपाउ महिमा प्रताप तुलसी सो जग मानियत महामुनीसो । अति ही अभागे अनुरागत न रामपद मूढ़ ये तो बड़ो अचरज देखी सुनी सो ७२ ॥

जाति अपनी के सुजाति ऊंची जाति के कुजाति नीची के पेटागि कहे भूख वशते सबकी रोटिन के टूक खाये सो बात दुनियां में विदित सब जानत हैं औ मानस वचन काय देह अर्थात् मनसा वाचा कर्मणा सतिभाय स्वाभाविक सुभाव ते पाप किये फिरि श्रीरघुनाथजीको दास कहायो पुनि सोई पूर्ववत् कर्म करि दगाबाज बनो हौं तहां श्रीराम नामको ऐसो प्रभाव है ऐसो कुटिल मैं सोऊ महिमा प्रताप पायों कौन महिमा प्रताप पायों अर्थात् तुलसी को सब जग महामुनि बाल्मीकि सम मानियत है यथा भक्तमाल में लिखा है ॥ कलि कुटिल जीव निस्तार हित बाल्मीकि तुलसी भये ॥ येतो बड़ो आश्चर्य देखि सुनिकै जे श्रीरामपद में मन सों अनुराग नहीं करत ते मूढ़ अतिही कहे महा अभागे हैं भाव थोड़ी मेहनति में बड़ी मँजूरी मिलत ताहू में विमुख याते अभागी ७२ ॥

जायो कुल मंगन बधायो न बजायो सुनि भयो परिताप पाप जननी जनक को । बारे ते ललात बिललात द्वार द्वार दीन जानतहो चारि फल चारिहि

चनक को ॥ तुलसी सो साहिब समर्थ के सुसेवकहि सुनत सिहात शोच बिधिहू गनकको । नाम राम रावरो सयानो किधौं बावरो जो करत गिरी ते गरु तृण ते तनकको ७३ ॥

मंगन कहे याचक के कुल में जायो कहे जन्म पायों और की को कहै बधावा तक न बजायो काहेते जननी जनक कहे माता पिता को पाप रूप परिताप कहे दुःख देनहारो प्रकट भयो भाव जन्म होत ही महादारिद्र आयो ताते बारेहीते भूखकरि बिललात कहे व्याकुल ललात कहे एक एक दाना को ललचात द्वार द्वार फिरत ऐसो दीन रहौं कि जो चारिहू चना पावों तो चारिहू फल सम मानत रहौं सोई तुलसी अब समर्थ साहेब श्रीरघुनाथजी को सेवक भयो ताको सुनि सिहात ललचात समर्थ ब्रह्मा ऐसे गणक शोच करत भाव भाग्य की रेखा एकहूं नहीं यह ऐश्वर्य कहांते भयो है श्रीरघुनाथजी रावरो नाम सयानो है किधौं बावरो है जो तृणसम तनकको गिरि कहे पर्वत ते गरू करत है भाव पतित जीवन को सुकृतिन को शिरोमणि बनावत है ७३ ॥

वेदहू पुराण कही लोकहू विलोकियत राम नाम हीसों रीझे सकल भलाई है । काशिहू मरत उपदेशत महेश सोइ साधन अनेक चितई न चितलाई है ॥ छाछ को ललात जेते रामनाम के प्रसाद खात खुनसात सोंधे दूधकी मलाई है । रामराज सुनियत राजनीति की अवधि नाम राम रावरो तौ चामकी चलाई है ७४॥

वेदहू पुराण कहत सो सुने हैं अरु लोकहू में विलोकि कहे [देखि]यत है कि श्रीराम नामही के रीझे मन लगाये सकल भांति [स]बकी भलाई है और उपाय ऐसो सुगम नहीं है काहेते महादेवते [अ]धिकी सुजान कोऊ नाहीं है ते काशीजी में जो कोऊ जीव मरत [त]ाको सोई श्रीराम नामही उपदेश करि मुक्त करत हैं औ अनेक [स]ाधन वेद कहे तिनको करिबेको कौन कहै शिवजी चित्त लगाय [कै] चितये भी नहीं भाव श्रीरामनाम के आगे सब साधन तुच्छ [ज]ाने इत्यादि वेद पुराणन में सुने हैं यथा ॥ केदारखण्डे शिव-[व]ाक्यम् ॥ रामनामसमं तत्त्वं नास्ति वेदान्तगोचरम् ॥ यत्प्रसा-[द]ात्परां सिद्धिं संप्राप्ता मुनयोमलाम् १ अध्यात्मे शिववाक्यम् ॥ [अ]हो भवन्नामगृणन्कृतार्थी वसामि काश्यामनिशं भवान्या ॥ मुमूर्ष-[म]ाणस्य विमुक्तयेहं दिशामि मन्त्रं तव रामनाम २ पद्मपुराणे ॥ ये [ये] प्रयोगास्तंत्रेषु तैस्तैर्यत्साध्यते फलम् ॥ तत्सर्वं सिध्यति क्षिप्रं [र]ामनामैव कीर्त्तनात् ३ ऋग्वेदे ॥ परं ब्रह्म ज्योतिष्मयं नाम उपा-[स्य]ं मुमुक्षुभिः यजुर्वेदे ॥ रामनाम जपते नैव देवता दर्शनं करोति [क]लौ नान्येषाम् ॥ सामवेदे ॥ रामनामजपादेव मुक्तिर्भवति ॥ अब [ल]ोक की देखी बात कहत कि जे छाछ कहे माठाको ललचात [न]हीं पावत तेई श्रीरामनामके प्रसादते सोंधे कहे पाके सुगन्धित [द]ूधकी मलाई को खात में खुनसात रिसात कि बहुत पाके दूधकी [म]ाधुर्य्यता जात रहत है भाव पतित सुकर्मरूप छाछ को ललचात [र]है नहीं सकत तेई श्रीराम नाम के प्रभावते सोंधे दूधसम परम [ध]र्म ताकी मलाई ज्ञानको खुनसात कि भक्ति आगे ज्ञान निरस [है] हे श्रीरघुनाथजी सुनियत है कि आपकी राज्य में अवधि कहे [म]र्यादा राजनीति की चलती रहै यथा तांबा चांदी सोनादि मोल [अ]नुकूल तौलपै अपनो सिक्का बनाय जो मोल थापि देत ताहीपर

चलत तथा तांबे को सिक्का पैसा लघु मोलसों कर्मकाण्ड है ताको थोड़ो मोल स्वर्ग सुख है चांदीको सिक्का रुपया मध्यम मोल सो ज्ञान है ताको मध्यम मोल कैवल्यमुक्ति है सोनेको सिक्का अशरफी को बड़ो मोल सो उपासना है ताको बड़ा मोल नवधा प्रेमा परा भक्ति प्रभुकी समीपी इत्यादि श्रीराम राजमें कर्म ज्ञान उपासनावालेन को अपने अनुकूल फल पावते रहैं अरु आपके नामने चामकी मर्यादा सिक्का चामको चलायो भाव चामकी चकतीपर सिक्का करि सब सिक्कनते ऊंची मर्यादा करिदियो इहां चाम कहे कर्म ज्ञान उपासना रहित ऊंच नीच कोऊ जीव कैसहू पापी पतित होइ श्रीरामनाम स्मरण करतही ऊंची सर्वोपरि गति पावत है यथा ॥ अपर अजामिल गज गणिकाऊ। भये मुक्त हरि नाम प्रभाऊ ॥ हनुमत्संहितायाम् ॥ राम त्वत्तोधिकं नाम इति मे निश्चला मतिः । त्वया तु तारितायोध्या नाम्ना तु भुवनत्रयम्॥ शुकसंहितायाम् ॥ आकृष्टः कृतचेतसां सुमहतामुच्चाटनं चांहसामाचाण्डालममूकलोकसुलभो वश्यश्च मुक्तिस्त्रियाः ॥ नो दीक्षां न च दक्षिणां न च पुनश्चर्यामनागीक्षते मंत्रोयं रसनास्पृशेव फलति श्रीरामनामात्मकः २ बृहद्विष्णुपुराणे ॥ अविकारी विकारी वा सर्वदोषैकभाजनः ॥ परमेशपदं याति रामनामानुकीर्त्तनात् ३ अथर्वणवेदे श्रुतिः ॥ यश्चाण्डालोपि रामेति वाचं वदेत्तेन सह संवदेत्तेन सह संवसेत्तेन सह संभुञ्जीयात् ७४ ॥

शोच संकट निशोच संकट परत जर जरत प्रभाव नाम ललित ललाम को । बूड़ियों तरत बिगरियो सुधरति बात होत देखि दाहिने सुभाव विधि वामको ॥ भागत अभाग अनुरागत विराग भाग जागत

आलसि तुलसीहू से निकाम को । धाई धारि फिरिकै गोहारि हितकारी होत आई मीचु निकट जपत राम नाम को ७५ ॥

यामें श्रीरामनाम को प्रभाव द्वै भांति कहे एक हेतु रहित यथा ॥ अजामील पुत्र के बहाने नाम लिये ताके महापाप नाश भये हरिधाम गये तथा यमन हराम कहि धाम पायो दूसरो हेतु सहित जे प्रीति ते राम नाम जपते हैं तिनको यावत् प्रतिकूल विघ्न करता तेई अनुकूल है सहाइ करता होत तहां हेतु रहित को प्रभाव रामनाम कैसो है यथा ललित ललाम कहे सुन्दर रत्न नाम आयेते शोच संकट ज्वरादि रोग कछु नहीं व्यापत यह काव्य कलाधर में रघुनाथ कवि लिखो है यथा। विषको भय भय वज्र को नेक न व्यापत तास । शुद्ध अंग को होत है हीरा जाके पास ॥ पुनः ॥ सन्तति सम्पति बढ़ति अरु रहत निरोगित गात । गजमुक्ता जाके रहत ताको यश अवदात ॥ तैसे रामनाम सुन्दर रत्न के प्रभाव ते पापकर्मन को शोच औ यमशासति को संकट को शोच संकट परत भाव हरिपार्षदन ते दण्ड पावत औ ज्वर जो त्रिताप सो आपही जरिजात अब हेतु सहित कहत कि जिनको श्रीराम नाम में प्रीति है ते काहू क्लेश में वा भवसागर में बूड़ियो तरत कहे पार होत यथा परीक्षित अकाल मृत्यु में बूड़े तेऊ तरे औ बिगरियो सुधरत जिनकी बात बिगरिजात यथा सुग्रीव की सुधरि गई अरु कर्म वश जाको स्वभाव वाम है गयो यथा बाल्मीकि तिनहूं को स्वभाव दाहिनो भयो व्याधा ते महामुनि भये वाम विधि कहे टेढ़े कर्म जिनके यथा निषाद तिनहूं को कर्म दाहिनो भयो कुल समेत पावन भयो अभाग कहे हरि विमुखता यथा

कहे हनुमन्त विपति प्रभु सोई । जब तव सुमिरण भजन न होई ॥
ऐसो अभाग भागत अरु विराग जगते विमुख तासों अनुरागत
अरु आलसी नकाम तुलसी ऐसेन की भाग्य जागत भाव
हरिचरण में प्रीति होत मीचु कहे मृत्यु की धारि कहे सेना जो
मारिबे को धाई आवत सोऊ श्रीराम नाम जपत सोई मृत्यु धारि
लौटि हितकारी गोहारि होत यथा अम्बरीष पै कृत्यानल मृत्यु
ते सहायक भई ७५ ॥

आंधरो अधम जड़ जाजरो जरा जमन शूकरके
शावक ढकाढकेलो मगमै । गिरो हिये हहरि हराम
हो हराम हन्यो हाइहाइ करत परीगो कालफगमै ॥
तुलसी विशोक ह्वै त्रिलोकपतिलोक गयो नामके
प्रताप बातविदितहै जगमै । सोई रामनाम जो सनेह
सों जपत जन ताकी महिमा क्यों कही है जात
अगमै ७६ ॥

काहू समय की बात है कि एक यमन कहे मुसल्मान अधम
कहे पातकी सुभाव जड़ जरा कहे बुढ़ापा अवस्था करिकै जर्जर
निर्बल देह आंधर ताको शूकर के शावक कहे बालक ने ढकी
कहे धक्का दै राह में ढकेलि दियो हृदय ते हहरि गिरत में कह्यो
कि हौं कहे मोको हराम ने हनो हाय हाय करत काल फंग में
परो कहे मरि गयो तहां हराम शब्द ते रामनाम निकरो ताके
प्रताप ते हरिगण आइ यमगणन सों छीनि लियो याते विशोक
ह्वै कै त्रिलोकपतिलोक जो हरिधाम तहां को गयो श्रीरामनाम के
प्रताप ते यह बात जग में विदित सब जानत हैं इत्यादि नाम को

प्रभाव हेतु रहित है सोई श्रीरामनाम को जे जन सनेहते जपत
ताकी महिमा अगम है क्यों कही जात यथा वाराहपुराणे
शिववाक्यम् ॥ दैवाच्छूकरशावकेन निहतो म्लेच्छो जराजर्जरो
हा रामेति हतोऽस्मि भूमिपतितो जल्पंस्तनुं त्यक्तवान् ॥ तीर्णो
गोष्पदवद्भवार्णवमहो नाम्नः प्रभावात्पुनःकिञ्चित्रं यदि रामनाम-
रसिकास्ते यान्ति रामास्पदम् ७६ ॥

जपको न तप खप कियो न तमाइयोग याग न
विराग त्याग तीरथ न तनको । भायको भरोसो न
खरोसो वैर वैरीहू सो बल अपनो न हितू जननी न
जनको ॥ लोक को न डर परलोक को न शोच देव
सेवा न सहाइ गर्व धामको न धनको । रामहीके नाम
ते जो होइ सोई नीको लागै ऐसोई सुभाव कछु
तुलसीके मनको ७७ ॥

यामें सब भरोसो त्यागि शुद्ध शरणागती कहत कि मन्त्रादि
जपको न किये न तप किये काहेते खप नाम कादरहौं ताते तमइ
नाम पूर्ण तीव्र योगहू न किये याग यज्ञ न विराग कहे जगते उदासी-
नता न विषय को त्याग किये तीर्थन में तनकौ नहीं कियो अपनो
और भाईको भरोसो नहीं न वैरिहूसों खरोसो कहे अच्छा वैरिहू
नहीं किये आपनेहू बल नहीं औ हितू माता पितादिहू को बल
नहीं लोकको न डर अर्थात् मर्यादा भी न बनाये परलोकहू को
शोच नहीं भाव सुकर्म भी नहीं किये सहायक देवता की सेवा
भी नहीं किये गर्व धामको न धनको भाव न घरहै न धन है
इत्यादि एकहू नहीं तौ फिरि क्या है ताको कहत कि श्रीरामही के

नामते जो कुछु होइ भलो व बुरो सोई नीको लागत है अस कुछु सुभाव तुलसी के मनको है भाव केवल श्रीरामनाम को भरोसो है दूसरो नहीं ७७ ॥

ईश न गणेश न दिनेश न धनेश न सुरेश सुर
गौरि गिरापति नहिं जपने । तुम्हरेई नामको भरोसो
भव तरिबेको बैठे उठे जागत बागत सोये सपने ॥
तुलसीहै बावरो सो रावरोई रावरी सो रावरेहू जानि
जिय कीजिये जु अपने । जानकीजीवन मेरे रावरे
बदन फेरे ठाउँ न समाउँ कहूं सकल निरपने ७८ ॥

ईश महादेवहू की पूजादि नहीं किये जे देवतन में श्रेष्ठ हैं गणेशहूको न पूजे जे अग्रपूज्य हैं सूर्यहू को नहीं पूजे जे लोक प्रकाशक हैं धनद कुबेर सुरेश इन्द्र सुर और सब देवता गौरि पार्वती गिरापति ब्रह्मादि काहूको मंत्रादि को जपनो नहीं है मेरे है का कि बैठे उठे जागत बागत कहे चलत फिरत सोवत सपने में भव तरिबे को भरोसा आपुके नामहीं को है रावरीसौं आपुकी सौगन्ध खाइकै कहत हौं कि तुलसी जो बावरो है सो रावरोई गुलाम है ताते आपहू यह जियसों जानिकै आपनो गुलाम कीजिये जू मेरे कर्मन को न देखिये हे श्रीजानकीजीवन आपके बदन फेरेते मेरे समावे को ठाऊं कहीं नहीं है काहेते यावत् देवता गनाये ते यंत्रराज पर पूजा में अंग देवता आपुके साथ सब पूजा पावते हैं यह रामतापिनी आदिते प्रसिद्ध है तिनको छांड़ि आपु ही को भरोसा राख्यों याते सकल देव निरपने कहे बिराने है गये ते मेरे ऊपर क्रोध करैंगे लोकहू में जे अमला को नहीं मानते

ते राजा के बूतते जो राजा मुँहु फेरै तो अमला बिगारि न डारै ७८ ॥

जाहिर जहान में जमानो एक भांति भयो बेंचिये
बिबुध धेनु रास भी बेसाहिये । ऐसेउ कराल कलिकाल
में कृपाल तेरे नाम के प्रताप न त्रिताप तन दाहिये ॥
तुलसी तिहारो मन वचन कर्म जन येहू नातो नेह
निज ओरते निबाहिये । रङ्क के निवाज रघुराज राजा
राजन के उमरि दराज महाराज तेरी चाहिये ७९ ॥

धर्म अधर्म द्वै मार्ग सदैव रहे अब या समय में धर्म लोप भये अब एकही भांति अधर्म मार्ग में जमाना जहान में जाहिर भयो कि बिबुध धेनु कामधेनु को तो बेंचिये औ रासभी गदही बेसाहिये भाव तन सुखरूप द्रव्य सुकृति को बेंचिये पापरूप द्रव्य दै दुःकृत्य बेसाहिये जो दुःखद है ऐसेउ कलिकाल कराल में जामें और धर्म कर्म है नहीं ताहू में हे कृपालु आपके नामके प्रतापने दैहिक दैविक भौतिकादि तीनिउँ तापनके तनको दाहियतु है याते जन तुलसी मन वचन कर्महूते तिहारो दास है कदाचित् येहू नहीं तौ निज ओरते नेह निबाहियत हौ आपनी ओरते दया करि आपनो गुलाम करि मानियत हौ ऐसे रंग के निवाज राजन के राजा महाराज रघुराज दराज कहे बड़ी उमिरि तेरी चाहिये यहाँ कविभारते आशीर्वाद देत कि रघुकुल राजगद्दी पर सदैव आसीन रहौ ७९ ॥

स्वारथ सयानपप्रपञ्च परमारथ कहायो राम रावरोहौं
जानत जहान है । नाम के प्रताप बाप आजु लौं निबा-
ही नीकी आगे को गोसाईं स्वामी सबल सुजान है ॥

कलिको कुचालि देखि दिन दिन दूनी देव पाहरोई चोर हेरि हिय हहरानु है । तुलसी की बलि बारबार ही संभार कीबी यदपि कृपानिधान सदा सावधान है ८० ॥

स्वारथ भये में आपनो सयानप माने कि यह काम हम अपनी चतुराई ते कीन भाव कपट सयानो हौं औ परमार्थ में प्रपंच कहे छली को देखाउ और मन में और ऐसे कुटिल मोको बालक मानि बाप सम आपु नाम के प्रताप ते आजतक नीकी निबाही औ आगे के निबाहिबे को हे गोसाईं आपु सबल सुजान स्वामी हैं परंतु हे देव कलियुग की कुचालि प्रतिदिन दूनी बढ़त कौनि कुचाल है कहत पहरोई चोर अर्थात् कलियुगराज पहरुवा सोई कामादि चोरन को लै सुकृत धन चोरावत देखि हिया हहरान कहे डेरान है याते कहतहौं हे कृपानिधान यद्यपि आपु सदा सावधान हैं तदपि मैं बलिजाउँ तुलसी की ओर बारबार सँभार कीबी काहे ते पहरूही चोर है ताते मेरे मन में बेकारता अवगुण न देखब ८० ॥

दिन दिन दूनी देखि दारिद दुकाल दुःख दुरित दुराज सुख सुकृत सकोचुहै । मांगेपै तपावत प्रचारि पातकी प्रचण्ड कालकी करालता भले को होत पोचु है ॥ आपने तो एक अवलम्ब अम्ब डिम्भयों समर्थ सीतानाथ सब सङ्कट बिमोचु है । तुलसी की साहसी सराहिये कृपाल राम नाम के भरोसे परिनाम को निशोचु है ८१ ॥

अब समय की व्यवस्था कहत कि दारिद्र दुकाल महँगी हानि

आदि दुःख दुरित कहे पाप दुराज कहे राजा दुष्ट इत्यादि प्रति दिन दूनी बढ़त है औ सुख सुकृत को सकोचु कहे घटत जात है कालकी करालता ऐसी प्रचण्ड भई कि जामें रातकी जन प्रचारि कहे ललकारिकै पैत कहे दांव मांगे पावत हैं औ जे भले हैं ते पोचु कहे बुराई पावत हैं ऐसा हाल देखि अपना तो एक अवलम्ब है यथा डिम्भ कहे बालक को अम्ब कहे माता इव समर्थ सीतानाथ को भरोसा है जो सब संकट को विमोचु कहे छोड़ावनहार है इत्यादि तुलसी की साहसी कहे वीरता ताको सराहिये काहेते हे कृपाल श्रीरघुनाथजी श्रीरामनाम के ते परिणाम कहे अन्तकाल समय निशोचु कहे शोचु रहितहौं श्रीराम नाम के प्रतापते भवसागर को न जाउँगो ८१ ॥

मोह मद मात्यो रात्यो कुमति कुनारि सो बिसारि वेद-लोकलाज आँकरो अचेतुहै । भावै सो करत मुँह आवै कहत कछु काहूकी सहत नाहिं सरकस हेतु है ॥ तुलसी अधिक अधमाइहू अजामिलते ताहूमें सहाय कलि कपट निकेतुहै । जैबे को अनेक टेक एक टेक होबेकी सो पेट प्रिय पूत हित राम नाम लेतुहै ८२ ॥

अजामील को आपनो रूपक कहत अजामील मद में मातो मैं मोहरूप मद में मातो हौं वह कुनारिन सों रात्यो रहै मैं कुमति कुनारी सों रत हौं उहु वेदमार्ग बिसारे रहै मैं लोकलाज बिसारे हौं उहु आँकरो कहे टेढा रहै मैं अचेत हौं वाको जो भावै सो करत रहै मेरे जो मुख में आवत सो कहत हौं उहु काहू की बात नहीं सहत रहै मेरे सरकस हेतु है भाव हरि भरोसा

जबर या कारणते काहू को नहीं मानत हौं याते तुलसी अधमा करिकै अजामीलते अधिक है ताहू में कपट को निकेत कहे स्था कलिकाल सहायक अर्थात् धर्म में विघ्नकरता ताते भवसा जावेकी अनेक टेक कहे निश्चय है अरु हरिशरण ह्वैवेकी एक टेक है यथा अजामील प्रियपूत को नाम लै तरेउ तैसे मैं प्रियपू रूप पेट भरिबे हेतु श्रीराम नाम लेत हौं ताके प्रतापते मेरी भ सुधरी ८२ ॥

जागिये न सोइये बिगोइये जनम जाय दिन दुः रोइये कलेश कोह कामको। राजा रङ्क रागी औ विरागी भूरिभागी ये अभागी जीव जरत प्रभा कलि वामको॥ तुलसी कबन्ध कैसो धाइबो विचा अन्ध धन्ध देखियत जग शोच परिणामको। सोइ जो रामके सनेहकी समाधि सुख जागिबो जो जी जपै नीके राम नाम को ८३॥

न जागिये भाव चैतन्य है हरिभजन करिये सो नहीं सोइये न भाव संसारही में सुखी रहिये सोऊ नहीं याते जाय वृथा जन्म बिगोइयत कहे बिताइयतु है काहेते काम क्रोधके करि प्रतिदिन दूनो दुःख बढ़त ताते रोइयतहै तामें राजा रङ्क कहे दरिद्री रागी कहे लोकनेही विरागी कहे जगत्यागी भू कहे बड़े भागी सुखी अभागी आदि यावत् जीवहैं ते सब कलियु के वाम कहे तीक्ष्ण प्रभाव में जरत हैं इत्यादि सब कबन्ध क बिन शीश कैसो धरको धाइबे सम वृथा विचार है तुलसी अ जगको धन्धा झूठो ताको देखियतहौ भाव झूठे धन्धा में म

ायो तामें परिणाम कहे अन्तकाल में शोचु है भाव पछितावै परी ताते जो सोइबो होइ तौ श्रीरघुनाथजी के सनेहकी ाधि सुख में सोउ भाव प्रेमासक्त रहु जो जागिबो होइ तौ ह करिकै नीके प्रेमसहित श्रीराम नामको जपै ८३॥

बरन धरम गयो आश्रम निवास तज्यो त्रासन कृत सो परावनो परोसो है। करम उपासना कुवासना नासो ज्ञान वचन विराग वेष जगत हरोसो है॥ रख जगायो योग भगति भगायो लोग निगम योगते सो कलिहि क्षरोसोहै। काय मन वचन भाय तुलसीहैं जाहि राम नामको भरोसो ताही को ोसो है ८४॥

वर्णके धर्म यथा ब्राह्मणके तप शौच दान क्षत्री के सत्य शौच दान वैश्यहूके दान सोई शूद्रके सत्य दान ब्राह्मण धर्मके कर्म यथा शम दम शौच शांति दया ज्ञान विज्ञान शापाशीर्वादको र्थ क्षत्री धर्मके कर्म छः स्वर्ग दान तपमें शूर १ तेजसी ापी २ धैर्य्यवान् सावधान ३ नीतिविद्यादक्ष ४ युद्ध में चल ५ वेद आज्ञापाल ६ क्षत्री की वर्मा संज्ञा सो चारि भांति गृहीत जो कर्म कहि आये हैं औ दूसरा धर्म शील तीसरा ास यथा मनु शतरूपा चौथा भक्त यथा॥ रुक्मांगद अम्बरीष वैश्यकर्म कृषी वाणिज्य गोरक्षा इनकी गुप्त संज्ञा सो चारि ांति प्रथम गृहस्थ दूसरे सुकर्मी जो तीर्थ व्रत दान करै तीसरा ास यथा श्रवण चौथा साधु शूद्र तीनि वर्ण सेवी गृहस्थ दास ा भगवद्दास शबरी आदि इत्यादि वर्ण के धर्म सब जातरहे

औ आश्रम चारि ब्रह्मचर्य्य गृहस्थ वानप्रस्थ ते अपनो निवास कहे कर्म तजे काहेते कलि प्रेरित अधर्म की भय करि धर्म कर्म चक्र है परावनो सो परो अर्थात् सब भागि गये औ सुत बित नारि तन सुखादि कुवासना नेक कर्म ज्ञान उपासनादि को विनाश कियो औ वैराग्य वचन मात्र रहि गयो औ दिगम्बरादि जे वेष हैं ते जगत् हरोसो कहे जग में धन हरिबे हेतु है गोरख योगी है योग नहीं जगाये मानो भक्ति भगाये लोगन को श्रीराम भक्ति ते विमुख करे तहां गोरख को दोष नहीं काहेते योगमार्ग वेद आज्ञा है याते निगम नियोग कहे वेद आज्ञाके बहाने गोरख रूप है कलिकाल जगको छल्यो है भाव एक गोरख में सबल योग दर्शाय अनेकन को भक्ष्याभक्ष्य मद मांसादि खवाय लोगनको भ्रष्ट करि दियो तहां अनेकन पन्थ भक्ति विरोधी हैं एक गोरखै क्यों कहे तहां और पन्थ वेद बाह्य धर्म है तिनको प्रमाण नहीं दूसरे भ्रष्ट क्रिया नहीं योग वेदमार्ग तामें गोरख भ्रष्ट क्रिया में चलाये याते गोसाईंजी कहत कि मनसा वाचा कर्मणा जाको श्रीराम नामको भरोसा है ताहीको भवसागर तारिबे को भरोसा है और को नहीं है ८४ ॥

वेद पुराण विहाइ सुपन्थ कुमारग कोटि कुचाल चलीहै । काल कराल नृपाल कृपाल न राज समाज बड़ोई छलीहै ॥ वर्ण विभाग न आश्रम धर्म दुनी दुख दोष दरिद्र दलीहै । स्वारथ को परमारथ को कलि रामको नाम प्रताप बली है ८५ ॥

इति प्रार्थना अब कलिकाल की भभरि में नाम शरणागती

न्थ कहे वेद पुराण की आज्ञा ते कर्म ज्ञान उपासना नौधा पत्त्यादि सुधर्ममय पन्थ विहाय कहे छांड़िकै अनेकन कुमार्ग कहे ग्रन्थन में कोटिन भांति के कुचाल भक्ति विरोधी वार्त्ता धर्म-नाशक वार्त्ता यथा पत्थर पानी तीर्थ में का है इत्यादि अनेकन कुचालैं चली हैं अरु काल कहे समय कराल है याते सुधर्म में विघ्न लागत नृपाल जो राजा ते कृपारहित निर्दयी हैं नायब दीवान मन्त्री कारिन्दे आदि जो राज समाज ते बड़ेई छली हैं ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्रादि वर्णविभाग जात रहे वर्णसंकर भये गृहस्थ ब्रह्मचर्य वानप्रस्थ संन्यासादि आपनो निवास स्वधर्म की मर्यादा छांड़ि दिये ताही दोषन ते दरिद्र दुःख ने दुनियां को दलिडारो याते और उपाय नहीं है कलियुग विषे स्वार्थ कहे लोक सुख हेतु को परमार्थ कहे परलोक सुख हेतु को श्रीरघुनाथजी को नामही एक प्रताप करिकै बली है यथा विष्णुपुराणे ॥ ध्या-यन्कृते यजन्यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेर्चयन् ॥ यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ श्रीनामकीर्त्तनात् ॥ पुनः वाल्मीकीयटीकायाम् ॥ रामेति वर्णद्वयमाद-रेण सदा स्मरन् मुक्तिमुपैति जन्तुः । कलौ युगे कल्मषमानसाना-मन्यत्र धर्मे खलु नाधिकारः ८५ ॥

न मिटै भवसंकट दुर्घटहै तप तीरथ जन्म अनेक अटो । कलि में न विराग न ज्ञान कहूं सब लागत फोकट झूठ जटो ॥ नट ज्यों जनि पेट कुपेटक कोटिक चेटक कौतुक ठाट ठटो । तुलसी जो सदा सुख चाहिय तौ रसना निशिवासर राम रटो ८६ ॥

अनेकन जन्म तक तपस्या अरु तीर्थन में अटो तीर्थाटन करौ तौ भवसागर को संकट न मिटी काहेते अति दुर्घट है मोह प्रेरित

विषय की प्रबलताते कलियुग में न वैराग्य है न कहूं ज्ञान है यावत् तपस्या तीर्थाटन ज्ञान वैराग्यादि हैं ते सब फोकट कहे वूसी सम सार रहित झूठ में जटित देखावमात्र पाखण्ड है ताते ज्यों नट नटसम पेट के हेतु कुपेटक कहे कुजीविका कुकर्मकरि जीविका अर्थात् चेटक टटकादि कोटिन करि कौतुक कहे इन्द्रजाली तमाशा जग ठगिबे हेतु ठाट जनि ठाटौ हे तुलसी जो सदा सुख चाहौ तौ प्रेम सहित रसना करिकै निशिवासर दिनराति श्रीरामनाम रटौ भाव या समय में श्रीरामनामही में जीवोद्धार समर्थ है और धर्म नहीं है ८६ ॥

दम दुर्गम दान दया मख कर्म सुधर्म अधीन सबै धनको । तप तीरथ साधन योग विराग सो होइ नहीं दृढ़ता तनको ॥ कलिकाल कराल में रामकृपाल यहै अवलम्ब बड़ो मनको । तुलसी सब संयमहीन सबै यक नाम अधार सदा जनको ८७ ॥

दम कहे इन्द्रिनकी विषय रोकना सो या समय में दुर्गम है औ दान कहे गो भूम्यादि सुपात्रको देना दया जीव रक्षा मख अश्वमेधादिक कर्म वेद आज्ञा करना सुधर्म सत्य शौच तप दानादि वा वर्णादिको शुभ धर्म इत्यादि सब धनके आधीन हैं अर्थात् विना धन होत नहीं धनिनके श्रद्धा नहीं औ तपस्या विधि सहित तीर्थयात्रा विवेकादि ज्ञान के साधन योग वैराग्यादि कीन्हेते होतही नहीं काहेते इत्यादि करिबेमें दृढ़ता चाही सो दृढ़ता तनु में है नहीं काहेते कलिकाल करालहै तामें मनको अवलम्ब बड़ो यही है कि श्रीरघुनाथजी कृपालु हैं आपनी ओरते कृपाकरि मनको अपना में लगाइ लेते हैं ताते गोसाईंजी कहत कि सब

म कहे साधनते हीन सबै हैं ताते जननको सदा आधार एक रामनामही है ८७ ॥

पाइ सुदेह विमोह नदी तरणी न लही करणी न छू की । रामकथा वरणी न बनाइ सुनी न कथा हलाद न ध्रू की ॥ अब जोर जरा जरि गात गयो न मानि गलानि कुबानि न मूकी । नीके कै क दई तुलसी अवलंब बड़ी उर आखर दू की ८८ ॥

विशेष मोहरूपी नदी तरिबे योग्य सुन्दर उत्तम नरदेहरूप णी कहे नाव पाइकै पार जाबे की करणी कछू नहीं कीन्ही कहत कि श्रीरघुनाथजी के पावन चरित्रन की कथा बनाइ न न कीन्ही जामें बुद्धि निर्मल होति अरु प्रह्लाद ध्रुवादि भक्तन के शरणागत दृढ़ताकी कथा सुनी न जामें प्रभु के वत्सलतादि गुणनते मन में विश्वास आवत इति तरुणाई वृथा अब जरावस्था की जोर अग्नि में गात जरिगयो जर्जर है ो ताहूपर मनमें ग्लानि मानिकै कुबानि न मूकी कुमार्गी स्वभाव तजी इत्यादि एकहू न भयो तब तुलसी नीके भवसागर पार बे को मनमें एक यहै ठीक दई कि श्रीरामनाम के जे दोऊ खर हैं ते मेरे उर में हैं यह बड़ी अवलम्ब है ये दोऊ वर्णको गामी स्वभाव है भाव स्वर नष्ट भये रेफ व्यंजन वर्णन के र जाते हैं तौ देह नष्ट भये जीवको ऊर्ध्वगति जाबो स्वाभाविक गो यथा मनुस्मृतौ ॥ यन्नामसंसर्गवशाद्विवर्णौ नष्टस्वरौ निगतौ स्वराणाम् ॥ तद्रामपादौ हृदि सन्निधाय देही कथं र्ध्वगतिं प्रयाति ८८ ॥

राम विहाय मरा जपते बिगरी सुधरी कवि
कोकिलहूकी। नामहि ते गजकी गणिकाहु अजा-
मिलकी चलिगै चल चूकी॥ रामप्रताप बड़े कुसमाज
बजाइ रही पति पाण्डुवधूकी। ताको भलो अजहूं
तुलसी जेहि प्रीति प्रतीति है आखर दूकी ८९॥

सब साधन रहित श्रीरामनामके अवलम्बते भवसागर पार जावे को कहे ताको प्रमाण देखावत कि इन दोऊ अक्षरन में ऐसोई प्रभाव है यथा श्रीरामशब्द विहाय मरा शब्द उलटा नाम जपेते बिगरी बात सुधरिगई कवि कोकिल वाल्मीकि की यथा॥ कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम्॥ आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम्॥ औ एकहीबार रामनाम कहे गज की सुधरी कीरमुख नाम सुनि गणिका की सुधरी पुत्रहेतु नाम लीन्हे अजामिलकी सुधरी इत्यादि के चल कहे चञ्चल स्वभाव ते जो चूकी अर्थात् बिगरी रहै सो चलीगई दुर्योधनकी सभा में अनेक समर्थ बैठे रहे जब दुर्योधन कुमार्ग पर आरूढ भयो तब काहूने न बरज्यो सब शामिल रहे ऐसे कुसमाज में श्रीरामप्रतापते डंका बजाय भाव लोक में प्रसिद्ध है पांडुवधू द्रौपदी की पति रही वसन बाढ़िगयो ताही भांति गोसाईंजी कहत कि श्रीरामनामके दोऊ जे आखर हैं तिनमें जाकी प्रीति प्रतीति है ता जनको अजहूं भलो है ८९॥

नाम अजामिल से खलतारण तारण वारण वार
वधूको। नाम हरे प्रह्लाद विषाद पिता भय शासति
सागर सूको॥ नाम सों प्रीति प्रतीति विहीन गिलो

कलिकाल कराल न चूको। राखिहैं राम सो जासु
हिये तुलसी हुलसै बल आखर दूको ९०॥

पुनः श्रीरामनाम कैसो प्रतापवान् है जो अजामिल ऐसे खलनको तारणहार है वारण कहे गज को वारवधू गणिका ताको तारणहार है अरु श्रीरामनाम ही ने प्रह्लाद को विषाद हरे तीन भांति कि पिता जो हिरण्यकश्यप ताको भय कहे डर शासति संकटको सागर समुद्र सो श्रीरामनामके प्रताप ते सूखिगयो भाव अन्यादि कोऊ विघ्न न व्यापे यथा नृसिंहपुराणे प्रह्लादवाक्यम्॥ रामनाम जपतां कुतोभयं सर्वतापशमनैकभेषजम्॥ पश्य तात मम गात्रसन्निधौ पावकोऽपि सलिलायतेऽधुना १ ऐसे श्रीरामनामकी प्रीति प्रतीति ते जे जन विहीन हैं तिनको गिलो कहे लीलि जाउ हे कलिकाल कराल अब न चूकौ कदाचित् श्रीरामनाम लै लेइँगे तौ फिरि तुम्हारे लीले न लीलि जाइँगे भाव यह कि श्रीरामनाम विमुख कलियुग में निस्तार दुर्घट है यथा भविष्योत्तरे नारायण लक्ष्मी सों कहेउ है॥ जीवाः कलियुगे घोरा मत्पादविमुखास्सदा॥ भविष्यन्ति प्रिये सत्यं रामनामविनिन्दकाः॥ भविष्यन्ति दुराचारा निरये नात्र संशयः॥ कथं सुखं भवेद्देवि रामनामबहिर्मुखे॥ औ जे श्रीरामनाम जपते हैं तिनको श्रीरघुनाथजी बचाइ राखैंगे कौनको ताको गोसाईंजी कहत कि श्रीरामनामके दोऊ आखरनको बल जासुके हिये में हुलसत है तिनको कलियुग नहीं दबाइ सकत है ९०॥

खेती न किसानको भिखारीको न भीख बलि
वणिकको बणिज न चाकरको चाकरी। जीविका
विहीन लोग सिद्यमान शोच वश कहैं एक एकनसों

कहां जाइ का करी ॥ वेदहू पुराण कही लोकहू विलो-
कियत सांकरे समैको राम रावरे कृपा करी । दारिद
दशानन दबाई दुनी दीनबंधु दुरित दहत देखि तुलसी
हहा करी ९१ ॥

बलि कहे हे श्रीरघुनाथजी या समय में किसानन के खेती नहीं पूरी उपजत अकाल प्रबल ताते भिखारी को भीख नहीं मिलत बणिक कहे बनियन को काहू व्यापार में नहीं पूरो नफा होत चाकर को चाकरी नहीं लागत इत्यादि चारि भांति जीविका-विहीन लोग सिद्यमान कहे दुःखित है शोच वश एक एकनसों कहत कि कहां कौने देश जाइये का करी कौन रोजगार करी जामें जीविका होइ इत्यादि समय में कौन सहायक है ताको कहत कि वेदहू पुराण ने यही बात कही औ लोकहू में विलोकियत कहे देखियत है कि साँकरे समय के आये पर हे श्रीरघुनाथजी जहां जाको सहाय करी तहां आपुकी कृपाने सहाय करी याते कहत कि दारिदरूप दशानन कहे रावण ने दुनियां को दबाइ लीन्हीं ताके दुरित कहे पाप में अपना को दहत कहे जरत देखि ताको बन्धु दीन विभीषण यथा रघुनाथजी सों शरण शरण पुकार करी तथा विभीषणरूप तुलसी प्रभुसों हा हा विनती करी कि मोको उबारौ ९१ ॥

कुल करतूति भूति कीरति स्वरूप गुण यौवन
जरत जुर परै न कछू कही । राज काज कुपथ कुसाज
भोग रोगहीके वेद बुध विद्या पाइ विवश बलकही ॥
गति तुलसीशकी लखत नहीं जो तुरत पविते करत

ार पवैसो पलकही । कासों कीजै रोष दोष दीजै
ाहि पाहि राम कियो कलिकाल कुलि खलल ख-
लकही ९२ ॥

कलियुग जा भांति जगको बिगारो है सो कछु कहि न परै है ाको कहत यौवनरूप ज्वर प्रबल भयो तहां वात पित्त कफादि ारण ते ज्वर होत यहां ॥ काम वात कफ लोभ अपारा । पित्त ोध नित छाती जारा ॥ तहां यौवन अवस्था में काम प्रबल सो ात है क्रोध प्रबल सो पित्त है ताते वातपित्तमय यौवनज्वरते ब जग जरत है ताके लक्षण यथा ज्वर में मूर्च्छा होत यहां ामवश नीची जाति में रत भये कुल ते च्युत भये सो मूर्च्छा कलंक भये करतूति कहे मर्यादा नाश भई सो घुमनी है पाप-ाते भूति कहे ऐश्वर्य नाश होत सो तनदाह है अयशते कीर्ति ाश होत सो नींद नाश है विषयासक्ति ते स्वरूपता नाश सो शिरपीड़ा है मन मलिन भये गुण नाश होत यथा धैर्य शील ात सो कण्ठ मुख सूखनि है लोलुपता ते सन्तोष नाश होत अंग पीड़ा है विद्याभिमान सो बकवाद है इति ज्वरके लक्षण तहां दधि दुग्ध मिठाई आदि कुपथ पाइ ज्वर बढ़त है यहां काज कुपथ यथा ऐश्वर्य दधि है हुकूमति दूध है तनको पोषकता ादि मिठाई इत्यादि राजसी साजरूप कुपथ पाइ यौवनज्वर ल भयो अरु सुख भोग सोई कुसाज है जाको पाइ ज्वर बि-ी जात है यथा वनिता सोई दिनकी नींद है सुगन्ध लगावना दुर्गन्ध स्थान है राग तान सो पवन है भूषण वसन सो मैले न हैं सुभोजन सो घाम है गजादि वाहन सो परिश्रम है ादि कुसाज पाइ यौवनज्वर बिगरि गयो अर्थात् त्रिदोष सो

भयो ताको वेग कहत कि बेद औ बुध कहे चतुर विद्या व्याकर-णादि पाइ ताके अभिमानवश बलक कहत उफान को यहां विद्या अभिमान सो बल कही बकवाद करत सो प्रलाप सन्निपात है ताके वश ते यथार्थ देखि समुझि नहीं परत तहां तुलसीश जो रघुनाथजी वैद्य हैं नाम ओषधि है तिनकी गति नहीं लखत कि जो तुरतही पवि कहे वज्र ते क्षार करत औ क्षारते पवै कहे पहाड़ करत क्षण में वज्र सम पाप ताको क्षार कै देते यथा निषाद औ क्षार सम पतित जीव तिनको पहाड़ सम करत यथा वाल्मीकि इत्यादि प्रभुकी प्रभुता कोऊ नहीं देखत काहेते कलिकाल कुलि खल कही सब संसारही में खलल कहे सुमार्ग बिगारि दियो तो काको दोष दीजे कि तुम हरिविमुखता करते हौ औ कासों रोष कीजे कि तुम हरिविमुख हौ मुख देखबे लायक नहीं ताते हे श्रीरघुनाथजी मैं पाहि कहे शरण हौं मोको उबारो ६२ ॥

बबुर बहेरेको बनाय बाग लाइयत रूंधिबेको सोऊ सुरतरु काटियत है । गारी देत नीच हरिचन्दहू दधी-चिहू को आपने चना चबाइ हाथ चाटियत है ॥ आप महापातकी हँसत हरि हरहू को आपुहैं अभागी भूरि-भागी डाटियत है । कलिकी कलुष मन मलिन किये महत मशककी पांसुरी पयोधि पाटियत है ६३ ॥

तन्त्रन में जहां पिशाचादि को सिद्ध करिबे हेतु मंत्र जपादि कहा सो बबुर बहेराही तर लिखा है याते मलिनबुद्धि लोक पुजा-इबे को पिशाचादि सिद्ध करिबे हेतु बबुर बहेरादिकी बाग सुथल बनाइकै लगावते हैं ताके रूंधिबे को सुरतरु देवपूजक वृक्ष

था पीपर चन्दन आंब बिल्व अँवरादि को काटत हैं वा नीच गी अधर्मिन सों नेह करि तिनको पालिबे हेतु धर्मात्मन को ण्ड देत औ सूमशिरताज नीच आपु तौ ऐसो है जो चना चबाइ थ चाटत कि कछु लागि न रहा होइ वा चनौ पेटभरि नहीं य ऐसे नीच ते हरिश्चंद्र दधीचि आदि धर्मात्मन को गारी ते हैं कि वे अहमक रहे जो सर्वस्व औ प्राण दै दिये तहां जो पु अधर्मी तौ धर्मात्मन को क्यों मानैं औ आपुतौ महापातकी स्वाभाविक पापही में मन रहत अरु औरे सुकृतिन को कौन हैं लोक पावन करता हरि हर ऐसे पावित्रन को पाप लगाय ते हैं यथा विन्दा मोहिनी के प्रसंग ते आपु तौ ऐसे अभागी अन्न वस्त्र नहीं पावत औ बड़ेही भाग्यवानन को डाटत कि हम हूको नहीं समुझते हैं ऐसे नीच दरिद्री कुमार्गी जीव कलि की चाल में कलुष कहे पाप करिकै मन मलिन ते किञ्चित् धर्म ाउ मात्र करि महत् कहे बड़ा गुमान किये हैं कि हम भवसागर र जायँगे तापै गोसाईंजी तर्क उपखान कहत कि मशनकी पांसुरिन पयोधि कहे समुद्र पाटा चाहत हैं भाव महापापी कुटिल जीव ञ्चित् धर्म देखावमात्र करि भवसागरपार कैसे जायँगे ६३ ॥

सुनिये कराल कलिकाल भूमिपाल तुम जाहि लो चाहिये कहौ धौं राखै ताहि को । हौं तौ दीन बरो बिगारयो ढारयो रावरो न मैं हूं तैहूं ताहिको कल जग जाहि को ॥ काम कोह लाइकै देखाइयत ांखि मोहिं येते मान अकस कीबे को आपु आहि । साहिब सुजान जिन श्वानहू को पक्ष कियो राम ला नाम हौं गुलाम राम साहि को ६४ ॥

हे कालिकाल कराल सुनिये जाको तुम घालो कहे मारो चाहो ताहिको कहो कौन धौं राखि सकै काहेते तुम भूमिपाल हौ तुमको नीति करनी चाहिये भाव मोटे सबल को डाटौ दीन दूबरे को पालौ तहां हौं कहे मैं तो दीन दूबरो हौं दूसरे आपुको कछु ढारो कहे बनायो बिगास्यो नहीं इति विनती करे ताहूपर कलियुग न मान्यो तब कहत कि जाहि मालिक को सकल जग है ताही के मैं हूँ तोहूँ है भाव रघुनाथजी की तरफ़ ते तुम राजा हौ मैं उनको गुलाम हौं तहां काम क्रोधादि कुटिल दूत लगायकै मोको आंखि देखाइयत हौ तो हम पूछते हैं कि इतनो अभिमान औ अकस कहे शत्रुता करनेवाले आपु हमरे कौनहैं अच्छा जो अकस करते हौ तो यह बात जाने रहना यह रूबकारी एक दिन परैगी काहेते श्रीरघुनाथजी सज्ञान साहेब हैं जे अवधवासी श्वानहूंको पक्ष करि ब्राह्मण को दण्ड दीन औ मैं तो श्रीराम साहेब को गुलाम हौं अरु रामबोला मेरो नाम है यह प्रौढि है ९४ ॥

सांची कहौं कलिकाल कराल मैं ढारो बिगारो तिहारो कहा है । काम को लोभ को क्रोध को मोह को मोहिंसों आनि प्रपञ्च रहा है ॥ हौ जगनायक लायक आजु पै मेरियो देव कुटेव महा है । जानकीनाथ विना तुलसी जग दूसरे सों करिहौं न हहा है ९५ ॥

हे कलिकाल कराल यह सांची कहत हौं कि मैं तुम्हारो बनायो बिगारेउ कहा है भाव कबहूँ काम बनावतो अब न बनावतो तो क्रोध करिबो उचित रहै वा कुछ बिगारतो तौ क्रोध करिबो उचित है निर्हेतु क्रोध क्यों करते हौ कौन क्रोध है सो कहत कि काम को प्रपञ्च लोलुपता लोभ को प्रपञ्च पाखण्ड क्रोधको प्रपञ्च

अविचार मोह को प्रपञ्च अज्ञानता इत्यादि प्रपञ्च करिबे को तुमको मेरेही ऊपर रहा है भाव और कोऊ नहीं है जग में एक नहीं हौ क्यों न हुकूमति करौ आज तुम जगनायक कहे स्वामी हौ दण्ड रक्षादि सब करिबे लायक हौ पै हे देव! मेरी भी यह महाकुटेव है भाव पुष्ट हठ पकरे हौं कि एक जानकीनाथ विना जग में दूसरे सों हाहा विनती तुलसी न करिहै भाव श्रीरघुनाथ जी सों गर्ज सुनैहौं तुमते हाहा विनती न करिहौं ९५ ॥

भागीरथी जल पान करौं अरु नाम द्वै रामके लेत नितैहौं । मोसों न लेनो न देनो कछू कलि भूलि न रावरी ओर चितैहौं ॥ जानिकै जोर करौं परिणाम तुम्हैं पछितैहौ पै मैं न भितैहौं । ब्राह्मण ज्यों उगिल्यो उरगारि हौं त्योंही तिहारे हिये न हितैहौं ९६ ॥

भागीरथी महापापनाशिनी गङ्गाजी को जल पान करत हौं भाव काहूके कूप को नहीं औ श्रीरघुनाथजी के नाम द्वै बार सन्ध्या प्रभात वा सीता राम ऐसे द्वै नाम वा एक बार नाम लीन्हे भवसागर पार होत मैं तो श्रीराम के द्वै नाम नितही लेत हौं हे कालिकाल ! हमसों तुमको न कछु लेनी है न कछु देनी है ते रावरे कहे आपकी ओर मैं भूलिहू कै न चितैहौं भाव आपते मैं हेतु रहित हौं ऐसा जानिहू कै जोर करते हौ सो कछु भलो नहीं क्योंकि परिणाम कहे अन्तमें तुमही पछितैहौ पै मैं न भितैहौं मैं न डरिहौं कौन भांति यथा उरगारि गरुड़ ब्राह्मण को उगिल्यो त्योंही हौं कहे मैं तिहारे हृदय में न हितैहौं भाव हूँ तुम्हारे उरमें न पचौंगो गरुड़ जा समय अमृत हरबे हेत चले तब पिता ते कहे कि हमारे क्षुधा लगी तब कश्यप ने कह्यो

कि उत्तर तटवासी पातकी निषादन को खाउ यह सुनि गरुड़ सबको भक्षण करि गयो तिनमें एक नष्ट ब्राह्मण मिला रहै वह उरमें दाहक भयो तासों गरुड़ कह्यो कि तुम निसरि आवो आने कह्यो कि हमारे संगिन को निकासौ तौ हम निकरैंगे यह सुनि गरुड़ सबको उगिलिकै सुखी भये भाव यह कि नष्ट भी ब्राह्मण किञ्चित् ब्रह्मतेजते गरुड़ पचाइ न सके तैसे मैं भी जो पतित हौं तौ श्रीरामनामके प्रतापते कलियुग तुम न पचै सकोगे ९६ ॥

राजमरालके बालक पेलिकै पालत लालत खूसर को । शुचि सुन्दर शालि सकेलि सुबारिकै बीज बटोरत ऊसर को ॥ गुण ज्ञान गुमान भभेरि बड़ो कल्पद्रुम काटत मूसर को । कलिकाल विचार अचार हरी नहिं सूझै कछू धमधूसर को ९७ ॥

राजमराल कहे हंसन के बालकन को पेलि कहे ढकेलिकै खूसर कहे खूसट जो मशानी पक्षी अपावन ताको लालत दुलारत पालत नेह राखत भाव उत्तम पावन विवेकी हरिभक्तन के वेष बालकन को निरादर करि कौल कपालिन को पूजते हैं शुचि कहे पवित्र सुन्दर शालि कहे धान सुखेतसों सकेलि कहे बटोरिकै बारि कहे फूंकिकै ऊसर बोइबे हेतु ऊसरही के बीज बटोरत हैं भाव सुकृति को अधर्म अग्नि में जराइ डारत तुच्छ देव भूतादि के सिद्ध हेतु उनके यन्त्र मन्त्र बटोरते हैं तापर अनेक भांति को गुमान करे हैं सोई बड़ो भभेरि कहे घबराहट ज्ञानादि गुणन के भगाइबे हेतु है भाव गुमान भये ज्ञानादि सब गुण जात रहत हैं औ मूसर हेतु कल्पद्रुम काटते हैं भाव लौकिक कलेश परे पर श्रीरामनाम लेते हैं धर्म अधर्म को विचार तप शौचादि अचार

सब कलिकाल ने हरि लयो तापर धमधूसर निर्बुद्धि जीवन को नहीं सूझिपरत कि और धर्म तो है नहीं सकृत स्वाभाविक श्रीरामनाम तो जपिये कल्प हेतु ९७ ॥

कीबे कहा पढ़िबेको कहा फल बूझि न वेद को भेद बिचारयो । स्वारथ को परमारथ को कलि कामद राम के नाम बिसारयो ॥ वाद विवाद विषाद बढ़ाइकै छाती पराई औ आपनि जारयो । चारिहु को छहुको नवको दश आठको पाठ कुकाठ ज्यों फारयो ९८ ॥

कीबे कहा सुन्दर नर देह पाइकै का करिबे को चाही अर्थात् हरि भक्ति न कीन्ह्यों औ वेद पुराणन को भेद काहू सों बूझिकै वा अपने मनते न बिचारयो कि पढ़िबे को कहा फल है यथा ॥ वेद पुराण सन्त मत येहू । सकल सुकृत फल राम सनेहू ॥ पुराणे ॥ सर्वेषां वेदसाराणां रहस्यान्ते प्रकाशितम् । एको देवो रामचन्द्रो व्रतमन्यं न तत्समम् ॥ स्वारथ कहे लोक सुखदाता परमारथ कहे परलोक सुखदाता कलियुग में बिशेष कामद मनोरथ दाता कल्पवृक्ष सम श्रीरामनाम को बिसारिकै विद्या के मान ते वाद विवाद विषाद कहे दुःख बढ़ायकै क्रोध सों परारी और आपनी छाती जरायो याते चारिहू वेद यथा ऋग्यजु साम अथर्वण छहू शास्त्र यथा मीमांसा सांख्य वैशेषिक न्याय योग वेदान्त नव व्याकरणें यथा इन्द्र चन्द्र काशिकृष्ण शकट पिप्पलायन पाणिनि अमर जैनेन्द्र सरस्वती दश आठ पुराणें यथा मीन, भविष्य, शिव, वाराह, वामन, ब्रह्म, ब्रह्माण्ड, गरुड़, मार्कण्डेय, पद्म, विष्णु, नारदीय, लिङ्ग, ब्रह्मवैवर्त्त, अग्नि, कूर्म, स्कन्द, भागवत इत्यादि को पाठ कहे पढ़िबो कैसा कीन्ह्यो यथा कुकाठ विना रेशा को उकठा

खुहा जो फारिबे को परिश्रम दृथा तथा विना हरिभक्ति वेदादि को पढ़िबो दृथा यथा ॥ श्रुति पुराण सब ग्रन्थ कहाहीं । रघुपति भक्ति विना सुख नाहीं ॥ पद्मपुराणे ॥ न तत्पुराणं नहि यत्र रामो यस्यां न रामो न च संहिता सा । स नेतिहासो नहि यत्र रामः काव्यं न तत्स्यान्नहि यत्र रामः ॥ अन्यच्च ॥ पठितसकलवेदः शास्त्रपारंगतो वा यमनियमपरो वा धर्मशास्त्रार्थकृद्वा ॥ अटति सकलतीर्थं व्राजको वा हुताग्निर्नहि हृदि यदि रामः सर्वमेतद्वृथा स्यात् ९८ एक समय सिद्धजन आप गोसाईंजी सों पूछ्यो कि तुम्हारे कौन सिद्धाई है तापर गोसाईंजी यह कवित्त कहे आगम वेद पुराण इति ॥

आगम वेद पुराण बखानत मारग कोटिन जाहिं न जाने। जे मुनि ते पुनि आपुहिं आपुको ईश कहावत सिद्ध सयाने ॥ धर्म सबै कलिकाल ग्रसे जप योग विराग लै जीव पराने। को करि शोच मरै तुलसी हम जानकीनाथ के हाथ बिकाने ९९ ॥

आगम कहे षट् शास्त्र चारिउ वेद अठारहौ पुराण उपपुराण इत्यादि कोटिन मार्ग बखानत जो कोऊ जाना चाहै तो जानो नहीं जात तथा ऋग्वेदी यजुर्वेदी सामवेदी अथर्ववेदी मीमांसी सांख्यवैशेषिकी न्यायी योगी वेदान्ती वैष्णव शैव शाक्त सौर गाणपत स्मार्तक द्वैतवादी अद्वैतवादी विशिष्टाद्वैतवादी ईश्वरवादी मायावादी जीववादी कालवादी कर्मवादी अग्निवादी जलवादी भूमिवादी पवनवादी आकाशवादी कामवादी तपस्वी तीर्थाटनी मौनी पयोहारी जापक अर्चक नवधा प्रेमी परावाले इत्यादि आस्तीक पुनः जंगम चार्वाक दिगम्बर कौल कपाली जैनी श्रावक

तंत्री बौधनी लम्पटी आरद्रपटी अजिनपटी पाशुपती महाव्रती इत्यादि अनेकन हैं पुनि जे मुनि हैं तिनमें जे ब्रह्मवादी हैं ते आपु अपना को ईश कहावते हैं अणिमादिक वाले अपना को सिद्ध कहावते हैं जे कर्मकाण्डी आचार्य हैं ते अपना को सयाने कहावते हैं सत्य शौच तप दानादि यावत् धर्म हैं तिन सबन को कलिकाल ग्रस्यौ कहे लीलि लेन चाहत ता भयते जप योग वैराग्य जीव लै लै पराने कहे भागि गयो ताको शोच करि करि को मरै गोसाईंजी कहत कि हम जानकीनाथ के हाथ बिकाइ गये भाव शुद्ध शरणागत के भरोसे हौं ९९ ॥

धूत कहौ अवधूत कहौ रजपूत कहौ जुलहा कहौ कोऊ। काहूकी बेटी सों बेटा न ब्याहब काहूकी जाति बिगार न सोऊ ॥ तुलसी सरनाम गुलाम है रामको जाको रुचै सो कहौ कछु सोऊ। मांगि कै खैबो मजीत को सोइबो लेबेको एक न देबेको दोऊ १०० ॥

धूत कहौ कोउ छली कहौ अवधूत कहौ कोऊ सांचो फकीर कहौ रजपूत कहौ कोऊ उत्तम धैर्यवान् कहौ जोलाहा कहौ कोऊ नीच कादर कहौ वा कोऊ कुछु कहौ मोको काहू की बेटी सों बेटा नहीं ब्याहिबो है जो काहूकी जाति बिगारत होऊं सोऊ नहीं है ताते जाको जो रुचै सो कुछु कोऊ कहौ तुलसी तौ सरनाम प्रसिद्ध श्रीरामको गुलाम है मांगि कै खैबो अर्थात् काहू एकको आसरा नहीं दूध भिक्षा उत्तम धान्यहै औ मसजिद को सोइबो भाव काहू के द्वारपै नहीं जाबे है भरोसे रघुनाथजी के न काहू सो लेनो एक न देनो दोइ भाव लोक व्यवहार रहित हौं १०० जाति पांति की मर्यादा सरवरिया ब्राह्मणन में प्रसिद्ध है पांति वालेन को

वनवास व खात पांति वालेन के विवाहत जाति में वे श्रेष्ठ हैं ॥

मेरे जाति पांति न चहौं काहूकी जाति पांति मेरे कोऊ कामको न हौं काहूके कामको । लोक परलोक रघुनाथहीके हाथ सब भारी है भरोसो तुलसीके एक नामको ॥ अतिही अयाने उपखाने नहिं बूझैं लोग साहेबको गोत गोत होत है गुलामको । साधुकै असाधुकै भलोकै पोच शोच कहा का काहूके द्वारपरो जो हौं सो हौं रामको १०१ ॥

मेरे जाति पांति न भाव जो जाति में प्रकट भयों ताको त्याग कियों याते मेरे जातिकी भांति नहीं है तौ औरहू की जाति पांति नहीं चाहत हौं कि मोको कोऊ जाति पांति में बैठावै काहेते न कोऊ मेरे कामको है औ न मैं काहू के कामको हौं क्योंकि मैं तो श्रीरघुनाथजी के हाथ बिकाइ गयों याते लोकहू परलोक को निबाह मेरो श्रीरघुनाथही के हाथहै काहेते तुलसी को भारी भरोसा एक श्रीरामनामही को है भाव यंत्र राजपै रामार्चन विधान में अनेक अंगदेव पूजे जात सो रहितहौं एक नाम बल श्रीरामको गुलाम हौं यामें जे संदेह करते हैं ते अतिही अयाने लोग हैं जे उपखान नहीं बूझते हैं सो कौन उपखान हैं यथा साहेबको गोत सोई गोत गुलामहू को होत तौ जो मैं श्रीरामगुलाम हौं तौ काहू की जाति पांति मोको क्या करना है साधुहौं कैधौं असाधु भलो हौं कैधौं पोच कहे बुरो हौं या बातको कहा शोच है क्या मैं काहू के द्वारपै परो हौं भलो बुरो जो कछु हौं सो श्रीरामही को हौं १०१ ॥

कोऊ कहै करत कुसाज दगाबाज बड़ो कोऊ कहै ...मको गुलाम खरो खूब है । साधु जानैं महासाधु ...ल जानैं महाखल बानी झूठी साँची कोटि उठति ...बूब है ॥ चहत न काहू सों कहत न काहूको कछू ...बकी सहत उर अन्तर न ऊब है । तुलसी को भलो ...च हाथ रघुनाथही के रामकी भगति भूमि मेरी मति ...ब है १०२ ॥

कोऊ कहत कि छल कपट ठगी आदि कुसाज करत याते बड़ो ...गाबाज है कोऊ कहत शुद्ध शरणागत खूब खरो श्रीरघुनाथजी ...गुलाम है तहां जे साधु हैं ते महासाधु करि मानत हैं औ जे ...ल हैं ते महाखल जानत हैं इत्यादि झूठी सांची वाणी कोटिन ...ब कहे पानी कैसो बुल्ला उठता है हबूब शब्द अरबी है औ काहू ...ां कछु चाहत नहीं कि मोको कोऊ कछु देइ औ काहू को कछु ...हत नहीं कि क्यों ऐसी बात मोको कहते हौ सबकी कही बात ...हत हौं ताको कछु उर अन्तर में ऊब नहीं काहे ते तुलसी को ...लो होनो वा पोच कहे बुरो होनो सब श्रीरघुनाथही के हाथ है ...योंकि श्रीरामभक्तिरूप भूमि पै मेरी मति दूब सम सदा हरित है ...क्ति पै मति सदा लवलीन है १०२ ॥

जागैं योगी जंगम यती समाज ध्यान धरैं डरैं उर ...ारी लोभ मोह कोह कामके । जागैं राजा राजकाज ...वक समाज साज शोचैं सुनि समाचार बड़े वैरी वाम ...े ॥ जागैं बुध विद्या हित पंडित चकित चित जागैं

लोभी लालच धरणि धन धामके । जागैं भोगी भोग ही वियोगी रोगी रोगवश सोवै सुख तुलसी भरोसे एक राम के १०३ ॥

योगी अष्टांग करनेवाले जे चित्तनिरोधक हैं जंगम जे शिवलिंग उपासक हैं यती संन्यासी व जैनी समाज सत्संग में रहनेवाले ध्यान धरे जे ध्यानी हैं या योगी आदि के समाज में जे ध्यान आपने तत्त्वपर राखते हैं ते काम क्रोध लोभ मोहादि को भारी डर है उरमें ताते जागते हैं भाव सदा सजग रहते हैं जे राजा हैं ते राज काज कहे प्रजादि की रक्षा तसीलादि सेवक सिपाइ समाज को अस्त्र वाहनादि साजिबे हेतु बड़े वैरी वाम कहे टेढ़े को समाचार सुनि शोचवश ते जागैं बुधजन पंडित बुद्धि विद्या हेतु जागैं लोभी सदा चकित चित धरणि धन धाम के लालच जागैं भोगी भोग हेतु जागैं वियोगी विरहमें जागैं रोगी रोगवश जागैं इत्यादि सबको भय लागि है गोसाईंजी कहत जाको एक श्रीरघुनाथजी को भरोसा है सोई सुखसों सोवतहै यथा ॥ जो अपराध भक्त कर करई । रामरोष पावक सो जरई ॥ वाल्मीकीये ॥ सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते ॥ अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतं मम १०३ ॥

राम मातु पितु बन्धु सुजन गुरु पूज्य परमहित । साहेब सखा सहाय नेह नाते पुनीत चित ॥ देश कोश कुल कर्म धर्म धन धाम धरणि गति । जाति पांति सब भांति लागि रामहिं हमार पति ॥ परमारथ स्वारथ सुयश सुलभ राम ते सकल फल । कह तुलसिदास अब जब कबहुँ एक रामते मोर भल १०४ ॥

सबको आश भरोसा छांड़ि यावत् सम्बन्ध हैं सब श्रीरघुनाथ[जी] में स्थित करत यथा माता पिता बन्धु सुजन कहे संबंधी पूज्य [क]हे इष्ट परम हितकार स्वामी सखा सहायक पुनीत कहे पवित्र चितते यावत् सनेह के नाते हैं देश आपनो या राज कोष कहे [ख]जाना कुलको धर्म कर्म धन कहे द्रव्य धाम घर धरणि पृथ्वी [ग]ति कहे भरोसा जाति पांति आदि सब भांति पति कहे मर्यादा हमारि एक श्रीरघुनाथैजी लागि हैं परमारथ कहे परलोक में गति [स्व]ारथ कहे लोक सुख जगमें सुयशादि यावत् फल हैं ते सकल एक श्रीरघुनाथैजी सों सुलभ होइँ गोसाईंजी कहत कि चहै अब होइ चहै कबहूं होइ जब होई तब एक रघुनाथैजी सों मेरो भलो होई यह अनन्यता को लक्षण है यथा ॥ नातो नेह राम सों करि सब नातो नेह बहै हौं ॥ यही शिवसंहिता में हनुमान्जी कहे यथा ॥ पुत्रवत्पितृवद्रामो मातृवन्मम सर्वदा । स्यालवद् भ्रामवद्रामः श्वश्रूवच्छ्वशुरादिवत् । पुत्रीवत्पौत्रवद्रामो भागिनेयादिवन्मम । सखी-सत्सखिवद्रामः पत्नीवदनुजादिवत् ॥ इत्यादि सब कहे हैं १०४ ॥

महाराज बलिजाउँ राम सेवक सुखदायक । महाराज बलिजाउँ राम सुन्दर सबलायक ॥ महाराज बलिजाउँ राम सब सङ्कटमोचन । महाराज बलिजाउँ राम राजीवविलोचन ॥ बलिजाउँ राम करुणायतन प्रणतपाल पातकहरण । बलिजाउँ राम कलिभय विकल तुलसिदास राखिय शरण १०५ ॥

पंचम चरण में करुणायतनादि तीन गुण कहे तिनको इहां क्रमते उदाहरण जानब यथा राजन के राजा महाराज

हे श्रीरघुनाथजी मैं बलिजाउँ आपु करुणायतन हौ भाव करुणा गुण के स्थान हौ करुणा गुण का यह लक्षण है कि सेवक के दुःख में प्रभु आपु दुखित होत औ सेवक को सुखी करत यथा विभीषण पै रावण शक्ति चलाई सो प्रभु आपु सहे विभीषण को बचाइ लिये ताते महाराज आपु सेवक सुखदायक हौ पुनः हे महाराज श्रीरघुनाथजी मैं बलिजाउँ आपु प्रणतपाल हौ प्रणत कहे शरणागत ताके पालनहार हौ यथा विभीषण शरण आये ताको लोकहू परलोकते अकंटक कीन्हे ताते सुन्दर रूप आपु सब लायक हौ पुनः हे महाराज श्रीरघुनाथजी आपु पातकहरण हौ पापहरणहारे याते कि जहां पापन करिकै काहूको दुख परा सो शरणहै आपुको नाम पुकारा ताके पाप नाश करि कलेश मिटाय दियो यथा गज वा अहल्या उद्धार कियो ताते आपु संकटमोचन हौ सब भांति संकट के छुड़ावनहार हौ पुनः हे महाराज श्रीरघुनाथजी मैं बलिजाउँ आपु राजीवलोचन हैं कमल सम नेत्र शीतल हैं वा राम राजीवलोचन यथा श्रीराम राम कहे परब्रह्म गुणनिधि जीव कहे जीवन पै वि कहे विशेषि लोचन कहे दयादृष्टि राखे हौ अर्थात् श्रीरघुनाथजी परब्रह्म गुणनिधि हौ जीवन पर विशेष दयादृष्टि राखेहौ ताते बलिजाउँ मैं कलियुग के भय करिकै विकल हौं सो तुलसीदासहू को शरण में राखिये राजीव शब्दार्थ तेंतालिस के कवित्तमें लिखाहै याते इहां सूक्ष्म कहा १०५ ॥

जय ताड़का सुबाहुमथन मारीचमानहर । मुनिमखरक्षनदक्ष शिलातारण करुणाकर ॥ नृपगणबल मदसहित शंभुको दंडबिहंडन । जय कुठारधरदर्पदलन दिनकरकुलमंडन ॥ जय जनकनगर आनन्दप्रद सुखसागर सुखमाभवन । कह तुलसिदास सुरमुकुटमणि जय जय जय जानकिरमन १०६ ॥

जो पूर्व गुण कहे सो सप्तकाण्ड सूचनिकाते तीनि षट्पदमें है तहां प्रताप वर्णन ताते ताड़कावधते प्रारम्भ करे यथा ताड़का सुबाहुको मथन कहे नाशक औ मारीच मानहर कहे बिन फर बाणते उड़ाइ समुद्र पार डारे ऐसे श्रीरघुनाथजीकी जय होइ मुनि विश्वामित्र की यज्ञरक्षा करिबे में दक्ष कहे प्रवीण हैं शिलारूप अहल्या तारणहार करुणाके आकर कहे खानि हैं नृपगणसमूह राजन को बल मदसहित शंभुको धनुष विहंडन कहे नाश करन हारे कुठारधर परशुरामको दर्प कहे अभिमान दलनहारे दिनकर सूर्यकुल मण्डन कहे भूषण श्रीरघुनाथजी की जय होय जनक नगर आनंदप्रद कहे श्रीजानकीजी के विवाह ते सबको सुख दिये ऐसे सुख के समुद्र सुखमा शोभा के भवन श्रीरघुनाथजी की जय होइ गोसाईंजी कहत कि सुरमुकुटमणि देवशिरोमणि याते कहे सन्तनकी रक्षाहेतु चले ऐसे श्रीजानकीरमण की जय होइ जय होइ जय होइ इहां तक बाल अयोध्या भयो १०६ ॥

जय जयंत जयकर अनंत सज्जनजनरंजन । जय विराधवधविदुष विबुध मुनिगण भयभंजन ॥ जय निशिचरी विरूपकरन रघुवंश विभूषण । सुभट चतुर्दश सहस दलन त्रिशिरा खरदूषण ॥ जय दंडकवन पावन करन तुलसिदास संशयशमन । जग विदित जगतमणि जयति जय जय जय जय जानकिरमन १०७ ॥

जयन्त इन्द्रपुत्र जो काक है द्रोह कियो ताके जयकर कहे जीतनहार औ अनंत कहे अनेकन अत्रि आदि सज्जनको रंजन कहे आनन्दकरनहारे श्रीरघुनाथजी की जय होइ विराधके वधवे में पण्डित अर्थात् काहू अस्त्र सों नहीं मरत रहै ताको जीवतही भूमि में गाड़ि दियो ताते विबुध जो देवता मुनि गण कहे समूह तिनके भय डरके भंजनहारे प्रभु की जय होइ निशाचरी सूर्पणखा की नाक कान काटि विरूप कुरूप करनहारे ऐसे रघुवंशविभूषण की जय होइ चौदह हजार सुभट सहित त्रिशिरा खर दूषण के दलनहारे प्रभु की जय होइ शुक्रशापते दग्ध दण्डकवन पवित्र करनहारे तुलसीदास की संशय कलियुग की ताको नाशनहारे जगमें विदित जगतमणि सूर्य इव प्रकाश करनहारे श्रीजानकीरमणकी जय की इति कहे संपूर्ण जय जिनमें है ऐसे प्रभु की भूतकाल में जय होत आई वर्तमानमें जय है भविष्यमें होइ १०७॥

जय मायामृगमथन गीध शवरी उद्धारण । जय कबन्धमूदन विशाल तरु ताल विदारण ॥ दवनबालि बलशालि थपन सुग्रीव संतहित । कपि करालभट भालुकटक पालन कृपालचित ॥ जय सियवियोगदुखहेतुकृतसेतुबंधवारिधिदमन । दशशीश विभीषण अभयप्रद जय जय जय जानकिरमन १०८ ॥

रावण प्रेरित मारीच माया कहे कपट मृगरूप आयो ताको मथन कहे नाशनहार गीध शवरी नीच योनि सम्बन्धी कर्म उद्धार करि निजधाम पठावनहार प्रभुकी जय होइ कबन्ध बिन शिर के राक्षस को सूदन कहे नाश करनहार सुग्रीव के बताये विशाल

ल तरु कहे वृक्षनको विदारनहार प्रभुकी जय होइ शालि कहे महाली बालिको दमन कहे नाश करि हित कहे मित्र सुग्रीव को तकरि कपिनायक करि थापे ऐसे प्रभुकी जय होइ औ कृपाल है त जाको ताते चंचल पशु वानरन को अरु करालभट भालुन कटक के पालनहार प्रभुकी जय होइ श्रीजानकीजी के वियोग दुःखहेतु कृत कहे करत भये सेतु बंध वारिधि कहे समुद्र उतरि शशीश को कुल सहित दमन कहे नाश करि विभीषण को काहू परलोकते अभय प्रद कहे देनहारे श्रीजानकीरमण की निउँ काल में जय होय १०८ ॥

कनककुधर केदार बीज सुन्दर सुरमणिवर । सींचि कामधुक धेनु सुधामय पय विशुद्धतर ॥ तीरथपति अंकुरस्वरूप यक्षेश रक्ष तेहि । मरकतमय शाखा सुपत्र मंजरि सुलक्ष जेहि ॥ कैवल्य सकलफल कल्पतरु शुभसुभाव सब सुखबरिस । कह तुलसिदास रघुवंशमणि तौकि होहि तव करसरिस १०९ ॥

अभूत कल्पवृक्ष को रूपक कहत तहां प्रथम थाल्हा चाहिये सो कहत कि कनक कुधर केदार कनक कुधर कहे सुमेरुगिरि जो भूमि सर्व वस्तु की खानि ताको मध्य सारंस सुमेरु सोई केदार कहे थाल्हा होइ तब बीज चाहिये सो कहत बीज सुन्दर सुरमणि वर कहे श्रेष्ठ सुरमणि कहे चिंतामणि जो चिंतित फल देनहारी सोई अदग्ग सुन्दर बीज होइ तहां सींचेते बीज जामि अंकुरित होत ताको कहत विशुद्धतर कहे विशेषि शुद्धहूते शुद्ध सुधा कहे अमृतमय कामधेनु के पय कहे दूध सों सींचो जाय तब अंकुरहै

वृक्ष होवो चाही सो कहत कि तीर्थपति प्रयाग सब फलदायक सोई जाको अंकुर होय पुनः स्वरूप होइ ताको रत्तक चाही सो यक्षेश कुबेर जाके रक्षक होयँ शाखापत्र चाही सो मरकतमणि जो हरित नीलरंग सों श्याम मरकतमणिमय शाखा होइँ हरित मरकतमय सुन्दर पत्र होयँ तब मंजरी चाहिये सो कहत सुलक्षि कहे लक्ष्मीजी सुन्दर मंजरी होइँ तब फल चाहिये सो कैवल्य कहे मुक्ति सकल फल सहित कल्पवृत्त शुभ सुभाव अर्थात् यह कल्पवृक्षते शुभ अशुभ जोई मांगै सोई देइ तैसो सुभाव न होइ यह कल्पवृक्ष शुभ सुभावते सब सुखै बरसै ताहूपै गोसाईंजी कहत हे रघुवंशमणि ऐसेहू कल्पवृक्ष होइ तौ का आपके कर सरिस होइ अर्थात् नहीं होइ यह दृढ़ताऽतिशयोक्ति अलङ्कार है यथा ॥ सामासंग्य विचारिकै पुनि विशेषि दृढ़ भाव । दृढ़ता अतिशय उक्ति सो वरणत रसिक सुदाव ॥ या कवित्त में राजसिंहासनासीन समय की है तहां तक पच्चीस कवित्तन में कलियुग की भभरि में श्रीरामनाम शरणागती प्रबल कहे १०६ ॥

जाइ सो सुभट समर्थ पाइ रणरारि न मंडै । जाइ सो यती कहाइ विषयवासना न छंडै ॥ जाइ धनिक बिन दान जाइ निर्धन बिनु धर्महि । जाइ सो पंडित पढ़ि पुराण जो रत न सुकर्महि ॥ सुत जाइ मातु पितु भक्ति बिनु तिय सो जाइ जेहि पति न हित । सब जाइ दासतुलसी कहै जौ न रामपद नेह नित ११० ॥

सुभट योधा समर्थ कहाय कै रणभूमि पायकै रारि कहे युद्धमें न मंडै वीरता करि युद्ध को भूषित न करै सो जाय कहे वृथा है

फिर वाको कोऊ वीर न कहैगो यती विरक्त कहाय विषय की ासना न छांड़ै सो वृथा जाय वाको विरक्त न कहैगो धनिक नवान कहाय उत्तम दान न दियो सो धनिक जाय कहे वृथा है ाको सब दरिद्री कहैंगे निर्धन जो गरीब है बिन धर्म कहे जो ौकिक धर्म छांड़ि देय तो वाकी मर्यादा लोक में वृथा ह्वैजाय कोऊ िश्वास न राखै पंडित बुद्धिमान् पुराण पढ़ि सुकर्म में रत न भयो ो जाय कहे वृथा है वाको कोऊ सुबुद्धी न कहैगो पुत्र ह्वैकै माता िता की भक्ति सेवा न करै सो जाय वृथा है वाको कोऊ सपूत न हैगो स्त्री है पतिसों हित कहे प्रीति न राखै सो जाय कहे वृथा वाको लोग कुनारी कहैंगे तथा गोसाईंजी कहत कि जे श्रीरघुनाथी के चरण कमलन में नित नेह न कीन्हें ताके वर्णाश्रम धर्म कर्म ब वृथा हैं यथा रुद्रयामले ॥ ये नराधमलोकेषु रामभक्तिपराङ्मुखाः पं तपं दया शौचं शास्त्राणामवगाहनम् ॥ सर्वं वृथा विना येन णु त्वं पार्वति प्रिये ११० ॥

को न क्रोध निरदह्यो कामवश केहि नहिं कीन्हों । ो न लोभ दृढ़ फंद बांधि त्रास न करि दीन्हों ॥ वन हृदय नहिं लाग कठिन अति नारिनयन र । लोचन युत नहिं अंध भयो श्री पाइ कवन नर ॥ र नागलोक महिमंडलहु को जु मोह कीन्हो जयन । ह तुलसिदास सो ऊबरै जेहि राख राम राजिवयन १११ ॥

कौन ऐसा शांतचित्त है जाके उरको क्रोधाग्नि ने निर्दह्यो कहे ाह नहीं करि दियो कौन ऐसा धैर्यवान् है जाको कामने वश

नहीं कियो भाव सबको वश करि लोलुप बनावत कौन ऐसा त्यागी है जाको लोभने तृष्णारूप दृढ़ फंद में बांधिकरि चिन्तारूप त्रास न दीन्हें कौन ऐसा इन्द्रीजित है जाके हृदय में अति कठिन नारी के नयन को बाण नहीं लगो भाव सुन्दर स्त्री देखि को न आसक्त भयो श्रीद्रव्य वा राजश्री यथा देश कोष सेना वाहनादि हुकूमत पाइ कौन ऐसा चैतन्य है जो वर्तमान नेत्रन के रहते मनते मदांध न भयो सुरलोक नागलोक महिमंडलहू में को ऐसा विवेकी है जाको मोह ने जीति न लियो भाव सबको ममतावश करि मिथ्या दृष्टि करि दियो गोसाईंजी कहत कि कमलनयन श्रीरघुनाथजी जाको राखत हैं सोई ऊबरत है भाव जो श्रीरघुनाथजी की शरण है श्रीरामनाम उच्चारण करत ताको एकहू विघ्न नहीं बाधक होत यथा नारदीयपुराणे ॥ श्रीरामस्मरणाच्छीघ्रं समस्तक्लेशसंक्षयः । मुक्तिं प्रयाति विप्रेन्द्र तस्य विघ्नो न बाधते ॥ श्रीरामरक्षायाम् ॥ पाताल-भूतलव्योमचारिणश्छद्मचारिणः । न द्रष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं रामनामभिः १११ ॥

भौंह कमान सँधान सुठान जे नारि विलोकनि बाण ते बाचे । कोपकृशानु गुमान अँवां घट ज्यों जिनके मन आंच न आंचे ॥ लोभ सबै नट के वश ह्वै कपि ज्यों जगमें बहु नाच न नाचे । नीके हैं साधु सबै तुलसी पै तेई रघुवीर के सेवक सांचे ११२ ॥

टेढ़ी भौंहरूप कमान पर सुठान कहे संधान कीन्ह नारि विलोकनि कहे चंचल दृग तिरछी कटाक्षरूप बाण ते जे बचि गये ते प्रभुकी सेवकाई करिबे योग्य हैं पुनः गुमान कहे द्रव्य गुण विद्या जाति महत्त्वादि को अहंकार रूप आंवां में कोपरूप कृशानु कहे

ज्वलित आंच में घट सरिस जिन के मन न आंचे मन क्रोध न तप्त भये ते प्रभु की सेवकाई करिबे योग्य हैं लोभरूपी नट वश है कपि समान सब प्राणी जैसे जग में बहुत नाच नाचत तैसे जे न नाचैं तेई रघुवीर के सांचे सेवक हैं भाव कामादि हित है सेवकाई करै सो सांचो सेवक नहीं तो गोसाईंजी कहत सहज भाव में तो सबै साधु भले हैं ११२ ॥

भेष सु बनाय भले वचन कहैं चुवाइ जाइ तौ न रनि धरनि धन धामकी । कोटिक उपाय करि लालि लियत देह मुख कहियत गति रामही के नामकी ॥ कटै उपासना दुरावै दुर्वासनाहिं मानस निवासभूमि ोभ मोह कामकी । राग रोष ईरषा कपट कुटिलाई रे तुलसी से भगत भगति चहै रामकी ११३ ॥

अन्तर में धरणी पृथ्वी धन द्रव्य धाम घर ताके वृद्धि की चाह चिन्तारूप जरनि हिये ते तौ क्षणहू मात्र नहीं जाती है औ परते तुलसी भाल द्वादश तिलक मुद्रा अंकितादि सुवेष बनाइ मामृतसे चुवाइ टिकोरि टिकोरि भले भले नवधा प्रेमापरादि तुसहित मीठे मीठे वचन बनायकै मुखते कहत हैं तनपोषक कैसे जो सुखदायक धाममें शय्या शीतोष्ण निवारण दिव्य भोजन सनादि कोटिन प्रकारके उपाय करि लालि कहे दुलराइकै देह ो पालन करत अरु झूठही मुखते कहत कि हमारे एक गति श्री-म ही के नाम की है जाको गुप्त राखिबे को चाही ता उपासना ो तौ प्रकट करते हैं कि हम श्रीरामोपासक हैं औ भीतर लोभ ोह काम की जो जन्मभूमि है दुर्वासना कुमार्गी चाह सो मानस

कहे मनमें निवास कहे टिकी है ताको दुरावत कहे चोराये रहत राग कहे काहू सों प्रीति काहूसों रोष कहे क्रोध किहे ईर्षा कहे मन में शत्रुता राखे इत्यादि कपट करि भीतर तौ कुटिलाई भरे ते तुलसी ऐसे झूठे भक्त नेऊ श्रीरघुनाथजी की भक्ति चाहत सो कैसे मिली काहेते जो अनेकन जन्मतक जप होम योग ध्यान समाधि ब्रह्म ज्ञानादि में रत होइ तौ अंतःकरण शुद्ध होइ तब श्री रामभक्ति को अधिकारी होत यथा महारामायणे ॥ ये कल्पकोटि-सततं जपहोमयोगैर्ध्यानैः समाधिभिरहो रतब्रह्मज्ञानात् ॥ ते देवि धन्यमनुजा हृदि बाह्यशुद्धा भक्तिस्तदा भवति तेष्वपि रामपादौ ॥ सदाशिवसंहितायाम् ॥ कल्पकोटिसहस्राणि कल्पकोटिशतानि च ॥ पञ्चाङ्गोपासनेनैव रामे भक्तिः प्रजायते ११३ ॥

काल्हिही तरुणतन काल्हिही धरणि धन काल्हिही जितौंगो रण कहत कुचालिहै । काल्हिही साधौंगो काज काल्हिही राजा समाज मोसों कोऊ कहा भारे मही मेरु हालिहै ॥ तुलसी यही कुभांति घने घर घालि आये घने घरघालतहै घने घर घालिहै । देखत सुनत समुझतहू न सूझै सोई कबहूं कह्यो न कालहूको काल काल्हिहै ११४ ॥

अब दुर्वासना को रूप कहत कि ऐसा मनोरथ करत कि मेरो तन काल्हिही तरुण कहे युवा ह्वै जाइ जामें स्त्री मोहित होइ यह कामकी कुवासना है धरणि जो पृथ्वी धन द्रव्यादि सब काल्हिही होइ यह लोभ की दुर्वासना है काल्हिही शत्रु को रण में जीतौंगो यह क्रोध की दुर्वासना है इत्यादि कुमार्ग की वासना के वचन

[कह]ाली कहते हैं काल्हिही सब काम साधि लेउँगो राजसी [स]माज मेरे काल्हिही होइगो मोसे भारे कहे भारी सबल कोऊ [क]हां होइगो मही कहे मेरे ही ऐसा बलहै जासों मेरु कहे पर्वत [ह]ालत हैं अथवा मेरे बलते मही पृथ्वी मेरु पर्वत सब हालत भाव [मो]से भारी बलवान् कौनहै मैं पर्वत हलावनहार हौं यह अभिमान [की] कुवासना है गोसाईंजी कहत कि याही कुभांति कुरीति करि [भू]तकाल में अनेगिन घर घाले हैं वर्तमान में अनेगिन घर घालत [औ] भविष्य में अनेगिन घर घालि हैं इत्यादि सुने हैं अरु देखते [हैं] अरु समुझतं हैं ताहूपर नहीं सूझतहै सोई कुभांति दुर्वासना [के] सब कर्तव्यता शीघ्रही माने हैं कबहूं यह न कह्यो कि कालहू को [क]ाल कहे मृत्युहूका समय काल्हिहै भाव अन्तसमयकी सुधि भूली [सो] दुर्वासनाते ११४ ॥

भयो न तिकाल तिहूंलोक तुलसी सो मन्द नींदै [स]बसाधु सुनि मानौ न सकोचुहौं । जानत न योग हिय [ह]ानि मानै जानकीश काहे को परेखोहौं पापी प्रपंची [प]ोचुहौं ॥ पेट भरिबेके काज महाराजको कहायो [म]हाराजहू कह्योहै प्रणत विमोचुहौं । निज अघ जाल [क]लिकाल की करालता विलोकि होत व्याकुल करत [स]ोई शोचुहौं ११५ ॥

भूत भविष्य वर्तमानेति तीनिउँ काल में स्वर्ग मृत्यु पातालेति [त]ीनिउँ लोक में तुलसी ऐसो मतिमंद नहीं भयो ऐसा कहि सब [स]ाधु हमारी निन्दा करते हैं ताको सुनि कछु संकोच नहीं मानत [ह]ौं क्योंकि सांची कहते हैं और रघुनाथजी अपनी सेवकाई करिबे

योग्य मोको नहीं जानते हैं भाव कुमार्गी नष्ट मानते हैं ताते श्रीजानकीश हमको सेवकाई राखिबे में हिय ते हानि मानते हैं कि हमारी सेवा योग्य नहीं है ताको मैं काहेको परेखो उनको लागु दै उरहनो काहे को देउँ पापी प्रपंची कहे छली पोचु कहे बुरा तौ मैं हईहौं काहेते पेट भरिबे के हेतु महाराजको गुलाम कहायों तो आसरा कौन है ताको कहत कि महाराजहू तो कहेउ कि मैं प्रणत कहे शरणागत के क्लेश को विमोच कहे छुड़ावनहार हौं यथा वाल्मीकीये ॥ सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते । अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम ॥ ऐसे प्रभु के वचनन को भरोसा है तहां कलिकाल को करालता भयंकर रूप दुखद सुभाव समुझि व्याकुल होत हौं तामें आपने अघजाल कहे पापसमूह आपुमें समुझि ताही को शोचु करतहौं कि कैसे उबार होइगो ११५ ॥

धर्मके सेतु जग मंगल के हेतु भूमिभार हरिबे को अवतार लियो नरको । नीति औ प्रतीति प्रीति पाल चालि प्रभुमान लोक वेद राखिबे को प्रण रघुवर को ॥ वानर विभीषण की ओर की कनावड़ो हैं सो प्रसंग सुने अंग जरे अनुचर को । राखे रीति आपनी जो होइ सोई कीजै बलि तुलसी तिहारो घरजाई वाही घर को ११६ ॥

धर्म को सेतु कहे धर्म अपार समुद्र है ताको पार जाइबो दुर्घट है ताके सेतु हैं सहजही पार करि देत भाव सत्य शौच तप दानादि को फल शरणागत को सुलभ सिद्ध होत जग मंगल के हेतु कहे जिनके नाम के लेतही सब अमंगल नाश होत सुन्दर मंगल उत्पन्न

त औ भूमि को भार हरिबे को नर को ऐसो रूप है लोकमें वतीर्ण भयो ताके गुण कहत नीति यथा साम दाम दंड विभेद धैर्य संतोष विचार नम्रतादि प्रीति यथा ॥ प्रणय प्रेम आसक्ति ति लग्नलाग अनुराग । नेह सहित सब प्रीति के जानब अंग भाग ॥ यथा हम तुम एकही यह प्रणय है याकी सौम्य दृष्टि आसक्त होना आसक्ती है याको एक दृष्टि से दोऊ अहंकार को विषय है प्रीति उमँगि नेत्र कंठ भरि आवै सो प्रेम है याकी विह्वल ष्टि है क्षण प्रति सुमिरण होना यह लग्न है याकी उत्कंठा दृष्टि ये प्रेम लग्न दोऊ मन की विषय है चित्तकी चाह सो लाग है ाको चोपदृष्टि है जा रंग में चित्त रँगा रहै सो अनुराग है यह ीमत दृष्टि है ये लाग अनुराग दोऊ चित्त की विषय है मिलनि ोलनि में आनन्द सो नेह है याकी ललित दृष्टि है चिक्कनता ोभा सहित सर्वांग व्यवहार सो प्रीति याकी आधीन दृष्टि है यह ेह प्रीति बुद्धि की विषय है इत्यादि बुद्ध्यादिकी विषय अनुकूल जेहि रस को अत्यन्त भोगी है सर्वांग परिपूर्ण हैजाइ ताको प्रीति कही औ प्रतीति कही विश्वास सो नीति औ प्रतीति पालिबे की चालि कहे स्वभाव है प्रभुको औ लोक वेद को मान कहे मर्यादा राखिबेको पन है श्रीरघुनाथजी को तामें वानर जो सुग्रीव और विभीषण की ओर को कनावड़ो है भाव ऐसा कुछु हारे हैं कि जिनके अवगुण जन्म पर्यंत नहीं देखे सो प्रसंग सुनि अनुचर जो मैं ताको अंग क्रोध सों जरत भाव जैसी कृपा उनपै तैसी मोपर क्यों नहीं ताते जो आपनी रीति राखिकै जैसी है सकै तैसी कीजिये मैं बलिजाउँ हे श्रीरघुनाथजी तुलसी तिहारोही गुलाम है जो न दया होइ तौ वा आपने घरको लौटि जाउँ जहांको गुलाम हौं जो दया होइ तौ वही घर को जाउँ जहां सुग्रीव विभीषण गये

भाव दया करो तौ अबहीं पार करौ नहीं गुलाम आपुके द्वार परो है कबहूं तौ सुधि लेबै करिहौ यथा ॥ कौनहु जन्म अवध बस जोई । रामपरायण सोपारि होई ११६ ॥

नाम महाराज के निबाही नीकी कीजै उर सबही सोहात मैं न लोगनि सोहात हौं । कीजै राम बार यहि मोरी ओर चषकोर ताहि लगि रङ्क ज्यों सनेहको ललात हौं ॥ तुलसी विलोकि कलिकालकी करालता कृपाल को स्वभाव समुझत सकुचात हौं । लोक एक भांति को त्रिलोकनाथ लोक बस आपनो न शोच स्वामि शोचही सुखात हौं ११७ ॥

महाराज श्रीरघुनाथजी के नामकी निबाही जो कुछ कीजै सो नीकी बात कीजै कैसी जो सबही उर सोहात भाव मैं तौ भलाई करत हौं कि जामें सबके उर में नीक लागै परंतु लोगन को मैं नहीं सोहात हौं अर्थात् मेरी सब निंदै करते हैं हे श्रीरघुनाथजी यही बार मेरी ओर चष कहे नैन कोर सों सनेह सहित कीजै भाव दयादृष्टि हेरिये ताही लागि रंक ज्यों जैसे दरिद्री द्रव्य हेतु तैसे रंक सम मैं दयादृष्टि को ललचात हौं काहेते जो सुगम काम को कुसाइति में प्रारम्भ कीजै तौ विना विघ्न लागै न रहै तहां कुसाइतिन को शिरताज कलिकाल है जो ऐसा पाप में लिप्त राखत जाते शुभ काम सिद्ध होतही नहीं ऐसी करालता विलोकि तामें श्रीरघुनाथजी को कृपाल सुभाव समुझत गोसाईंजी कहत कि मैं सकुचात हौं कि कलियुग के प्रभाव ते लोक एक भांति कोहै पापमयो सो त्रि कहे तीनि के वश है अर्थात् काल कर्म

सुभाव के औ लोकनाथ जो श्रीरघुनाथजी हैं ते लोक के वश हैं ताते आपने बने बिगारे का शोच मोको नहीं है स्वामी के शोचही करिकै सूखत जातहौं कि कलियुग प्रेरित कुमार्गी लोक के वश हैं तौ कृपालुता क्यों करेंगे तौ कैसे जीवन को उद्धार होयगो यह शोच है ११७ ॥

तौलों लोभ लोलुप ललात लालची लबार बार बार लालच धरणि धन धामको । तबलौं वियोग रोग शोग भोग यातना के युग सम लागत जीवन याम याम को ॥ तौलों दुख दारिद दहत अति नित तन तुलसी है किंकर विमोह कोह कामको । सब दुख आपने निरापने सकल सुख जौलों जन भयो न बजाइ राजा रामको ११८ ॥

तौलों धरणि धन धाम के लालच ते लालची लबार कहे झूठा अनि लोभवशते लोलुप कहे लम्पट है बार २ ललात कहे ललचात फिरत पावत कुछु नहीं तबलों वियोग कहे प्रियजन को विछोह रोग कहे ज्वर बाई खांसी आदि शोग कहे राजद्रव्य पुत्रादि नाश होना तेहि के भोग यातना कहे पीड़ा में जीवन जन्म के याम याम कहे एकैक पहर युग सम लागत गोसाईंजी कहत कि जबलों तू काम क्रोध मोह को किंकर बनो है तौलों दुख दारिद्र तेरे तनको अत्यन्त दाहत हैं औ जगमें यावत् दुःख हैं ते सब आपने कहे अपना को प्राप्त हैं औ यावत् सुख हैं ते निरापने कहे बिराने हैं वे नहीं प्राप्त हैं इत्यादि सब दुःख तबलों हैं जबलों डंका बजायकै श्रीरघुनाथजी को दास न भयो ११८ ॥

तबलौं मलीन हीन दीन सुख सपने न जहां तहां दुखीजन भाजन कलेशको । तबलौं उबैन पाय फिरत पेटौ खलाय बाये मुख सहत पराभौ देश देशको ॥ तबलौं दयावनो दुसह दुख दारिद को साथरी को सोइबो ओढ़िबो भूने खेशको । जबलौं न भजै जीह जानकी जीवन राम राजन को राजा सोतौ साहब महेश को ॥ ११९ ॥

तबलौं मलीन कहे अपावन है हीन कहे नीच है दीन कहे दुखित है जागतकी को कहै सपने में सुख नहीं सपन भी दुखदाई देखत हैं काहेते ने जन क्लेश के भाजन हैं जहां जाइँ तहाईं दुखी रहैं तौलौं उबैने कहे निरादर पाये पेट खलाये मुँह बाये देश देशको पराभव कहे अपमान सहत फिरत हैं तबलौं दुसह कहे जो सहा न जाइ ऐसे दुःख दारिद्र को दयावनो कहे दयाको पात्र है रह्यो है भाव दुख दारिद्र दया करि वाही में वास किहे है ताते घास फूस की साथरी पै सोइबो औ झूने झांझरे खेशको ओढ़नो इत्यादि दुःख तब तक है जब तक जीह जानकी जीवन को नहीं भजतहै कैसे हैं श्रीरघुनाथजी जो राजनको राजा सो तौ महेशहू को साहब है तहां महेश देवन में हरिभक्तन में योगिन में अग्रगणीय हैं तिनको साहब कही सर्वोपरि श्रीरामरूप सूचित करे ११९ ॥

ईशनके ईश महाराजन के महाराज देवन के देव देव प्राणहूं के प्राणहौ । कालहूके काल महाभूतन के महाभूत कर्महूके कर्म निदानहुके निदान हौ ॥

ेगमको अगम सुगम तुलसीहूसे को येते मान शील-
धु करुणानिधान हौ । महिमा अपार काहू बोल
ो न वारापार बड़ी साहिबी में नाथ बड़े सावधान
ौ १२० ॥

ईश कहे ब्रह्मा विष्णु महेश तिनहूं के ईश कहे स्वामी हैं शता देनहारे हैं यथा ॥ हरिहि हरिता विधिहि विधिता शिवहि शिवता जोहि दई ॥ सो जानकीपति प्रमाण वशिष्ठसंहितायाम् ॥ यमतस्याद्यखेयावत्तारोद्भवकारण ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशादिसंसेव्यच-णाम्बुज ॥ स्कन्दपुराणे ॥ ब्रह्माविष्णुमहेशाद्या यस्यांशे लोकसा-धकाः । तमादिदेवं श्रीरामं विशुद्धं परमं भजे ॥ अरु महाराज कहे गरक्षक यावत् अवतार हैं तिनके महाराज कहे अवतार शिरो-मणि हैं यथा भरद्वाजसंहितायाम् ॥ अवतारा बहवः संति कला-शांशा विभूतयः । राम एव परं ब्रह्म सच्चिदानन्दमव्ययम् ॥ देव कहे चतुर्व्यूह नारायणादि रूपन के देव कहे पूजित हैं यथा सदाशिवसंहितायाम् ॥ महाशम्भुर्महामायां महाविष्णुश्च शक्रयः । कालेन समनुप्राप्ता राघवं परिचिन्तयेत् ॥ प्राण कहे पान अपान उदान समान व्यान तिनहूं के प्राण कहे प्रकाशक हौ काल कहे पल दण्ड दिन मास वर्ष युगादि तिनहूं के काल कहे करनहार हौ महाभूत कहे पृथिवी जल अग्नि पवन तिनके महाभूत कहे उपजावनहारहौ कर्म शुभाशुभ क्रिया फल दुख सुख ताहू के कर्म कहे भले को बुरा बुरे को भला करनहारे निदान कहे कारण यथा गुण सुभाव माया ईश्वर तिनके निदान प्रेरक हौ निगम कहे वेद तिनको अगम हौ ये तो बड़ो मान कहे महत्त्व पाइकै तेई श्रीरघुनाथजी तुलसी ऐसेन को सुलभ हैं तौ करुणा-

निधान शीलसमुद्र हौ काहेते आपुकी महिमा अपार है जो वेद पुराण संहितादि में देव मुनि कवीश्वर आदिन के काहू के बोल को शक्ति नहीं है जो वारापार पाइसकै इतनी बड़ी साहिबी पाइकै जो दीनन पर दयादृष्टि राखतहौ तौ हे नाथ बड़े सावधान हौ १२० ॥

आरतपाल कृपाल जो राम जेही सुमिरे तेहि को तहँ ठाढ़े । नामप्रताप महामहिमा अँकरे किये खोटेउ छोटेउ बाढ़े ॥ सेवक एकते एक अनेक भये तुलसी तिहुँ ताप न डाढ़े । प्रेम बढ़ो प्रहलादहि को जिन पाहनते परमेश्वर काढ़े ॥ १२१ ॥

आरत कहे दुःखी जननको पाल कहे उबारिबे में श्रीरघुनाथजी कृपालु हैं कृपा काको कही सब जीवनके रक्षक हमहीं हैं यह कृपा गुणके स्थान हैं काहेते गजादि आरत है जो जहांई सुमिरे ताको तहांई ठाढ़ मिले विलम्ब नहीं करे और श्रीरघुनाथजी के नाम की महा महिमा है कि जाके प्रतापते यमन अजामील जे खोटेऊ जन रहैं तिनहूं अँकरे कहे खरे है गये औ वाल्मीकादि जे छोटे जीव रहैं ते बाढ़े कहे महामुनि ब्रह्मतुल्य भये गोसाईजी कहत कि उत्तम मध्यम एकते एक सेवक होत गये अम्बरीषादि तिन सबन की प्रभु ऐसी रक्षा करे कि दैहिक दैविक भौतिकादि त्रितापनमें कोऊ नहीं डाढ़े कहे जरे सबको प्रभु बचाये तिन सबनसों बड़ो प्रेम प्रह्लादजी को है जिन पाहनके खम्भा सों परमेश्वर श्रीनृसिंहजी को प्रकट करिलिये याहीते भागवतनमें अग्रणीय हैं १२१ ॥

काढ़ि कृपान कृपा न कहूं पितु कालकराल विलोकि न भागे । राम कहां सब ठांउ है खंभमें हां सुनि

[हां]क नृकेहरि जागे ॥ वैरी विदारि भये विकराल [क]हे प्रहलादहिके अनुरागे । प्रीति प्रतीति बढ़ी तुलसी [त]बते सब पाहन पूजन लागे १२२ ॥

पुत्र पै पिताकी कृपा होत यथा लालन पालन हितोपदेश पुनः [ताड़न]रूप वचन दण्ड देतहू में कृपा रहत इत्यादि कृपा कहूं नहीं ताते [पि]ता हिरण्यकश्यप काल सम कराल जो मृत्युरूप है कृपाण जो [तर]वारि काढ़ि ठाढ़ भयो ताको देखि प्रह्लादजी नहीं भागे भाव [ता]ते मन मुरा नहीं जब हिरण्यकश्यप बोल्यौ कि तेरा राम कहां [तब] प्रह्लाद बोल्यौ मोमें तोमें खड्ग खंभ में सब ठांवहै हिरण्यकश्यप [ब]ोल्यौ क्या खंभा में है प्रह्लाद कह्यो हां ऐसी हांक सुनतेही नृके-[ह]रि कहे नृसिंहजी जागे कहे प्रकट है गर्जिकै वैरी भक्तद्रोही [हि]रण्यकश्यप को उदर विदारि कहे पेट फारि मारि डास्यो त्यहि [क्र]ोधते विशेष कराल भयो जो रूप देखि भयते कोऊ देवता स्तुति [न]करि सक्यौ तब सबके पठाये प्रह्लादजी जाइ कहे कि महाराज [श]ान्त होउ तब क्रोध तजि प्रह्लाद पै अनुराग करि शान्त भये यह [हा]ल देखि सुनि प्रतीति आई तब प्रीति भई तब ते लोग सब [प्र]कार के पाहन कहे पत्थर पूजन लगे सब प्रकारके पाहन कहबे [क]ो यह भाव कि पांच प्रकार ते पाषाण पूजबे को वेदकी आज्ञा [है] एक स्वयंव्यक्त यथा श्रीरंग व्यंकटाद्रि द्वितीय देवतन की प्रतिष्ठा [की]न्हें यथा जगन्नाथ रामेश्वर तृतीय सिद्धन की प्रतिष्ठा कीन्हे [य]था पढ़रीनाथ बालाजी चतुर्थ मनुष्यनके स्थापित कीन्हे जो गाँ-[व]न में घर में हरिमंदिर हैं पंचम स्वयं प्रतिष्ठित शालग्राम शिला [य]थार्थपञ्चके ॥ श्रीरङ्गं व्यङ्कटेशाद्या स्वयंव्यक्तास्समीरिताः । दिव्यं [दे]वप्रतिष्ठानात् सैद्धं सिद्धैस्तु पूजितम् ॥ मानुषैः स्थापितं तत्तु

ग्रामगृहभिदाद्विधाः ॥ अर्चावतारः सुलभः पद्माकरजलं यथा ॥ अर्चावतार इत्येवं कथितोऽत्र यथामति ॥ इत्यादि पंच प्रकार तौ वेदाज्ञा है जबते नृसिंहजी उत्पन्न भये तबते सब पाषाण को देव सम लोग मानते हैं पाँव स्पर्शादि को परहेज राखत १२२ ॥

अंतर्यामिहु ते बड़ बाहेर जामिहैं राम जे नाम लिहे ते। धावत धेनु पन्हाइ लवाइ ज्यों बालक बोलनि कान कियेते॥ आपनि बूझि कहै तुलसी कहिबेकी न बावरि बात बियेते। पैज परे प्रहलादहु को प्रकटे प्रभु पाहनते न हियेते १२३ ॥

अन्तर्यामीते बाहेर यामी रूप बडो है भाव निर्गुणरूप ते बड़ो है सगुणरूप श्रीरघुनाथजी कहे ते जे श्रीराम नाम लेतही आरत जनपै रक्षा हेतु प्रभु कैसे धावत यथा बालक कहे लघु दिनकी बछरूको बोलकाने में परत ही लवाई कहे थोरे दिन की ब्याई धेनु कहे गऊ पन्हाइ कहे थनमें दूध स्रवत हुँकारि धावत तैसे प्रभु भक्तन हेतु धावत यथा ॥ भरद्वाजस्तोत्रे ॥ राम रामेति रामेति वदन्तं विकलं भवान् । यमदूतैरनाक्रान्तं वत्सं गौरिव धावति ॥ गोसाईंजी कहत कि मैं अपनी बूझि कहे समुझ ते कहत हौं बिये कहे दूसरे ते कहिबे की बात नहीं है क्योंकि बावरी बात बावरे कीसी कही शब्द वर्ण रहित संज्ञा मात्रते समुझबे योग्यहै कौन बातसों कहत पैज कहे प्रतिज्ञा को अवसर परे पर प्रह्लादहु को जिन के वचन में प्रसिद्ध निर्गुणरूप को बोध होत यथा महिमा त्वहिमादि ते निर्गुण होत औ प्रतिष्ठित पाषाणादि ते सगुणरूप बोध होत तहां प्रह्लादहू के कहे ते प्रभु पाहनहीं ते प्रकट भये भाव सगुणही रूप सहायक भये न हियेते अर्थात् आपने भक्तहू को

हाय करिबे को हियेते न प्रकट सहाय करि सके याते निर्गुण ते गुणरूप बड़ो है ताको प्रयोजन यह कि अर्चा अवतार स्वाभा- क जीवन के कल्याण हेतु प्रकट भये हैं याते प्रतिमादि अर्चा म धर्म है १२३ ॥

बालक बोलि दिये बलि कालको कायर कोटि चाल चलाई। पापी है बाप बड़े परिताप ते आपनी ओरते खोरि न लाई॥ भूरि दई विषमूरि भई प्रह्लाद धाई सुधाकी मलाई। रामकृपा तुलसी जनको जग त भले को भलोई भलाई १२४ ॥

बालक प्रह्लादजी तिनको बोलाइ कै हिरण्यकशयप ने काल को लिदान दियो कौन भांति अग्नि में जराये जल में बोरयो पहाड़ डारि दिये हाथी सर्पादि अनेक कुचालैं कायर ने चलाई कायर दर कहबे को यह भाव कि इस प्रकार जीव मारना कादरही काम है ऐसा पापी बाप है जो बड़े परिताप कहे दुःख देवे ाद के आपनी ओरते खोरि नहीं लाई भाव उठाय नहीं राखी षमूरि हालाहलादि भूरि कहे बहुत पियाइ दई सोई प्रह्लादकी धाई ते सुधा की मलाई कहे अमृत को सारांश भयो भाव अमृत त ते काल पाइ नाश होत प्रह्लाद को नाश कबहूं न होइगो ही भांति औरनहूं को गोसाईंजी कहत कि जे भलीभांति रघुनाथ- में मन लगाये ऐसे जे भले जन हैं तिनको जगमें भली भांति मर्याद सहित भलाई होत जे बुराई करत तिनहीं को बुरा होइ त यथा अम्बरीष दुर्वासा को हाल प्रसिद्ध है १२४ ॥

कंस करी ब्रजवासिन पै करतूति कुभांति चली न

चलाई । पाण्डुके पूत सपूत कपूत सुयोधन भो कलि छोटो छलाई ॥ कान्ह कृपाल बड़े नतपाल गये खल खेचर खीस खलाई । ठीक प्रतीति कहै तुलसी जग होइ भले को भलोई भलाई १२५ ॥

कुभांति कहे कुरीति की करतूति कहे करणी भाव अनीति व्रजवासिन पै कंस ने करी परन्तु जो चलाई सो चली नहीं सब विघ्न श्रीकृष्णचन्द्र निवारण किये पीछे कंसहू को मारे तैसे पाण्डु के पूत कहे धर्मात्मा हरिभक्त युधिष्ठिर अर्जुनादि तिनपै कुभांति करतूति कहे मर्याद बिगारिबेवाली करणी कपूत सुयोधन ने करी जो छलाई कहे छलविद्या में छोटा दूसरा कलिकाल भयो ताहू की चलाई न चली काहेते नत कहे शरणागत के पालनहार कान्ह बड़े कृपाल हैं तिनकी कृपा ते खल खेचर कहे दुष्ट खेचर खलाई कहे आपनी दुष्टताईते खीस कहे नाश है गये इत्यादि समुझि ठीक प्रतीति कहे आपने मनको विश्वास तुलसी कहत हैं कि भले हरिदासन को जगमें भली भांतिते भलाई होतहै १२५ ॥

अवनीश अनेक भये अवनी जिनके डरते सुर शोच सुखाहीं । मानव दानव देव सतावन रावण घाटि रच्यो जगमाहीं ॥ ते मिलये धरि धूरि सुयोधन जे चलते बहु छत्रकि छाहीं । वेद पुराण कहैं जग जान गुमान गोविंदहि भावत नाहीं १२६ ॥

अवनीश कहे राजा अवनी कहे भूमिपै अनेकन हिरण्यकश्यपादि भये जिनके डरके शोचते देवता सूखत रहे तिनहूं को प्रभु मिटाय दये मानव कहे मनुष्य दानव दैत्य देवता आदिकन को सतावन-

रावण ने जगमें घाटि रची घाटि कहे देवतादि कन्यन को बस विवाह करि लियो यथा ॥ देव यक्ष गंधर्व नर किन्नर नाग-नारि । जीति बरीं निज बाहुबल बहु सुन्दर बरनारि ॥ ऐसेहु ण को प्रभु नाश किये औ दुर्योधन जो बहुते छत्रन की छाहीं चलत रहैं अर्थात् अनेकन छत्रधारी राजा सेवा हेतु संग रहत तिनहूँ को प्रभु धूरि मिलाय दिये इत्यादि तीनि युग को हाल पुराण कहत हैं वर्तमान में देखि जगमें सब जानत हैं कि मान अहंकार गोविंद को नहीं भावत ताते गुमान करनहार नहीं त शीघ्रही जात है १२६ ॥

जब नैनन प्रीति ठई ठग श्याम सों स्यानी सखी ठि हौं बरजी । नहिं जानो वियोग सुरोग है आगे की तब हौं तेहिसों तरजी ॥ अब देह भई पट नेह के ले सो ब्योंत करै विरहा दरजी । व्रजराज कुमार विना तु भृंग अनंग भयो जिय को गरजी १२७ ॥

गोसाईंजी अनन्य रामोपासक इहां व्रजनाथचरित्र कहिबे को प्रयोजन है कवि स्वभाव नेम रहित होत व प्रीति वंचकता स्वइष्ट में प्रीतिपालकता दृढ करे जा समय में उद्धवजी योग देश हेतु व्रज को आये ता समय एक भ्रमर राधिकाजी के समीप यो सो उद्धव को सुनाय भ्रमर सों कहती हैं कि जा समय रे नयनन ने ठग श्याम सों प्रीति ठई कहे ठानी ता य हमारी सयानी सखी ने हठ करके हमको बरज्यो कि ति न करो पीछे दुखदायी होइगी तब हम नहीं जानत रहीं कि ोग करिकै सोई प्रीति पीछे रोग होइगो तब न समुझते हम सखी सों तरजी कहे झिझकारिकै झुकी कहे सक्रोधित भई

सोई नेह के घाले कही प्रीति मिलाये ते देह पट सम भई ताको विरहरूप दरजी ब्योंत करत है देह को टूक टूक करत हैं हे भृङ्ग हमारे वचन सुन व्रजराजकुमार श्रीकृष्ण विना अनङ्ग जो कामदेव सोई हमारे जीव लेने को गरजी भयो अब प्राण लेन चाहत है १२७ ॥

योगकथा पठई व्रज को सब सो शठचेरी की चाल चलाकी । ऊधोजू कौन कहै कुबरी जो बरी नटनागर हेरि हलाकी ॥ जाहि लगै परि जानै सोई तुलसी सो सुहागिनि नंदललाकी । जानी है जानपनी हरि की अब बांधियैगी कछु मोटि कलाकी १२८ ॥

व्रजराज ने जो व्रज को योग की कथा कहाय पठाई है सो सब शठचेरी कूबरीकी चलाँकी की चालहै हे उद्धवजी कूबरीको कौन कहे कि तू शठहै काहेते शठहै जो नटनागर हलाकी को हेरिकै बरी भाव नट छली होत तिनमें नागर कहे चतुर तौ महाछली है औ हलाकी कहे हैलाक करनेवाले निर्दयी छली को हेरिके बरी ताते महाशठहै परि कहे परंतु जाके चोट लागत सोई जानत है सो कूबरी तौ नंदलाल की सुहागिनिहै सुहागिनि वियोगिन को दुःख का जानै अब हमहूं हरिकी जानपनी कहे ज्ञानमानी जानि लई कि कूबर पर राजी होतहैं तो कौनउकला की रचित कीन्ही काहू चीजकी मोटि कहे पोटरी पीठि पर बांधैगी भाव काहू युक्ति सों कूबर बनावैगी जामें हमहूं सों राजी होइँ १२८ ॥

पठयो है छपद छबीले कान्ह केहू कहूं खोजिकै खवास खासो कूबरीसि बालको । ज्ञानको गढ़ैया बिनु

**गिरा को पढ़ैया बार खाल को कढ़ैया सो बढ़ैया उर
ाल को ॥ प्रीति को बधिक रसरीति को अधिक नीति
नेपुण विवेक है निदेश देश काल को । तुलसी कहे
बनै सहेही बनैगी सब योग भयो योग को वियोग
ंदलाल को १२९ ॥**

भ्रमरके बहाने ऊधोजी को कहत यामें व्याजनिंदा है सखिन
ी उक्ति कहती है कि छबीले कान्ह ने केहू भांति कहूंते खोज
रिकै छपद पठायो है भाव चारि पांवको पशू कहावत भ्रमरके
छः पांव हैं ताते महापशु काहू की दर्द का जानै पुनः सखी
हत कि भ्रमर नहीं है यह कूबरी ऐस बाल को खासी खवास
भाव जैसे वह कुटिल कुरूप है तैसे यहौ निदर्दी कुरूप है याते
ानको गढ़नहारो है भाव निर्दयी झूंठही ज्ञानकी बातैं बनाय कै
ाते कहत हैं बिन गिरा को बिन विद्या को पढ़ैया मूर्ख कपठोरी
ात है पुनः बारखाल को कढ़ैया निर्दयी नाऊ बारन के साथ
ाल काढ़ि लेत है पुनः वचनरूप बरमाते उर में छिद्र करिबे
बढ़ई है प्रीतिरूप पक्षी पकरिबे को बधिक है काहे करिकै नीति
फंदन ते प्रीति स्वतंत्र नहीं रहत औ रसरीति नाश करिबे को
धिक ते अधिक कहे ब्याधा सम है जो तुरत ही जीव को मारि
ारत तहां रसरीति कहे शृंगार संयोग आलंबन उद्दीपन हाव
ावादि को नाश करत का करिकै विवेक में निपुण है विवेक ते
सरीति नाश होत है तब पाछे संतोष करि कहत कि जैसो देश
जैसो काल कहे समय है तैसे निदेश कहे उपदेश देनहारो ठीक
भाव हमारो समय ऐसेही कहन लायक है ताते भ्रमर जो
को उपदेश देत है तासों उत्तर की बात कहे नहीं बनत है याको

कहिबो सहि लेने सों बनत है काहे ते अष्टांगादि योग हम सों न हो अयोग्य रहै ताको योग कह संयोग भयो भाव यदुनाथ की आज्ञा है कि योग करौ औ जो हमारी योग्य रहै नंदलाल को सदा संयोग तिन नन्दलाल को वियोग भयो याते समय अनुकूल भ्रमर कहत है १२९ ॥

हनूमान ह्वै कृपाल लाड़िले लषणलाल भावते भरत कीजै सेवक सहायजू । बिनती करत दीन दूबरो दयावनो सो बिगरे ते आपही सुधारि लीजै भायजू ॥ मेरी साहिबिनी सदा शीश पर बिलसत देवि क्यों न दास को देखाइयत पायजू । खीझहू में रीझबे की बानि राम रीझत हैं रीझे ह्वै हैं रामकी दुहाई रघुरायजू १३० ॥

हे हनुमानजी हे लाड़िले अलबेले लषणलाल भरत भावते कहे हे शत्रुहनजी हे भरतजी सब जने कृपाल ह्वैकै सेवक की सहाय कीजै का कीजै दूबरो दीन जन तुलसी दयावनो कहे दया करिबे योग्य बिनती करत है तामें जो बिगारे भाव होइ तिनको आपही सुधारि लीजै मेरी साहिबिनी हे श्रीजानकीजी श्रीरघुनाथजी पतीव्रत नायक हैं ताते प्रीति भावते तुम श्रीरघुनाथजी के शीश पर बिलसत हो भाव जीवनधन हौ यथा अगस्त्यसंहिता में श्रीमुख वचन शिवजी से कहे ॥ आह्लादिनीं परां शक्तिं स्तुयाः सात्वतसंमताम् । तदाराध्यस्तदा रामस्तदाधीनस्तया विना ॥ तिष्ठामि न क्षणं शंभो जीवनं परमं मम ॥ हे देवि दास को क्यों नहीं पाँय देखाइयत हौ भाव जो आपु कृपा करि दरश देहौ तौ श्रीरघुनाथजी आपही प्रसन्न ह्वै दरश देइँगे कदाचित् कहौ कि श्रीरघुनाथजी न प्रसन्न ह्वै हैं ताको कहत कि उनको तौ रीझिबे को सुभाव

है ताते खीझतहू में श्रीरघुनाथजी रीझत हैं भाव जापै क्रोध ...रि मारतहू हैं ताको उत्तम गति देत ताते श्रीरघुनाथजी की ...हाई है आपु संदेह न करौ श्रीरघुरायजू रीझे ह्वै हैं अथवा जाको दास कहावत हौं सो मेरी साहिबिनी श्रीतुलसीजी जो प्रभु के ...शि पर सदा बिलसत हे देवि आपु दास को पांव क्यों नहीं ...खाइयत पुनः पूर्ववत् १३० ॥

वेष विराग को राग भरो मन माय कहौं सतिभाव ...तोसों । तेरेहि नाथ को नाम लै बेचिहौं पातकी ...मर प्राणनि पोसों ॥ ये ते बड़े अपराधी अघी कहतैं ...हुँ अंब की मेरो तुमोसों । स्वारथ को परमारथ को ...रिपूरण भो फिरि घाटि न होसों १३१ ॥

माता सों बालक निश्छल रहत याते गोसाईंजी कहत हे माय ...जानकीजी मैं तोसों सतिभाय ते कहत हौं कि वैराग को तौ ऊपर ...वेष मृगचर्म कमंडलादि धारण धातु पात्र वसन रहित त्यागी ...नो हौं औ मन में राग भरो है भाव धरणि धन धाम में प्रीति ...है हौं काहे ते तेरे ही नाथको अर्थात् श्रीजानकीनाथ को नाम ...बेचि कहे द्रव्य हेतु नाम लैकै पुजायकै हौं कहे मैं जो पातकी ...मर कहे मूढ़ सो प्राणन को पोसों कहे पालत हौं तहां पेट हेतु ...ामी को नाम लेनो यह बड़ो अपराध है ताको करनेवाला ...नो बड़ो अपराधी ताते अघी हौं अर्थात् श्रीरघुनाथजी को ...सूरमंद हौं ता भय ते तेरी शरण हौं ताते हे अंब अब मोसों तैं ...हु कि तैं मेरो है भाव मोको आपनो किंकर करि लीजै तो स्वार्थ ...रमार्थ कहे लोकहू परलोक को निबाह सब पूरण होइगो फिरि ...टि न होइगो भाव श्रीरघुनाथजी कछु कम न करि सकैंगे १३१ ॥

जहां वाल्मीकि भये ब्याध ते मुनीन्द्र साधु मरा मरा जपे शिष सुनि ऋषि सात की । सीय को निवास लवकुश को जनम थल तुलसी छुवत छाँह ताप गरै गात की ॥ विटप महीप सुरसरित समीप सोहै सीता वट पेखत पुनीत होत पातकी । वारिपुर दिगपुर बीच विलसति भूमि अंकित जो जानकी चरण जलजातकी १३२ ॥

वाल्मीकि आश्रम के चरित्र सूक्ष्म प्रतापमात्र कहते हैं जहां जेहि भूमि में सप्त ऋषिन को सिखावन सुनि यथा वाल्मीकि प्रचेता के पुत्र हैं ठगन की संगति ते जीव हिंसा की वृत्ति ह्वै गई काहू समय सप्तऋषिन को मारने पर आरूढ़ भये सप्तऋषि पूछे कि घरवालेन ते पूछौ कि हमारे पाप में शामिल हौ सो पूछे पर कोऊ न शामिलि भयो तब वाल्मीकि पूछे कि मेरा उद्धार बताओ सप्तऋषि बोले कि राम नाम जपौ वाल्मीकि कहे कि मोसों नहीं बनैगो तब कहे कि मरा मरा जपौ प्रयोजन यह कि रकार रामरूप परब्रह्म है मकार जीवरूप है मध्य की अकार दोऊ को सम्बन्ध करावनहारी है श्रीरामानुजमंत्रार्थे यथा ॥ रकारार्थो रामः सगुणपरमैश्वर्यजलधिर्मकारार्थो जीवः सकलविधिकैङ्कर्यनिपुणः ॥ तयोर्मध्याकारो युगलमथ सम्बन्धमनयोरनन्यार्हं ब्रूतेऽत्रनिगमसुसारोऽयमतुलः ॥ ताते प्रथम मकार उपदेश करि जीव स्वरूपा ज्ञान कराये पीछे ईश्वररूप रकार को ज्ञान कराये याते मरा मरा कहे उलटा नाम जपिकै व्याधा ते मुनीन्द्र वाल्मीकि मुनिन में श्रेष्ठ साधु हरिभक्त भये कौन भूमि में जहां श्रीजानकीजी को निवास

लवकुश को जन्मस्थल है गोसाईंजी कहत कि वृक्षन को ...जा सुरसरि ते जो गङ्गाजी ताके समीप कहे किनारे पर सोहत है सीतावट करि प्रसिद्ध है जाके पेखत कही दर्शमात्रते पातकी जन ...ीत होत औ जाकी छांह के छुवतही दैहिक दैविक भौतिकादि ...ैं गातकी गरत कहे मिटिजात हैं सो भूमि श्रीजानकीजी के ...णकमलन सों अङ्कित सो वारिपुर दिगपुर के बीच में विल...त है काशी प्रयाग के बीच गंगाजी के किनारे सीतामढ़ी करिकै ...सिद्ध है १३२ ॥

मरकत बरन परन फल मानिक से लसै जटा जूट ...तु रूख वेष हरु है । सुखमाको ढेरु कैधौं सुकृतसुमेरु ...धौं सम्पदा सकल मुदमंगल को घरु है ॥ देत अभि...त जो समेत प्रीति सेइये प्रतीति मानि तुलसी विचारि ...को थरु है । सुरसरि निकट सोहावनी अवनि सोहै ...रमणी को वट कलिकामतरु है १३३ ॥

अब वटवृक्ष की शोभा अरु माहात्म्य कहत मरकतमणिवत् ...ित वर्ण के चीकने चमकदार पर्ण कहे पत्र हैं औ माणिक जो ...लमणि तैसे सुन्दर फल हैं लसैं जटाजूट कहे बरोहैं विराज...त मानों रूख वृक्ष वेष धर हर कहे महादेव हैं किधौं सुखमा कहे ...भा को ढेर है तहां शोभा के नव अङ्ग हैं यथा ॥ द्युति लावण्य ...रूप सोइ सुन्दरता रमणीय । कान्ति मधुर मृदुता बहुरि सुकुमारता ...ीय ॥ तहां हरित नवीने दलन में चन्द्रसी ज्योति सो द्युति है ...ह की फुनगी में मोती कैसो पानी झलक सो लावण्यता है ...भाविक भूषित सों देखात सो स्वरूपता है सर्वांग सुठौर बनो

सो सुन्दरता है देखतहू अनदेखी सी शोभा सो रमणीकता है लाल नवदलन में सोने की सी ज्योति सो कान्ति है जाके देखत में तृप्ति न होइ सो माधुरी है अरुण दलन में मृदुता है बरोह फुनगी में सुकुमारता है इत्यादि शोभा के से ढेर हैं अब माहात्म्य कहत किधौं सुकृतरूप सोने को पर्वत है किधौं धरणि धन धाम भूषण वसन वाहनादि सब प्रकार की सम्पदा औ मुद कहे मानसी आनन्द मंगल कहे प्रसिद्ध उत्सवादि को घरु है पुनः यह वट वृक्ष काको थरु है तहां नित्य तौ शङ्कर को नैमित्य श्रीजानकीजी को ऐसा विचारि गोसाईंजी कहत कि जो प्रतीत मानि प्रीति समेत सेइये तौ अभिमत कहे वांछित फल देत हैं गङ्गाजी के निकट सोहावनी भूमि में रामरमणी श्रीजानकीजी को वटवृक्ष कलियुग में कल्पवृक्ष है १३३ ॥

देवधुनी पास मुनि वास श्रीनिवास जहां प्राकृतहू वट बूट बसत पुरारि हैं । योग जप याग को विराग को पुनीत पीठि रागिनपै सीठि दीठि बाहरी निहारि हैं ॥ आयसु आदेश बाबू भलो भलो भाव सिद्धि तुलसी विचार योगी कहत पुकारि हैं । रामभगतनको तौ काम तरुते अधिक सियवट सेये करतल फल चारि हैं १३४ ॥

एक तौ प्राकृतहू वट के बूट कहे वृक्ष में पुरारि जो महादेवजी ते स्वाभाविक बसते हैं दूसरे देवधुनी श्रीगङ्गाजी के पास तीसरे महामुनि श्रीवाल्मीकिजी को वासस्थान चौथे श्रीजानकीजी को निवास है ता भूमि वृक्ष की महिमा वेदहू को अगम है तहां पर योग जप यज्ञ वैराग्यादि सिद्ध करिबे को पुनीत पीठ

[illegible]है पवित्र भूमि है औ रागी कहे जिनके मनमें काम लोभ मोहादि [illegible]रूप बसे हैं तिनपै सीठि कहे कटु दृष्टि सो बहरी बाज सो [illegible]हारतहै भाव मोहादि नाशक है औ सुन्दरे भाव को सिद्धिदायक [illegible]ऐसा माहात्म्य योगी जन विचारिकै कहते हैं गोसाईंजी कहत [illegible]ज्ञा को आदेश कहे पूरण करनहारे बाबू भले भले तहां बसत [illegible]औ श्रीरघुनाथजी के भक्तन को तो कल्पवृक्ष ते अधिक है भाव [illegible]ल्पवृक्ष तीनि फल देत औ श्रीजानकीजी को वट की सेवा [illegible]न्हे चारिउ फल करतल में सुगम आवत अर्थ धर्म काम [illegible]हू वह कामार्थ धर्मही देत १३४ ॥

जहां वन पावनो सुहावने विहंग मृग देखि अति [illegible]गत अनन्द खेत खूंटसो । सीता राम लषण निवास [illegible]स मुनिन को सिद्ध साधु साधक सबै विवेक बूट [illegible]। ॥ झरना झरत झार शीतल पुनीत वारि मन्दा[illegible]किनि मंजुल महेश जटाजूटसो । तुलसी जो राम सों [illegible]नेह सांचो चाहिये तौ सेइये सनेहसों विचित्र [illegible]त्रकूटसो १३५ ॥

जहां जोहि चित्रकूट को वन पावन कहे पवित्र है काहे ते जहां [illegible]राम जानकी सदा विहार करते हैं तहां के पक्षी अरु मृगा [illegible]वने कहे शोभायमान हैं पुनः क्षेत्र कैसा है जो देखतमें आनन्द [illegible]को खूंट कहे सींव मेंड़सी लागत काहेते जहां श्रीसीताराम [illegible]षण को निवासहै अरु अत्रि आदि मुनिनको वास या प्रभाव [illegible]अणिमादिक प्राप्तवाले सिद्ध शान्तचित्तवाले साधु शम दमादि [illegible]धनावाले साधकादि यावत् चित्रकूट में रहत ते सबै विवेक के

ऐसे कूट कहे हरित वृक्ष ज्ञान कैसे है रहे यावत् झरना झरत झार कहे सबनमें शीतल स्वादिष्ट पवित्र वारि कहे जल बहत है अरु तहां मन्दाकिनी नदी जामें मञ्जुल कहे उज्ज्वल निर्मल जल बहत जो महेश के जटाजूट सों प्रकट है अर्थात् गङ्गाजी की धारा है गोसाईंजी कहत कि श्रीरघुनाथजी सों जो सांचो सनेह को चाहौ तौ मणिरचित विचित्र जो चित्रकूट है ताको सनेह सों सेइये १३५ ॥

मोह वन कलिमल पलपीन जानि जिय साधु गाइ विप्रनके भयको नेवारि है। दीन्ही है रजाय राम पाय सो सहाय लाल लषण समर्थ वीर हेरि हेरि मारि है॥ मन्दाकिनी मंजुल कमान असि बान जहां वारि धार धीर धरि सुकर सुधारि है। चित्रकूट अचल अहेरी बैठ्यो घात मानों पातक के व्रात घोर सावज संहारि है १३६॥

मोहरूपी वन में कलिमल कहे कलियुग के पाप बाघ से पल कहे मांस ते पीन नाम मोटे परे ते साधुरूपी गाइ ब्राह्मण के भयदायक जानि तिनके मारिबे को श्रीरघुनाथजी रजाय दये चित्रकूट को सो आज्ञा पाई अरु लषणलाल सहाय कहे साथी भये जे समर्थ वीरहैं हेरि हेरि मारैंगे तिनके बलते चित्रकूट ने मंजुल मन्दाकिनी ऐसी कमान औ जलकी धारा ऐसो बाण स्वकर आपने हाथन सों सँभारि धैर्यवान् है चित्रकूट अचल अहेरी कहे शिकारी मानों घातपर बैठो है व्रात कहे समूह पातकरूप घोर सावज व्याघ्र वाराहादिकन को संहारि है भाव रघुनाथजी की आज्ञाते

तको शीघ्रही नाश करतहै यह चित्रकूट को माहात्म्य कहे १३६॥

लागि दवारि पहार ढही लहकी कपि लङ्क यथा खोकी। चारु चुवा चहुँ ओर चली लपटैं झपटैं सो चर तोकी॥ क्यों कहिजात महा सुखमा उपमा कि ताकत हैं कवि कोकी। मानो लसी तुलसी हनु- त हिये जगजीति जराय की चौकी १३७॥

वसन्तऋतु में पलाशादि वृक्ष फूले सहित पहाड़ की शोभा ी है यथा दवारि कहे दावानल सी लागी पहाड़ ढही कहे भित भई अथवा कपि हनुमान्जी यथा लङ्का को खरखोकी फूंकि दये ते लहकी कहे टघिले सोना सों चारु कहे सुन्दर ा कहे झरना चारिहूं ओर ते चलत मानों सोई सोना बहि ो औ फूलन की ज्योति मानों अग्नि की लपटैं हैं अरु भ्रमर त वा फूलन में श्यामता है सो तोकी कहे छोटे छोटे तमीचर निशाचर मानों झपटि रहे हैं जरत में वा बुझाइबे हेतु इत्यादि ाको निरादर करत काहेते कि वनकी शोभा मंगलीक है तहां ानलकी उपमा अमंगल यह दूषण है वनकी सुखमा कहे ा महा अद्भुत है ता कहे ताको तकिकै उपमा क्यों कहिजात ा कविको है कत कहे कहां है जाके ऐसी बुद्धि है गोसाईंजी त कि जगजीतिकी जराय कहे मणिजटित चौकी श्रीरघुनाथजी दई हनुमान्जी के उरमें लसी कहे शोभित है भाव दिग्विजयको मा है इहां पर्वत हनुमान्जी हैं फूलो वन सोई चौकीहै १३७॥

देव कहैं अपनी अपना अवलोकन तीरथराज तोरे। देखि मिटैं अपराध अगाध निमज्जत साधु

समाज भलोरे ॥ सोह सितासितको मिलिबो तुलसी हुलसे हिय हेरि हलोरे । मानों हरे तृण चारु चरैं बगरे सुरधेनु के धौल कलोरे १३८ ॥

अब प्रयागजीको माहात्म्य कहत कि अपनी अपना आपुस में देवता कहते हैं कि तीर्थराज प्रयाग को अवलोकन कहे देखन चलौ काहेते जाके देखतहीं दर्शनमात्र ते अगाधनि जाकी थाह नहीं ऐसे अपराध मिटि जातहैं जहां भले भले साधुनकी समाज मज्जन कहे स्नान करत हैं सित कहे गौर गंगाजी असित कहे श्याम यमुनाजी दोऊ धारा मिलिकै शोभित ताके हलोरे देखि तुलसी को हिये ते हुलास आनन्द उठतहै काहेते मानों सुरधेनु के कलोरे नवीनी धेनु धौलरंगकी समूह बगरे कहे फैले हरित तृण चरत हैं तहां गंगाजी के हलोरा कामधेनु की कलोरी हैं सो ऊपरहै यमुनाजी की तरंगैं हरित तृण समतरे हैं भाव एक एक हलोरा कामधेनुहै १३८ ॥

देवनदी कहँ जो जन जान किये मनसा कुल कोटि उधारे । देखि चलैं झगरैं सुरनारि सुरेश बनाइ विमान सँवारे ॥ पूजाको साज विरञ्चि रचैं तुलसी जे महातम जाननहारे । ओककी नीव परी हरिलोक विलोकत रंग तरंग तिहारे १३९ ॥

अब गंगाजी को प्रताप माहात्म्य वर्णन है देवनदी कहे श्रीगङ्गाजी के स्नान हेतु जो जन जाने को मनोरथ किये ते अपने कुल के कोटिन जीवन को उद्धार करि दिये जब चले ताको देखि सुरनारी ताके बरिबे हेतु आपुस में झगरा करत अरु सुरेश जो इन्द्र

आपने लोक को लाइबे हेतु बनाइ कै विमान सँवारि साजि वे अरु चन्दन फूल धूपदीपादि पूजा करिबे हेतु सब साज चि कै ब्रह्मा धरि राखत काहे ते गोसाईंजी कहत कि गङ्गाजी को माहात्म्य जानते हैं कौन माहात्म्य कहत हे गङ्ग! तिहारे तरंगनके लोकत कहे देखतही हरिके लोकमें ओक कहे घरकी नेउ परत भाव हरिधाम में वास पावत यह जानि वा जीवके पूजा हेतु ब्रह्मा आगे ठाढ़े रहत १३९ ॥

ब्रह्म जो व्यापक वेद कहै गम नाहिं गिरा गुण ज्ञान गुनीको । जो करता भरता हरता सुर साहिब साहिब दीन दुनीको ॥ सोई भयो द्रवरूप सही जुहै नाथ विरञ्चि महेश मुनीको । मानि प्रतीति सदा तुलसी जल काहे न सेवत देवधुनीको १४० ॥

जो ब्रह्म सबमें व्यापक है जाको वेद ऐसा कहते हैं कि जे गुणी जन हैं तिनको ज्ञान करि देखिबेको गुणकरि जानबेको वाणी करि कहबेको गम्य काहूकी नहीं है जो करता उत्पत्ति करनहार भरता पालनहार हरता संहार करनहार है औ जो सुर कहे देवन को साहेब दीन दुनिया को साहेब सोई ब्रह्मद्रवरूप जलरूप सही कहे सांचो सोई है जो ब्रह्मा महादेव मुनीशनको नाथ सोई जलरूप भयो है ऐसी प्रतीति मानिकै हे तुलसी देवधुनी श्रीगङ्गाजी के जल को सदा काहे नहीं सेवत हैं १४० ॥

वारि तिहारो निहारि मुरारि भये परसे पद पाप लहौंगो । ईश ह्वै शीश धरौं पै डरौं प्रभुकी समता बड़ दोष कहौंगो ॥ बारहिबार शरीर धरौं रघुवीरको ह्वै तब

तीर रहौंगो । भागीरथी बिनवौं करजोरि बहोरि न खोरि लगै सो कहौंगो १४१ ॥

हे श्रीगङ्गाजी तिहारो वारि कहे जलको निहारिकै मुरारि कहे मुरआदि दैत्यन के मारिबे को समर्थ भये परन्तु पांयन में धारण कियेपै मैं पांयन में धारण करिबे में बड़ो पाप लहौंगो ताते पांयन में न धारण करौंगो अरु ईश कहे महादेव शीश में धारण करि समर्थ भये सो मैं शीश में भी न धारण करौंगो क्योंकि शिव प्रभु हैं तिनकी समता होवो यह बड़ो दोष है तामें दाह पावोंगो ताते बरुकु बारहुबार देह धारण करौं तामें श्रीरघुवीर को गुलाम ह्वैकै तव कहे तुम्हारे तीर सदा रहौंगो हे भागीरथी हाथ जोरिकै विनती करत हौं जामें पुनः खोरि कहे दोष न लागै सोई बात आपसों कहौंगो भाव आपके तट वास करि श्रीरघुनाथजी को भजौं यह कृपा करि दीजिये और नहीं चाह है १४१ ॥

लालची ललात बिललात द्वार द्वार दीन वदन मलीन मन मिटै न बिसूरना । ताकत सराधकै विवाहकै उछाह कछू डोलै लोल बूझत शबद ढोल तूरना ॥ पावहिं न प्यासे वारि भूखे न चनक चारि चाहत अहार तप हार दार धूरना । शोक को अगार दुख भार भरो तौलौं जन जौलौं देवी द्रवै न भवानी अन्नपूरना १४२ ॥

दरिद्र की प्रबलताते लालची है ललात कहे ललचात भूखते बिललात कहे व्याकुल द्वार द्वार मांगत फिरत दीनता ते वदन कहे मुख मलिन अरु मनकी बिसूरना कहे भोजन चाहना नहीं

मिटत है ताते जहां श्राद्ध विवाह वा कछू उत्साह होत तहां भोजन हेतु ताकत फिरत हैं लोल कहे चञ्चल है डोलत जहां ढोल तूरना कहे तुरही को शब्द सुनत तहां बूझत फिरत कि यहां कौन काम है प्यासे भये पर वारि कहे पानी नहीं पावत भूख लगे पर और को कहै चारि चना नहीं पावत ते जन अहार तौ पहार कहे बहुत चाहत परन्तु धूरि पर ढूंढ़े एक दालि भी नहीं पावत हैं शोक कहे शोच मानसी कलेश के अगार घरइ हैं जामें समूह शोक भरा है दुःख कहे दैहिक दैविक भौतिकादि को बोझा बड़ा भारी है सो जन तबलौं जबलौं देविन में भवानी अन्नपूर्णा द्रवत कहे कृपा नहीं करती हैं भाव कृपा भये पर दुःख दारिद्र नहीं रहत देवी संज्ञामात्र भवानी रुद्राणी अन्नपूर्णा लौकिकरूप काशीजीमें हैं १४२ ॥

भस्म अङ्ग मर्दन अनङ्ग सन्तत असङ्ग हर । शीश गङ्ग गिरिजा अधङ्ग भूषण भुजङ्ग वर ॥ मुण्डमाल विधु बाल भाल डमरू कपाल कर । विबुध वृन्द नव कुमुद चन्द सुख कन्द शूलधर ॥ त्रिपुरारि त्रिलोचन दिग्वसन विष भोजन भवभयहरण । कह तुलसिदास सेवत सुलभ शिव शिव शिव शङ्कर शरण १४३ ॥

अब शिवजी को प्रताप माहात्म्य कहत कि अंगमें चिता की भस्म लगाये पै अपावन नहीं होत औ शिर में गंगा ऐसी पावन धारण ते अधिक पावनता नहीं काम रहित कैसे जो अनङ्ग के मर्दन कहे जीतनहार हैं औ कामासक्त कैसे जो गिरिजा को सदा अर्धांगही में राखत सन्तत कहे सदैव असंग रहत संग काहू को

नहीं राखत पुनः संगति में कैसे राखत जे कुटिल स्वभाव के सर्प तिनके भूषण किये हैं पुनः हर कहे जगके संहारक हैं पुनः वर कहे श्रेष्ठ रक्षक हैं पुनः कराल वेष कैसो बनाये जो मुण्डमालधरे पुनः विशाल वेष कैसो जो बाल विधु भाल दुइजको चन्द्रमा माथे पै शोभित पुनः डमरू लिहे जामें पावन नाद वेद भरो है पुनः कपाल लीन्हें जामें अपावन वस्तु भरी पुनः देवरूप नव कोकाबेलिन को मोददायक चन्द्रमा है पुनः धनादि सुख वृक्ष उपजावन को कन्द कहे मूल हैं वा सुख जल वर्षन को मेघ हैं पुनः त्रिताप नाशिबे को त्रिशूल धारण किहे हैं त्रिपुर दैत्यके अरि हैं जिनके तीन लोचन हैं दिग्वसन कहे दिगम्बर हैं जामें सब जरे जात रहैं ऐसो विष ताको भोजन करिगये काहेते भव जो संसार ताके भय हरणहार हैं ऐसे समर्थ हैं तिनको गोसाईंजी कहत कि सेइबे को सुलभ हैं काहे ते शिव शिव शिव तीनहीं बार कहे प्रसन्न ह्वै सर्बस देत ऐसे शंकर की शरण हौं भाव काशीजी में पराहौं ताते कलियुग सों उबारि श्रीरामभक्ति दीजै १४३ ॥

गरल अशन दिग्वसन व्यसनभंजन जनरंजन। कुन्द इन्दु कर्पूर गौर सच्चिदानन्द घन ॥ विकट वेष उर शेष शीश सुरसरित सहज शुचि । शिव अकाम अभिराम धाम नित राम नाम रुचि ॥ कन्दर्प दर्प दुर्गम दमन उमारमन गुणभवन हर । त्रिपुरारि त्रिलोचन त्रिगुणपर त्रिपुरमथन जय त्रिदशवर १४४ ॥

गरल अशन कहे जहर है जिनके भोजन दिशा हैं वसन और वसन नहीं धारैं भाव तन पोषक नहीं हैं व्यसन कामासक्ती ताके

जन कहे नाशकर्त्ता अरु जन जो दास तिनके रंजन कहे आनन्द-ता कुन्द से कोमल इन्दु से सुखद शीतल कर्पूर सम सुगन्धित गौरांग हैं अरु सत चित आनन्द के घन कहे समूह हैं विकट हे भयङ्कर वेष चिता भस्म कपाल माल उरमें शेषनाग लपेटे शीशपै सुरसरित गंगाजी सो सहजही में शुचि कहे पवित्रहैं शिव हे कल्याणरूप अकाम कहे काहू वस्तु की कामना नहीं अभिराम कहे आनन्दके धाम हैं काहेते आनन्दमयी श्रीरामनाम में रुचिहै कन्दर्प काम के दर्प अभिमान जो दुर्गम रहै ताको दमन हे नाशकर्त्ता उमा के रमण हर कहे पाप दुःख के हर्त्ता दिव्य गुणन के धाम हैं त्रिपुर के अरि हैंकै त्रिपुर के मथन कहे नाशकर्ता हैं तीनि हैं लोचन ताते तीनि जो गुण रज सत तम ताको पार देखिकै पार भये त्रिदश जो देवता तिनमें वर कहे श्रेष्ठ ऐसे शिवकी जय होइ १४४ ॥

अर्ध अंग अंगना नाम योगीश योगपति । विषम अशन दिगवसन नाम विश्वेश विश्वगति ॥ कर कपाल शिरमाल व्याल विषभूति विभूषण । नाम शुद्ध अविरुद्ध अमर अनवद्य अदूषण ॥ विकराल भूत वैताल प्रिय भीम नाम भवभयदमन । सब विधि समर्थ महिमा अकथ तुलसिदास संशयशमन १४५ ॥

अर्द्ध अङ्गमें तौ अङ्गना पार्वती हैं औ नाम योगीश योगिन के पति हैं विषम भांग धतूरादि अशन कहे भोजन हैं दिग वसन दिगम्बर हैं औ नाम है विश्वेश्वर विश्व को जिनकी गति है समय पर सहाय करत हाथ में कपाल लिये गरे में शिरनकी माला अरु

विषकी श्यामता अंग में सर्प अरु विभूति यही भूषण हैं नाम उच्चारण में शुद्ध वा पवित्र अविरुद्ध वर्ण मैत्री वा शिव नाम लेने में विरोध नहीं वेद धर्मते अमर मृत्युरहित हैं अनवद्य कामादि दोषरहित हैं अदूषण अवगुण रहित विशेषि कराल भूत वैताल हैं प्रिय भव जो संसार ताके भयके दमन नाशक हैं जिनको भीम भयङ्कर नाम लोकहू परलोक सुखद सब प्रकार समर्थ है जिनकी महिमा अकथ है कोऊ कहि नहीं सकै शिव तुलसीदास के सब प्रकार की भय हरणहार हैं १४५ ॥

भूतनाथ भय हरण भीम भय भवन भूमि धर। भानुमन्त भगवंत भूमिभूषण भुजंगवर ॥ भव्य भाव वल्लभभवेश भव भार विभंजन। भूरि भोग भैरव कुयोग गंजन जन रंजन ॥ भारती वदन विषअदन शिव शशि पतंग पावक नयन। कह तुलसिदास किन भजसि मन भद्र सदन मर्दन मयन १४६ ॥

जो सौभाविक भयावन ऐसे भूतन के तौ नाथ हैं पै सज्जनन के भयहर्त्ता हैं औ दुष्टन हेतु भीम कहे भयङ्कर जो भयके भवनै हैं औ भूमि के धारणकर्त्ता हैं भानुमन्त कहे प्रताप गण हैं भगवन्त कहे षट् ऐश्वर्य युक्त हैं यथा महारामायणे ॥ ऐश्वर्येण च धर्मेण यशसा च श्रियैव च ॥ वैराग्यमोक्षषट्कोणैः संजातो भगवान्हरिः॥ विभूति अरु श्रेष्ठ भुजंग सोई भूषण हैं भव्य कहे मंगल की मूर्ति हैं भाव है वल्लभ कही प्रिया जिनको भवेश भव संसार ताके ईश हैं भव भार जो जन्म मरणादि के भंजनहार हैं भूरि कहे बड़ा है भोग जिनको जाके भय करिकै रव कहे रोदन कीन्हो है पार्वती

[y]ोग कहे राजद्वार विवाद शत्रु व्याघ्रादि संकट के गंजनहार हैं [ति]नके रंजन कहे सुखद हैं विषको अदन कहे भक्षण किहे ताहू [के] मुखमें भारती है भाव सिद्ध वचन है शिव कहे कल्याणरूप [श]शि वामनेत्र पतंग सूर्य दक्षिण नेत्र शीश में पावक नेत्र हैं [गोस]ाईंजी कहत हे मन कामनाशक कल्याणभवन शिव को क्यों [न]हीं भजत है १४६ ॥

नांगो फिरै कहै मांगनों देखि न खांगो कछू जनि [म]ागिये थोरे। रांकनि नाकप रीझिकरै तुलसी जग [जो] जुरे याचक जोरे ॥ नाक सवांरत आयो है नाकहि [ना]हि पिनाकिहि नेकु निहोरे। विरञ्चि कहै गिरिजा [सि]खवो पति रावरो दानिहै बावरे भोरे १४७ ॥

ब्रह्माजी की उक्ति पार्वती प्रति कि शिवजी आपु तौ नांगे [फि]रत हैं अरु मांगनेवालेन को देखि कहत कि हमारे कुछु खांग [नह]ी है थोड़ो जनि मांगियो भाव हमको नांगो देखि संदेह न [कर]ो गोसाईंजी कहत कि जग में याचक जहां तक जोरे जुरे तिन [रां]कनि कहे गरीबन पै रीझि नाकप कहे इन्द्र बनावत तिनके हेतु [नाक] कहे इन्द्रपुरी नई नई संवारत में हौं नाकहि आया भाव [ना]कथुनन में दम भयो अरु पिनाकी जो शिव तिनके नेकु नि[हो]रे नहीं भाव शिव को अतरको परवाहि नहीं यह विरंचि [कह]त कि हे गिरिजा तुम सिखावत क्यों नहीं रावरो पति बावरो [ह]ो दानिहै बावरो याते कहे कि नीकी बुरी बात नहीं विचारत [ज]ो भस्मासुर को वरदान दै दिये पीछे वही जीवको गाहक भयो [औ]र याते कहे कि बुरी को भली थोरी को बहुत समुझत यथा [न]िधि विप्र मूर्त्ति पर चढ़ि ऊपरते कछु पदार्थ उतारे ताको

आत्मसमर्पण मानि मुक्ति दिये अरु चारि चाउर पाती पर रीझत हैं यह थोड़े को बहुत मानना है १४७ ॥

विष पावक व्याल कराल गरे शरणागत तौ तिहुँ तापन डाढ़े । भूत वैताल सखा भव नाम दलै पलमें भवके भय गाढ़े ॥ तुलसीश दरिद्र शिरोमणि सों सुमिरे दुख दारिद होहिं न ठाढ़े । भौनमें भांग धतूरोई आंगन नांगे के आगेहैं मांगने बाढ़े १४८ ॥

आपु कैसे हैं जो नेत्रन में अग्नि धारे गरे में विष अरु कराल सर्प धारण कीन्हे भाव समग्र सौज जरावनहारो है परन्तु जो शरणागत आवत ताको ऐसे शीतल ह्वै रक्षा करत कि तीनिहुँ तापैं नहीं डाढ़े नहीं जराइ सकत हैं जे स्वाभाविक भयावनहैं ऐसे भूत वैताल ते तौ सखा हैं अरु जिनको नामहू भव है परन्तु गाढ़े कहे कठिन भवसागर के भय को हरत हैं तुलसीश जो शिवजी ते देखबे में तौ दरिद्रशिरोमणि से लागत भाव घरमें विभूति ही है और कछु नहीं है अरु जो कोऊ शिवजी को सुमिरत ताके पास दुःख दरिद्र ठाढ़ नहीं होत डरत है भौन में भांग भरी आंगन में धतूरके वृक्ष लगे अरु वसनहीन नांगे हैं तिनके आगे मांगने बाढ़े कहे जब देखिये तब मांगनेवालन की भीरैं भरी हैं १४८ ॥

शीश बसै वरदा वरदानि चढ़ेउ बरदा घरन्यो वरदा है । धाम धतूरो विभूतिको कूरो निवास तहां सबलै मरदा है ॥ व्याली कपाली है ख्याली चहूंदिशि भांग के टाटिनको परदा है । रंक शिरोमणि काकिणिभाक विलोकत लोकपको करदा है १४९ ॥

वरदानि जो शिवजी तिनके शीशपर जो बसी हैं गंगाजी तेऊ वरदाता हैं जापर चढ़े हैं नंदीश्वर तेऊ वरदाता हैं घरणी जो पार्वतीजी सोऊ वरदाता हैं धाम कहे घर में धतूर के वृक्ष लगे औ विभूति को ढेर लगो है विशेष निवास तहांई है जहां सब नाम मृतक लैकै मर्दित कीन्हे हैं अर्थात् चिता भूमि व्याली कपाली कहे सर्प मुण्डमाल ख्याली कहे स्वाभाविक धारण किहे हैं धाम में चारिहू दिशि भांगही की टाटिन को परदा है आपु तौ ऐसे हैं परंतु रंक कहे दरिद्री शिरोमणिन को काकिणी भाक कहे बलिष्ठ करते हैं कौन भांति जापै दयादृष्टि बिलोकते हैं ताको लोकपति करि देते हैं काकिणी यथा दीनदयाल औ रामलाल द्वौ में कौन ऋणी कौन धनी है यथा अ० क० च० ट० त० प० य० शादि अष्टवर्ग में दीनदयाल नामको प्रथमाक्षर तवर्ग में है सो पंचम वर्ग है पांच के दूने दश भये रामलाल यवर्ग में है सो सातवां वर्ग है सात वर्ग मिलाये दश सात सत्रह भये आठ को भाग दिये एक काकिणी बची पुनः रामलाल को सातवां वर्ग सात दुनी चौदा भये तामें दीनदयाल के पांच मिलाये चौदह पांच उन्नीस भये आठको भाग आठ दुनी सोरह तीनि काकिणी बचीं यह काकिणी बहुत है ताते रामलाल ऋणी है स्वार्थ देनेहार है क्योंकि दीनदयाल की एक काकिणी थोड़ी है ताते धनी है स्वार्थ पावनहार है थोड़ी काकिणी बली होत इत्यादि काकिणी जो निर्बलौ होइ तौ शिवजी की दयाते सबल होत काकिणीप्रमाण मुहूर्त्तचिन्तामणौ ॥ पञ्चद्व्यंकसुलेशदिग्गिमतमसौ ग्रामः शुभो नामभात् स्ववर्गं द्विगुणं विधाय परवर्गाढ्यं गजैः शेषितम् । काकिण्यस्त्वनयोश्च तद्विवरतो यस्याधिकाः सोर्थदोऽथ द्वारं द्विजवैश्यशूद्रनृपराशीनां हितं पूर्वतः १४९ ॥

दानि जो चारि पदारथ को त्रिपुरारि तिहूं पुर में शिरटीको । भोरो भलो भले भायको भूखो भलोई कियो सुमिरे तुलसीको ॥ ताबिन आश को दास भयो कबहूं न मिट्यो लघु लालच जीको । साधो कहा करि साधनते जोपै राधो नहीं पति पारबतीको १५० ॥

अर्थ धर्म काम मोक्षादि चारिउ पदार्थ के दानि जे ते तीनिहूं लोक में हैं तिनमें टीको कहे शिरोमणि हैं त्रिपुरारि औ भलो भोरो है भाव थोरे में प्रसन्न होत पुनः भले भावके भूखे हैं भाव जो अर्चाविधि न बनै औ भावते करै तहूँ प्रसन्न होत जो तुलसी हू ऐसो को सुमिरेते भलोई कियो है ता शिवजीको सुमिरे विना लोभ वश आश को दास भयो ताते लघु लालच कहे थोरेहू सुख के हेतु चाह नहीं मिटत तौ सब साधन करि कौन प्रयोजन साध्यौ जोपै पार्वती के पति को आराध्यो कहे सेयो नहीं तौ सब साधन वृथा हैं १५० ॥

जात जरे सब लोक विलोकि त्रिलोचन सो विष लोकि लियो है । पान कियो विष भूषण भो करुणा वरुणालय साईं हियो है ॥ मेरोई फोरिबे योग कपार किधौं कछु काहू लखाइ कियो है । काहे न कान करौ बिनती तुलसी कलिकाल बिहाल कियो है १५१ ॥

जो सिंधु मथे हलाहल निसरो ताके तेज ते सब लोक जरे जात रहैं ताको विलोकि कहे देखिकै दयावीरता करि सोई विषको त्रिलोचन आपही लोकि लियो भाव विष तेज फैलने न पायो

शीघ्रही पान करि गयो सोई विष की श्यामता कंठ में भूषित भई ऐसे समर्थ शंकर साईं को हियो करुणा रूप जल पूरित वरुणको आलय कहे समुद्र है परंतु मेरोई कपार फोरिबे योग्य है काहेते अभाग्य भरो है किधौं मेरी खोटाई काहूने आपुसों कछु लखाय दियो है जो तुलसी को कलिकालने कामादि लगाइ बिहाल कियो सो मेरी बिनतीको काहे नहीं कान करतहौ भाव करुणा करि मेरी सहाय क्यों नहीं करतहौ १५१ ॥

खायो कालकूट भयो अजर अमर तन भवन मशान गथ गांठरी गरदकी । डमरू कपाल करभूषण कराल व्याल बावर बड़ेकी रीझ वाहन बरदकी ॥ तुलसी विशाल गोरे गात विलसत भूति मानों हिमगिरि चारु चांदनी शरदकी । अर्थ धर्म काम मोक्ष बसत विलोकनिमें काशी करामाति योगी जागत मरदकी १५२ ॥

शिवजी ऐसे समर्थ हैं कि जो शीघ्रही मृत्युदायक कालकूट विष ताको खाय गये सो विपरीत फल दियो कि जरा मरण रहित तन भयो औ रीति रहस्य कैसी है जो मशान में भवन कहे घरहै त्रिभूति की गठरी सोई गथ कहे द्रव्य है डमरू को बाजा कपालही पात्र करमें धारना कराल व्याल कहे भयंकर सर्पही जिनके भूषण हैं ऐसे बड़े बावरे हैं जो सब वाहन त्यागि एक बरदही वाहनपर रीझे हैं गोसाईंजी कहत कि विशाल सुन्दर गौर अंग पर विभूति कैसी विलसत मानों हिमाचल गिरिपर शरद्ऋतु की चांदनी फैली है अरु दानी कैसे हैं जिनकी विलोकनि कहे दया-

दृष्टि में अर्थ धर्म काम मोक्ष चारिहू फल बसत हैं मरद कहे जिनको वचन सदा सांचा है ऐसे शिवयोगी की करामाति रूप काशी जागत कहे वेद पुराण में प्रकाशित है कि कोऊ जीव तन त्यागत ताको रामतारक मंत्र उपदेश ते मुक्त होत तौ अपर फल लौकिक है १५२ ॥

पिंगल जटाकलाप माथेपै पुनीत आप पावक नैना प्रताप भ्रूपर बरतहैं । लोयन विशाल लाल सोहै बालचंद्र भाल कंठ कालकूट व्याल भूषण धरत हैं ॥ देत न अघात रीझि खात पात आकहीके भोरानाथ योगी जब औढर ढरत हैं । सुन्दर दिगम्बर विभूति गात भांग खात रूरे शृंगी पूरे कालकंटक हरत हैं १५३ ॥

पिंगल कहे श्वेत किंचित् अरुण मिश्रित अर्थात् भूरा जटाकलाप कहे समूह माथपै पुनीत आप कहे जल गंगाजी विराजमान पावक अग्नि में नयन को प्रताप भ्रू कहे भौंहन पर माथमें बरत है लोयन कहे नेत्र दोऊ विशाल लालवर्ण के शोभित भाल पर बाल कहे द्वीजको चंद्रमा विराजमान कालकूट विषकी श्यामता कंठ में झलकत व्याल कहे सर्पनके भूषण अंगमें धारण किहे आप तौ आक कहे मदार के पत्ता खाते हैं परन्तु भोरानाथ योगी जब जापै रीझि कै औढर ढरत हैं तब देतमें अघात नहीं सुन्दर स्वरूप दिगम्बर अंगमें विभूति विराजमान सदा भांगही आहार रूरे कहे भलीभांति मृगशृंगको बजावत ऐसो अमंगल वेष परन्तु कृपाकरि पूरे कालकंटक कहे कुसमय के विघ्न अर्थात् क्रूर ग्रहदशा कुसाइति नष्ट कर्म की उदय अल्प मृत्यु आदि स्वाभाविक हरत हैं १५३ ॥

देत संपदा समेत श्रीनिकेत याचकनि भवन विभूत भांग वृषभ बहनु है । नाम वामदेव दाहिनो सदा असंग रंग अरधंग अंगना अनंगको महनु है ॥ तुलसी महेशको प्रभाव भावही सुगम अगम निगमहूको जानिबो गहनु है । वेष तौ भिखारीको भयंकररूप शंकर दयाल दीनबंधु दानि दारिद दहनु है १५४ ॥

यामें अद्भुत प्रताप है सम्पदा कहे द्रव्य भोजन वस्त्र राज स्त्री पुत्र पौत्रादि सर्वांग सुख सहित जन्म पर्यंत अंतकाल में श्रीनिकेत कहे वैकुण्ठ अर्थात् मुक्ति तौ याचकन को देतहैं अरु धन नाते भवन में भांग अरु विभूतिमात्र है वाहन जाके बरद है नाम तो वामदेव है अरु रहत सदा सबके दाहिने हैं मन तौ असंग रंग में रँगा उदासीन रहत अरु अर्द्धांग में अंगना जो पार्वती को लिहेहैं अरु अनंग जो कामदेव ताको महनु कहे नाशकर्त्ता हैं गोसाईंजी कहत हैं कि ऐसो महेश को प्रभाव अगम है जो निगम कहे वेदहू को जानिबे को गहनु कहे कठिन है सो एक प्रेमभावही करिकै सुगम है रूप तौ शंकरजी को भयंकर है जो कपालमाल सर्प चिताभस्म भूषित अरु स्वभाव दीनन पर सदा दयालु हैं अरु वेष तौ भिखारि कैसो है अरु दानि कैसे हैं जो दरिद्र को दहनु कहे नाशकर्ता हैं १५४ ॥

चाहै न अनंगअरि एकौ अंग मांगनेको देबोई पै जानिये स्वभाव सिद्ध बानिसों । वारि बुन्दचारि त्रिपुरारि पर डारिये तौ देत फल चारि लेत सेवा सांची मानिसों ॥ तुलसी भरोसो न भवेश भोरानाथ को तौ

कोटिक कलेश करो मरो छार छानिसों । दारिद दमन दुख दोष दाह दावानल दुनी न दयालु दूजो दानि शूलपाणिसों १५५ ॥

पूजाके अङ्ग यथा ॥ आसनं स्वागतं पाद्यमर्घमाचमनीयकम् । मधुपर्काचमनं स्नानं वस्त्रञ्च भरणानि च १ ॥ सुगन्धं सुमनो धूपं दीपं नैवेद्यवंदनम् ॥ इति षोडशोपचार में एकौ अंग मांगन सों नहीं चाहत अनंगअरि जो शिवजी तिनको सहजही में बानि कहे स्वभाव सिद्ध है कि देबोई जानिये भाव देबोई भावत है कौन भांति जो वारि कहे जलके चारिहू बुन्द त्रिपुरारि पर डारिये भाव कुभाव कैसहू ताकी सांची सेवा मानिकै चारिहू फल देत गोसाईंजी कहत हैं कि भव जो संसार ताके ईश जो भोरानाथ हैं जे थोड़ी सेवा में रीझि बहुत देत तिनको भरोसो न करे तौ कोटिन कलेश करि छार जो मारगकी धूरि ताको छानि कहे ढूंढि मरो पूरो प्रयोजन न होइगो जहां मेला लागत तहां पीछे को कंगाल मार्ग की धूरि छानि ढूंढत कछु गिरो परो द्रव्य पावत हैं तैसे अपर देव सेवा को फल है अरु दारिद को दमन कहे नाशनहार औ दुःख जो तीनिउ ताप दोष जो काम क्रोधादि वनरूप दाहिबे को दावानल सम शूलपाणि सम दयालु दानी दुनिया में दूजो नहीं है एक शंकर ही हैं १५५ ॥

काहेको अनेक देव सेवत जागै मशान खोवत अपान शठ होत हठि प्रेतरे । काहेको कोटी उपाय करत मरत धाय याचत नरेश देश देशके अचेतरे ॥ तुलसी प्रतीति बिनु त्यागे तौ प्रयाग तनु धनहीके हेतु

दान देत कुरुखेतरे । पात द्वै धतूरके दै भोरे कै भवेश सो सुरेशहीकी संपदा सुभाय सो न लेतरे १५६ ॥

अनेकन देवतन को काहेको सेवत है भाव प्रथम तौ विघ्न करत कदाचित् विधिपूर्वक पूजा बनी तौ किंचित् वस्तु देतहैं अरु भूतन की सिद्धी हेतु मशान जागत सो अपान कहे अपनो शुद्ध स्वरूप काहेको खोवत जो हठ करिकै आपही प्रेत होत है हे रे अचेत काहे को कोटिन उपाय करत धाय धाय मरत देश देशनके नरेशन को याचत फिरत है गोसाईं जी कहत हैं कि बिना प्रतीति जो प्रयागहू में तनु त्यागे तौ काह भयो यद्यपि तीर्थराज सर्व फलदायकहैं सो विश्वासवाले को है अरु धन पाइबे हेतु द्रव्य ही को दान कुरुक्षेत्र में काहेको देतहैं भाव द्रव्य दान हेतु काहे को ढूंढ़िये द्वै पात धतूरे के दैकै भव संसारके ईश भोरानाथ को भोरे कैकै अर्थात् बौरायकै तिनसों सुरेशकी संपदा इन्द्रपदवी सुभाय कहे सहजही सों काहे नाहीं लेतहै भाव जो थोड़ा परिश्रम किहे बड़ा काम होय तौ बड़ो परिश्रम न करै १५६ ॥

संघट गयंद वाजि राजि भले भले भट धन धाम निकर करनिहू न पूजै क्वय । वनिता विनीत पूत पावन सोहावन औ विनय विवेक विद्या सुभग शरीरय ॥ यहां ऐसो सुख परलोक शिवलोक ओक ताको फल तुलसी सो सुनो सावधान ह्वय । जाने बिनु जाने कै रिसाने केलि कबहुँक शिवहि चढ़ाये ह्वैहैं वेलके पतौवा द्वय १५७ ॥

गयंद जो हाथिनको संघट कहे भीर वाजी जो घोड़ा तिनकी राजी कहे पांति बँधी है औ भले भले भट कहे योद्धा औ धनसमूह धाम कहे सुन्दर घर इत्यादि निकर कहे समूह करणी को कोऊ नहीं पूजै काहे नहीं जानि पावत कि कहांते भई है पुनः वनिता जो स्त्री विनीत कहे प्रियवचनी पुत्र पवित्र सुधर्मी सुहावन कहे मनको सुखद है आपु विनय कहे नम्रतायुत विवेक सहित विद्या सुभग कहे निरुज शरीर इत्यादि सुख यहां कहे यहि लोक में देत औ परलोक में शिवलोक में ओक कहे स्थान वास पावत है ताको फल सावधान ह्वैकै तुलसी सों सुनो जानिकै वा विना जाने किधौं रिसाइकै वा खेलवार में इत्यादि काहू भांतिते कबहूँ शिवजी पै बेलके द्वै पतौवा चढ़ाये ह्वै हैं ताते यह ऐश्वर्य भयो है १५७ ॥

रतिसी रवनि सिंधु मेखला अवनिपति औनिप अनेक ठाढ़े हाथ जोरि हारिकै । संपदा समाज देखि लाज सुरराजहू के सुख सब विधि विधि दीन्हेहैं सँवारिकै ॥ यहां ऐसो सुख सुरलोक सुरनाथ पद ताको फल तुलसीसो कहैगो बिचारिकै । आक के पतौवा चारि फूलहू धतूरे के द्वै दीन्हे ह्वैहैं बारक पुरारि पर डारिकै १५८ ॥

रतिसम सुन्दरि रवनि कहे स्त्री सिंधु है मेखला कहे घेरे तावत् पृथ्वी को पति चक्रवर्ती जाके आगे अवनिप जो राजा अनेक हारिकै हाथ जोरे ठाढे हैं जाकी संपदा समाजको विभव देखिकै सुरराज जो इन्द्र तिनहूंके लाज होत है काहेते सब विधि को सुख विधिने सँवारिकै दीन्हों है ऐसो सुख तौ इहां इहिलोक

में है अंतसमय सुरलोक में सुरनाथ इन्द्रपदवी को पावत ताको फल तुलसी विचारिकै कहैगो सो सुनौ आक मदारके चारि पतौवा वा चारि फूल वा दुइ फूल धतूर के कबहूं एकबार त्रिपुरारि पर डारि दीन्हे ह्वैहै ताते यह ऐश्वर्य है १५८ ॥

देवसरि सेवौं वामदेव गाउँ रावरेही नाम रामही के मांगि उदर भरत हौं । दीबे योग तुलसी न लेत काहूको कछुक लिखी न भलाई भाल पोच न करत हौं ॥ येते परहू कोऊ जो रावरे ह्वै जोर करै ताको जोर देव दीन द्वारे गुदरत हौं । पाइकै उराहनो उराहनो न दीजे मोहिं कालिकाला काशीनाथ कहे निबरत हौं १५९ ॥

एक समय शिवउपासक पण्डित गोसाईंजी की महिमा देखि सहि न सके तब अनेक उपद्रव करे जब एकौ न चलो तब हारिकै गोसाईंजी सों बिनती करि कह्यो कि हमको मांगन देहु यह कि तुम काशीजी से चले जाउ तब यह कबित्त बनाय शिवमन्दिर में लगाय चित्रकूट को चलेगये जब वे लोग शिवमन्दिर को गये तब पट बंद देखे भीतर ते वाणी भई कि तुमने भागवतापराध कियो है सब मरिजाहुगे तब सब दौरि गोसाईंजी को लाये सो कहत कि हे वामदेवजी रावरे कहे आपके गाउँ काशी को औ देवसरि श्रीगंगाजी को सेवन करतहौं अरु श्रीरामनाम लैकै मांगि कै पेट भरतहौं भाव और की आशा नहीं है जो तुलसी देबे योग्य नहीं है तौ मैं काहूको कछु लेतहू तौ नहीं हौं जो मेरे भाल कहे माथमें भलाई करनो नहीं लिखो है तौ काहू की पोच कहे बुराई भी नहीं करत हौं येतेहू पर वे प्रयो-

जन जो कोऊ रावरेको है कै अर्थात् आपुको सेवक आदि कोऊ मेरे ऊपर जोर करै ताको हाल दीनजन जो मैं हौं सो हे देव शंकरजी आपुके द्वार पर गुदरत कहे आपु सों जाहिर करतहौं काहेते मैं आपुको जनावत कि मैं श्रीरघुनाथजी को किंकर हौं मेरा हाल जानिकै कदाचित् श्रीरघुनाथजी आपु सों कहैं कि हमारे सेवक को संकट तुम्हारे सेवकन ते भयो तुम क्यों न सहाय भये ऐसा उराहनो श्रीरघुनाथजी सों पाइकै फिरि आपु मोको उराहनो न दीजो कि तूने हमसों काहे नहीं कहा ताते हे काशी-नाथ कालिकाला कहे कधी काल यह बात परे ताहेतु हौं कहे मैं कहे निबरत हौं अर्थात् कहिकै छुट्टी लेत हौं भात्र अपने स्वामी सों अर्ज करौंगो तौ आपुपै बदनामी आवैगी १५९ ॥

चेरो रामरायको सुयश सुनि तेरो हर पाइतर आइ रह्यों सुरसरि तीर हौं। वामदेव रामको सुभाव शील जानियत नातो नेह जानियत रघुवीर भीरहौं॥ अधि-भूत वेदन विषम होत भूतनाथ तुलसी विकल पाहि पचत कुपीर हौं। मारिये तौ अनायास काशीवास खास फल ज्याइये तौ कृपा करि निरुज शरीरहौं १६०॥

हे हर मैं श्रीरामराय को चेरो गुलाम हौं सो काशीजी में मुक्तिदायक हौ ऐसा सुयश वेद पुराण में सुनि आपके पांयन तर शरणागत सुरसरि जो गंगाजी के तीर काशीजी में आइकै रह्यों आपुके भरोसेते हे वामदेव श्रीरघुनाथजी को स्वभाव अरु शील आपु जानतहौ कि भक्तन के सदा सहायक हैं ऐसे स्वामीको मैं सेवक हौं यह नातो ताको नेह सोऊ आपु जानतहौ कि प्रभु भक्त-

वत्सल हैं ताते मेरे बने बिगरे की भीर कहे फिकिरि श्रीरघुनाथजी ही को है ऐसा जानिकै हे भूतनाथ भूत कहे अधिभूताप्राणिनते अर्थात् भैरवादिकन करिकै वा पञ्चभूतन करिकै वेदन कहे दुःख विषम कहे कठिन होत तेहि कुपीर करिकै पचत कहे अमित विकल है तुलसी जो मैं सो पाहि कहे आपुकी शरण हौं काहे ते आपु भूतन के नाथहौ तहां भूतन करिकै जो बाधा होइ सो आपुको रक्षा करिबे को चाही ताते यह आपुते मांगतहौं कि जो मारिये तौ खास काशीवास में मृतक को जो फल जो श्रीराम धाम की प्राप्ती सो अनायास पावौं अरु जो जियाइये तौ कृपाकरि ऐसा कीजै जामें निरुज शरीर कहे रोगरहित देह रहै एक समय काशी के कोतवाल भैरवजी देख्यो कि हमारी पुरी में यह आपना हुकुम चलावत है ताही ईर्षाते कोपकरि बाहुपीर पैदा किये तब गोसाईं-जी हनुमान्जी को स्मरण करे तुरंत हनुमान्जी भैरव को डाटि दिये पीड़ा मिटि गई ताही समय ये कवित्तन ते शिवजी सों प्रार्थना करत १६० ॥

जीबेकी न लालसा दयालु महादेव मोहिं मालुम है तोहिं मरिबेई को रहतु हौं। कामरिपु राम के गु-णगानि को कामतरु अवलम्ब जगदम्ब सहित चहतु हौं॥ रोग भयो भूत सो कुसूत भयो तुलसीको भूत-नाथ पाहि पदपङ्कज गहतु हौं। ज्याइये तौ जानकी जीवन जन जानि जिय मारिये तौ मांगी मीचु सूधिये कहत हौं १६१ ॥

हे दयाल महादेवजी मोहिं जीबे की लालसा नहीं है यह बात

तुमको मालूम है कि तुलसी मरिबे ही को काशीजी में रहत है काहे ते काशीजी में मरे स्वाभाविक मुक्ति पावोंगो दूसरे कलिप्रेरित विघ्न-कर्त्ता काम ताके आपु रिपुहैं तौ इहां काम क्यों विघ्न करैगो पुनः जे श्रीरामके गुलाम हैं तिनको आपु कल्पवृक्ष हौ भाव सब फल-दायक हौ याते जगदम्ब जो श्रीपार्वतीजी सहित आपुको अव-लम्ब कहे भरोसा चाहतहौं ताहूपर भैरवादि कोप किये तेहि प्रेरित भूतबाधाते मेरे रोग भये तौ आपुकी पुरी को वास तुलसी को कुसूत कहे अरुझ्यो सूत भयो जाको गाहक कोऊ नहीं भाव आ-पने स्वामी की पुरी छांड़ि आपुकी पुरी में बसे आपुही के सेवक दुःख देते हैं तौ अब आपने स्वामी सों कौन मुँहलाइ दादि करौं ताते जिनते मोको बाधा है तिन भूतन के आपु नाथहौ याते पाहि कहे शरण है आपुही के पदपङ्कज गहतहौं कि जो जियाइये तौ श्रीजानकीजीवन को जन जानिकै मोको जियाइये भाव निर्विघ्न राखिये अरु जो मारिये तौ मीचु जो मौत सो मुँह मांगी पावौं यह बात मैं सुधिये कहे सहजही कहत हौं यामें कछु दुर्घट नहीं १६१॥

भूत भव भवति पिशाच दूत प्रेत प्रिय आपनो स-माज शिव आपु नीके जानिये । नाना वेष वाहन विभूषण वसन वास खान पान बलि पूजा विधिको बखानिये ॥ रामके गुलामनि की रीति प्रीति सूधी सब सबसों सनेह सबही को सनमानिये । तुलसीकी सुधरै सुधारे भूतनाथहीके मेरे माय बाप गुरु शङ्कर भवानिये १६२ ॥

हे भव महादेवजी हे भवति पार्वतीजी आप दोऊजने को भूत

पिशाच प्रेतही दूत प्रिय हैं तेहि आपनी समाज को हाल हे शिवजी आप नीकी भांति जानत हौ कि नाना कहे अनेक वेश यथा कपाली दिगम्बर जङ्गमादि जिनके अनेक वाहन खर शूकर श्वान शृगालादि अनेक भूषण मुण्डमाल सर्प विभूति अनेक भांति वसन कषाय आर्द्र बाघम्बरादि वास चिताभूमि खान कहे भो-जन भांग धतूर मांसादि पान सुरा रुधिरादि जीव बलिदानादि पूजा की विधि को बखान करै इत्यादि सब समाज को हाल प्रसिद्ध है शिवसंहिता में शिवजी आपही कहे शिवा प्रति यथा शिव उवाच ॥ मद्भक्ता अपि वामोरु तम उद्रिक्तचेतसः ॥ अधोऽधोगति-मायान्ति निंद्याज्ञानमयी मुने ॥ कामक्रोधभयोद्वेगं हिंसामिथ्यादि कर्मणः ॥ मदिरामांससर्वाशो रामवैमुख्यकारणम् ॥ तामसी त्वंतु शक्तिर्मे सर्वदा मदिराशना ॥ मांसमैथुनहिंसादिविहारा जनमोहिनी ॥ तथैव तव भक्ताश्च मांसमैथुनमद्यपाः ॥ मिथ्यामोहवशा मूढा मा-निनः पशुहिंसकाः ॥ शौचाचारविहीनाश्च भूतप्रेतपिशाचकाः ॥ वेताला राक्षसा यक्षाः क्रूराः सिन्दूरचिह्निताः ॥ शूद्राश्चाण्डाल-गौडाश्च भेदभिल्लाश्च पुष्कशाः ॥ कुविन्दाश्चर्मकाराश्च ये चान्ये हीनजातयः ॥ तेषान्त्वं परमादेवी तामसीनां तमः प्रिया ॥ स्वभाव एष ते गौरि दुर्निवार्य्यो मयापि च ॥ इत्यादि स्वभाववाले शिव पार्वती के प्रिय सेवक हैं अरु राम के जे गुलाम हैं अर्थात् राम-भक्त तिनकी रीति प्रीति सब सूधी है यथा ॥ कोमलचित दीनन पर दाया । मन क्रम वच मम भक्त अमाया ॥ प्रमाणं महारामायणे शिववाक्यम् ॥ शांताः समानमनसश्च सुशीलयुक्तास्तोषक्षमागुण-दयार्जुबुद्धियुक्ताः । विज्ञानज्ञानविरतिः परमार्थवेत्ता निर्धामकोऽभ-यमनः सच रामभक्तः ॥ ऐसी रीति हरिभक्तन की सीधी ताते सब सों सनेह राखत अरु सबको सन्मान करत भाव यह कि हमारी

रीति रहस्य सूधी अरु हे शिवजी आपके सेवकन की रीति रहस्य देखी तौ स्वाभाविक वैर भयो तौ मेरो निर्वाह कैसे होयगो याते आपसों अर्ज करत हौं कि आप भूतन के नाथ हौ ताते आपही के निबाहे तुलसीकी सुधरैगी काहेते मेरे बाप अरु गुरु आपही शङ्कर-जी हौ अरु माता पार्वतीजी हैं ताते आप भूतन को हटकि देहौ तौ मेरे ऊपर विघ्न न करैंगे तौ मेरी निबहि है १६२ ॥

गौरीनाथ भोरानाथ भवत भवानीनाथ विश्वनाथ-पुर फिरि आन कलिकालकी । शङ्कर से नर गिरिजा सी नारि काशीवासी वेद कही सही शशिशेखर कृपालकी ॥ छमुख गणेशते महेशते पियारे लोग विकल विलोकियत नगरी बिहालकी । पुरी सुरबेलि केलि काटत किरात कलि निठुर निहारिये उघारि डीठि भालकी १६३ ॥

गौरीनाथ कहे सर्वोपरि गुरु हौ भोरानाथ कहे अति दानीहौ भवानीनाथ कहे अरिमर्दनहौ भवत कहे भवके अन्तकर्त्ता ऐसे विश्वनाथ जग के रक्षक तिनकी खास पुरी काशीजी में कलिकाल की दुहाई फिरी भाव प्रचण्ड अदल भयो कैसी काशीपुरी है जहांके वासी नर शङ्कर से कहे पुरुष सब शंकररूप हैं औ नारी गिरिजा सी कहे पार्वतीरूप हैं ऐसी वाणी वेद कहत तापर शशिशेखर कृपाल जो महादेव तिनकी सही कहे मोहरी दस्तखत हैं ता काशी के वासी महेश को षट्मुख गणेश ते अधिक पियारे हैं ते लोगन को विकल विलोकियत है काहेते नगरी काशी को कलि-काल ने अधर्म प्रबलकरि पुरवासिन को बिहाल करि दीन्ही कौन

भांति सब फलदायक कल्पलतारूप काशीपुरी को किरातरूप कलिकाल निर्दयी काटत है भाव धर्म कर्म नाश किहे देत है तापै क्रोध करि भाल की आंखि उघारि अग्निमय दृष्टि सों निहारिये जामें भस्म ह्वैजाय १६३ ॥

ठाकुर महेश ठाकुराइनि उमासी जहां लोक वेदहू विदित महिमा ठहरकी । भट रुद्रगण पूत गणपति सेनापति कलिकाल की कुचाल काहूतौ न हरकी ॥ बसी विश्वनाथ की विषाद बड़ो वाराणसी बूझिये न ऐसी गति शङ्कर शहरकी । कैसे कहै तुलसी वृषासुर के वरदानि बानि जानि सुधा तजि पियनि जहरकी १६४

महेश ऐसे जहां के ठाकुर उमा पार्वती ऐसी जहां की ठकुरा-इनि जेहि ठहर कहे ठांवकी महिमा लोक वेदहू में विदित है कि काशीजी में कोऊ जीव मरत ताकी मुक्ति होत औ प्रलयकारक वीरभद्र ऐसे भट जहां रुद्र के गण हैं सेनापति षड़ानन अरु गणेश ऐसे ऐसे सो काशी में कलिकाल ने कुचाल चलाई ताको काहू तौ न हरकी कहे मने न करी ताते विश्वनाथहू की वाराणसी में बड़ो विषाद आनि बसो यह अनुचित है कि शङ्कर ऐसे समर्थ के शहर की ऐसी गति न बूझिये न चाहिये तामें मान मूर्खता करत कि ऐसी हाल क्यों न होइ परन्तु बड़े की बात कहना अनुचित है ताको तुलसी कैसे कहै कि सुधा तजि जहर पीवे की बानि कहे स्वभावही शङ्कर को जानि परत है कि वृषासुर जो भस्मासुर ताके बरदानी हैं भाव बिना विचारे वरदान दै पीछे आपही को भागने को परो तौ कलिकाल को सन्मान करि पुरी को बिहाल कराइबो

कछु आश्चर्य की बात नहीं है यह कहिबो मानमर्षता है १६४ ॥

लोक वेदहू विदित वाराणसीकी बड़ाई वासी नर नारि ईश अम्बिका स्वरूप हैं। कालनाथ कोतवाल दण्डकारि दण्डपाणि सभासद गणप से अमित अनूप हैं॥ तहांऊँ कुचाल कलिकाल की कुरीति कैधौं जानत न मूढ़ इहां भूतनाथ भूप हैं। फलै फूलै फैलै खल सीदैं साधु पल पल बाती दीपमालिका ठठाइयत सूप हैं १६५ ॥

वाराणसी काशीजी की बड़ाई लोक वेदहू में विदित सब जानत हैं कि जो स्वाभाविक जीवन को मुक्ति देनहारी है अरु जहां के वासी नर ते ईश कहे शिवरूप हैं और नारी ते अम्बिका कहे पार्वतीरूप हैं औ कालनाथ जो भैरव से जहां के कोतवाल हैं ते अनीति करनेवालेन को दण्ड करिबे हेतु पाणि जो हाथ तामें दण्ड लीन्हे हैं अरु सद्सभा कहे न्याय करनेवाले गणपति सरीखे अनेकन अनूप हैं जिनकी समता को दूसरो नहीं है तहांऊं काशी जी में कलिकाल की चलाई कुचाल कहे जुवा चोरी ठगी परनारी-वेश्यादि रत असत् वार्ता हिंसा में प्रीति इत्यादि स्वाभाविक सब करत हैं औ कुरीति कहे वेद लोक मर्याद त्यागे यथा देवता साधु गुरु तीर्थ सत्कर्म निरादर माता पिता त्यागादि कलियुग निश्शंक करि रही है कैधौं मूढ़ यह जानते नहीं हैं कि यहां के भूप भूत-नाथ महादेव हैं तिनको प्रभाव नहीं जानत काहे ते ऐसी अनीति चलाये हैं कि खल जे हैं कुमार्गी ते फैलत कहे बढ़त फूलत फलत कहे जो मनोरथ करत सो सफल होत अरु साधु जे हैं

[कु]मार्गी ते पल पल प्रति सीदत कहे दुःखित होत सो यहै मसला [ठ]हरो कि दीपमालिका की राति को घृत तैल तौ खाइ दिया बाती ठठाजाइ सूप कुमार्गता करै खल दुख पावै साधु १६५ ॥

पञ्चकोश पुण्यकोश स्वारथ परारथ को जानि आप आपने सुपास वास दियो है। नीच नर नारि न सँ-भारि सके आदर लहत फल कादर विचारि जो न कियो है॥ बारी वाराणसी बिनु कहे चक्र चक्रपाणि मानि हितहानि सो मुरारि मन भियो है। रोष में भरोसो एक आशुतोष कहि जात विकल विलोकि लोक कालकूट पियो है १६६ ॥

काशीपुरी में कलिकाल कुचाल चलाई शिवजी क्यों न हटके यह सन्देह पूर्व कवित्त में किये रहे ताको समाधान करत कि हे शिवजी आपको खोरि नहीं है यह लोगन के कर्मन के फल हैं काहेते असी वरुणा पर्यन्त सुरसरि तट पंचकोशांतर काशीक्षेत्र पुण्य को कोश कहे खजाना है ताते स्वारथ जो लोक सुख परारथ परमारथ जो परलोक सुख सो इहां स्वाभाविक सिद्ध होइगो ऐसा सुपास आप जानि लोगन को इहां वास दिये आपने ऐसा आप को आदर ताको इहांके नर नारि नीच सँभारि न सके कि शङ्कर ऐसे दयालु हैं कि हम ऐसे तुच्छ जीवन को इहां वास दिये जाते सब बात हमको प्राप्त भई यह विचार तजि जाति विद्या महत्त्व में अपनपौ मानि शुद्ध धर्म में कादर विना विचार अभिमान करे ताको फल लहत कहे पावत हैं तहां कर्मफल पाइबो सही माना तहां सबलको अरु मित्र को काम बिगारिबे में भय तो चाहिये काहेते सबल के दण्ड

को शोच होत मित्र के गिल्ला को संकोच होत ताको दृष्टांत देखा-
वत कि देखो जा समय काशिराज मिथ्या वासुदेव बनि द्वारका
को चढ़िगयो ताके मारिबे हेतु श्रीकृष्ण सुदर्शन को आज्ञा दीन्हे
सो सब सेना भस्म करि पीछे काशीपुरी को भी भस्म करिदियो
सो कहत कि चक्रपाणि जो भगवान् तिनकी आज्ञा बिना चक्रने
वाराणसी को बारी कहे जराइदई तामें कछु भगवान् को खोरि नहीं
रहै ताहूपै भगवान् बिचारे कि हमारे हितकार शङ्कर की हानि भई
यह बिचारिकै इतने बड़े मुरारि तेऊ हित संकोच ते डरे तहां
कलिकाल भूतरूप सो भूतनाथ की पुरी में विघ्न करत क्यों नहीं
डरत है ताते सजाय देबे योग्य है अरु हे शिवजी जो पुरवासिन
के पापन करि आपु क्रोधित हैं तामें एक भरोसा है कि आपु
आशुतोष शीघ्रही प्रसन्न होनेवाले कहावतहौ काहेते लोक को
विकल बिलोकि कै कालकूट विष को पान करि पचाइ डारे ताते
लोक सुखी भये तैसे पुरवासिन के अपराध करि जो क्रोध है
ताको पचाय लोगन को सुखी कीजै जो कलियुग विघ्न करै तौ
सजाइ पावै १६६ ॥

रचत विरंचि हरि पालत हरत हर तेरेही प्रसाद
जग अग जगपालिके । तोहि में विकास विश्व तोहिं
में विलास सब तोहिंमें समात मातु भूमिधरबालिके ॥
दीजै अवलम्ब जगदम्ब न विलम्ब कीजै करुणातरं-
गिनि कृपातरंगमालिके । रोष महामारी परितोष मह-
तारी दुनि देखिये दुखारी मुनिमानसमरालिके १६७॥

काहू समय महामारी परी ताके निवारिबे को अधिकारी जानि

र्वतीजी को आदि शक्ति मानि स्तुति करत कि भूमिधर हिमाचल-
रिकी बालिके हे पार्वतीजी मातु ! अग जग जो स्थावर जंगममय
जगत् है ताके पालनहारी हौ काहेते ब्रह्मा रचत उपजावत हरि
लन करत हर संहार करत सो आपही के प्रसाद ते भाव सबमें
शक्ति है सो आपही को रूप है औ विश्व जो संसार सो
म्हीं में विकास कहे उपजत तुम्हीं में विलास कहे पालन होत
म्हीं में समात कहे लय होत भाव जग को आधार त्रैगुणात्मक
या आपही को रूप है ताते हे जगदम्ब मातु ! जग को अवलंब
जै रक्षा करिबे में विलंब न कीजै काहेते करुणा कही जो पर
ख देखिकै आपु दुःखी है वाको दुःख हरिबे की इच्छा करै सो
रुणातरंगिनि कहे करुणा जल पूरित नदीहौ अरु कृपा कही निर्हेतु
या करै कि सबके रक्षक हमहीं हैं ऐसी कृपारूप तरंगनकी आपु माला
हौ भाव सदा कृपा उठत है ते तुम वर्त्तमान हौ तहां महामारी रोष
हे जग को खाये जात अरु जग की महतारी है आपुके परितोष
कहे संतोष बना है हे मुनिमानसमरालिके ! दुनी जो दुनिया ताको
दयादृष्टि ते देखिये तौ सब महादुखारी हैं ताते रक्षा कीजिये १६७ ॥

निपट बसेरे अघ अवगुण घनेरे नर नारिऊ अनेरे
जगदम्बा चेरी चेरे हैं । दारिद दुखारी देखि भूसुर
भिखारी भीरु लोभ मोह काम कोह कलिमल घेरे हैं ॥
लोकरीति राखि राम साखी वामदेव जानि जनकी
बिनति मानि मातु कहि मेरे हैं । महामारी महेशानि
महिमा की खानि मोद मंगल की राशि दास काशी-
वासी तेरे हैं १६८ ॥

यद्यपि पुर के बसेरे नर नारीऊ अनेरे कहे अनीति में रत हैं ताते अघ जो पाप अरु अवगुण घनेरे कही बहुत हैं तथापि हे जगदम्ब ! पुरवासी आपके चेरी चेरे हैं हे देवि ! सब लोग दरिद्र करिकै दुखारी हैं ते भूसुर ब्राह्मण अरु भिखारिन को देखिकै भीरु कहे डरत कि कछु मांगै न भाव धर्मते विमुख ताते काम क्रोध लोभ मोह कलिमल जो पाप इत्यादि सब घेरे हैं तिनकी रक्षा करनी आपु को उचित है देखिये श्रीरघुनाथजी लोकरीति राखे अर्थात् आपने पुरवासिन को ऐसे पाले कि जन्मभरि सुखी राखे यथा ॥ दैहिक दैविक भौतिक तापा । रामराज नहिं काहू व्यापा ॥ पुनः अन्तकाल परे धाम को साथै लैगये यहि बात के साखी वामदेव शिवजी हैं अस जानिये हे महेशानि ! आपु महिमा की खानि हौ अर्थात् अधमन को उद्धार करतहौ अरु मोद जो मानसी आनन्द है मंगल जो लोक उत्सव ताकी राशि हौ तौ काशीवासी तौ तेरे दास हैं ताते जनकी विनती मानि हे मातु ! महामारी सों कहिदीजै कि काशीवासी लोग मेरे दास हैं इनको न सतावो १६८ ॥

लोगन को पाप कैधौं सिद्ध सुरशाप कैधौं काल के प्रताप काशी तिहूंताप तई है । ऊंचे नीचे बीच के धनिक रंक राजा राय हठनि बजाय करि डीठि पीठि दई है ॥ देवता निहोरे महामारिन्हिसों कर जोरे भोरानाथ जानि भोरे आपनी सी ठई है । करुणानिधान हनुमान वीर बलवान यशराशि जहां तहां तैंहीं लूटि लई है १६९ ॥

पुरवासी लोगनको पाप उदय है कैधौं सिद्धनकी व देवतनकी शाप भई है कैधौं कलिकाल के प्रतापते काशीपुरी के वासी दैहिक दैविक भौतिकादि तीनिउ तापन करि तई कहे तप्त भये हैं काहेते ऊँचे जे ब्राह्मणादि नीचे जे शूद्रादि बीचके क्षत्री वैश्यादि धनिक साहूकारादिक गरीब राजा मण्डलेश्वर राय छोटे राजा इत्यादि हठकरि बजाय कहे खुलिकै जहां दृष्टि चाही तहां पीठि दई भाव दानादि धर्म ते विमुख भये ता अधर्म बल पाइ अरु भोरानाथ को भोरे कहे बौरहे जानिकै महामारी आपनीसी आपनी चाही बात ठई कहे ठानी है भाव प्रचण्ड है आपनो प्रताप फैलाये ताके निवारण हेतु देवनसों निहोरा किये कोऊ रक्षा न करिसक्यो अरु महामारिनसों करजोरे सोऊ क्षमा न भई ताते हे करुणानिधान वीर बलवान् श्री हनुमान्जी ! जहां दुर्घट काम काहूको बनावो न बनो तहां यशकी राशि तैंहीं लूटिलई है भाव सिन्धु नांघिबो सजीवनि आनिबो आदि तैसो काशीको रक्षा करि यहांभी यश लूटि लीजै एक समय काशीजी में महामारी परी आधा शहर मरिगयो तब गोसाईंजी सों पुकारे तब गोसाईंजी पार्वती शिवादिकी बिनती करे जब काहूने सहाय न कियो तब हनुमान्जी सों स्तुति करे तुरन्त बाधा मिटिगई १६९ ॥

शंकरशहर सर नारि नर वारिचर विकल औ महामारि महा मांजा भई है । उछरत उतरात हहरात मरिजात भभरि भगत जल थल मीचुमई है ॥ देव न दयाल महिपाल न कृपाल चित वाराणसी बाढ़त अनीति नित नई है । पाहि रघुराज पाहि कपिराज रामदूत रामहूकी बिगरी तैंहीं सुधारिलई है १७० ॥

आषाढ़ में प्रथम पानी बर्षि भूमि को विकार लै ताल में गये

ताके फेना में घाम लागे ते जहर तुल्य ह्वैजात ताको मांजा कहत ताके स्पर्श ते जलचर व्याकुलह्वै मरिजात सो कहत कि शंकरशहर काशी सोई सर कहे तड़ागहै तहां महामारी मांजा भई तामें पुरवासी नरनारि वारि कहे जल ताके चर मीनादिसम विकल भभरि घबरायकै भागत उछरत उतरात हहरि कहे हाय हाय करि मरिजात हैं काहेते जलहू थल मृत्युमयी ह्वै गई व थल जो भूमि सोई भूमि जल है सो मृत्युमयी ह्वैगई है काहे ते वाराणसी कहे काशीमें अनीति नित नई बढ़त जात है ताहीते देवता भी दयाल नहीं होत औ महिपाल जो राजा तेऊ कृपाल चित नहीं नित दण्डदायक हैं ताते हे रघुराज ! पाहि कहे आपुकी शरण हौं हे कपिराज श्री रामदूत श्रीहनुमान्जी ! आपुकी शरण हौं काहेते जहां श्री रघुनाथहूजीको काम बिगरो तहां तुमहीं सुधारि लई भाव श्री जानकीजीकी खबरि लाये सजीवनि लाये इत्यादि १७० ॥

एकतौ कराल कलिकाल शूलमूल तामें कोढ़में की खाजु सी शनीचरी है मीनकी। वेदधर्म दूर गये भूप चोर भूप भये साधु सिद्ध मानजान बिये पापपीनकी॥ दूबरेको दूसरो न द्वार राम दयाधाम रावरीई गति बल विभव विहीनकी। लागैगी पै लाज वा विराजमान बिरदहि महाराज आजु जो न देत दादिदीनकी १७१॥

एकतौ शूल कहे दुःख को मूल कलिकालही कराल है ताहूमें कोढ़में कीसी खाजु मीन राशिपै शनीचरी कहे शनीचरकी दशा मीन राशिपर जब होत तब महा उपद्रव होत यथा जातकाभरणे। भवेद्दशायां ननु भानुसूनोर्मीनोपयातस्य च मानवानाम् । नानापुरग्रामधनांगणाभ्यः सुखं तथोत्साहविहीनता च ॥ अथवा मीन

राशिपै शनीचर आयो है तहां जब कन्या मिथुन धनमीन इन राशिन पै शनीचर आवत तब महाउपद्रव राजनको नाश रुधिर ते भूमि पूरित यह मयूरचित्रमें नारदजीका वचन है यथा ॥ मिथुनस्त्रीधनुर्मीनराशौ मन्दो यदा भवेत् । तदा भूपा विनश्यन्ति पृथ्वी शोणितपूरिता ॥ तहां मीनपै शनीचर कहिबेते गणित करि यह सूचित होत कि सोरहसै पैंतिस प्रारम्भते छत्तिस सैंतिस कुछ दिन तक शनीचर मीनराशि पर रहाहै इतनहीं सम्बतन को यह ग्रन्थ बना है मानसरामायण के पीछे प्रथम यहै ग्रन्थ बनाये हैं सो कहत कि वेद को जो धर्म है सत्य शौच तप दानादिते सब लोक चालते दूरि गये अरु चोर जे हैं असत्य अपावनता हिंसादि तिनको राजा जो अधर्म है सोई राजा भयो भाव अधमको प्रचार भयो ताते साधु जे साधक जनहैं अरु सिद्धमान जनके उरमें पाप पीन कहे पुष्ट होबेको बिये कहे बीज होत भयो भाव अधर्म पापको बीज है तौ सुकृति करि दूबरे लोगन को दूसरो द्वार नहीं है हे श्रीरघुनाथजी ! दयाधाम योगादि बल अरु तपादि विभव करिकै हीननकी रावरेही गति है ताते हे महाराज ! जो आज दीननकी दादि नहीं देतेहौ तौ वह जो विराजमान आपु को विरदहै ताको निश्चय करिकै लाज लागैगी भाव विरद वर्णन करत लोग लजाइँगे याते दीननको दादि दीजै १७१ ॥

रामनाम मातु पितु स्वामि समरथ हितु आश राम नामको भरोसो रामनामको। प्रेम रामनामही सों नेम रामनामही को जानो न मरमपद दाहिनो न वामको॥ स्वारथ सकल परमारथ को रामनाम रामनामहीन तुलसी न काहू कामको। रामकी शपथ सरबस मेरे राम नाम कामधेनु कामतरु मोसे क्षीण छामको १७२ ॥

मेरे श्रीराम नामही माता पिता हैं श्रीराम नामही समर्थ स्वामी औ हितकर हैं सब मनोरथ पूर्ण होनेकी आश श्रीराम नामही की है सबसों रक्षा करबे को भरोसा श्रीराम नामही को है प्रेम प्रीति श्रीराम नामही में श्रीराम नामही जपिबे को नेम है दाहिन वाम कहे आस्तीक नास्तीक मारग में पद कहे चालिबे को मर्म कछु नहीं जानतहौं स्वारथ सकल भांति को लोक में और परमारथ कहे परलोक को श्रीराम नामही है गोसाईंजी कहत कि जो श्रीराम नाम करिकै हीन है सो काहू कामको नहीं है याते सर्वस मेरे श्रीराम नामही है श्रीरघुनाथजी की शपथ खाइके यह बात कहत हौं कैसो है श्रीराम नाम जो मोसे क्षीण कहे दूबरेन को छाम कहे हलके नीचन को कामधेनु कल्पवृक्ष समान है १७२ ॥

मारग मारि महीसुर मारि कुमारग कोटिक कै धन लीयो । शङ्कर कोप सों पापको दाम परीक्षित जाहिगो जारिकै हीयो ॥ काशीमें कंटक जेते भये ते गे पाइ अघायकै आपनो कीयो । आजु कि कालिह परों कि नरों जड़ जाहिंगे चाटि देवारि को दीयो १७३॥

जे कुमार्गीजन हैं ते मारग में राहगीरन को मारि और ब्राह्मणन को मारि और कोटिन भांति कुमारग करिकै जे धन लीन्हें इत्यादि पाप के कीन्हें दाम जो है धन सो शङ्कर के कोप करिकै परीक्षित कहे प्रसिद्ध उन कुमार्गिनको हियो जरायकै सब धन जाइगो भाव राजदण्ड चोरदण्ड अग्निदण्ड इत्यादिते हृदय तप्त सहित धन गयो काहेते जेते कंटक विघ्नकर्त्ता काशीजी में भये ते आपने कीन्हें जो पाप ताको फल दुःख अघाय पायकै गये कहे नाश भये ताही भांति वर्त्तमान में कुमार्गी हैं ते आजु व कालिह व परौं व नरौं भाव

थारिही दिनमें देवारी कैसो दिया चाटिकै जरिजाहिंगे यथा पावस में मशा डंशादि उपद्रवी जीव बाढ़े हैं तिनको वादा देवारी तक है जहां देवारी को दिया चाटे तहां हिमकी प्रबलता से नाश भये यहां पाप उदय होना देवारी को दीप है शङ्कर का कोप हिम है १७३ ॥

कुंकुम अङ्ग सुरङ्ग जितो मुखचन्द्रसों चन्द्रसों होड़ परी है । बोलत बोल समृद्धि चुवै अवलोकत शोच विषाद हरी है ॥ गौरी को गङ्ग विहंगिनि वेष कि मंजुल मूरति मोद भरी है । पेखि सप्रेम पयान समै सब शोच विमोचन क्षेमकरी है १७४ ॥

कबहूं यात्रा समय क्षेमकरी चील्ह देखिपरी है ताकी प्रशंसा करत हैं कि कुंकुम रोरी व केसरि व कुंकुम पीत रङ्ग सुगन्धित एक औषधी होत सो कहत कि क्षेमकरी ने आपने अंगके रंगते कुंकुमके सुन्दर रंग को जीतिलियो अरु मुखचन्द्रते अरु प्रसिद्ध चन्द्रमाते होड़ कहे बाद पड़ो भाव हम सुभग हैं अरु मधुर बोलके बोलतही समृद्धि जो धन समूह सो चुवत कहे बर्षत है अरु अवलोकत कहे दर्शनमात्र ते मन को शोच अरु विषाद कहे दुःख सो सब हरिलेत है ताते मंजुल कहे सुन्दर मूरति मोद कहे आनन्दभरी किधौं बिहङ्गिनि कहे पक्षिनि वेष किये श्रीगंगाजी हैं किधौं गौरी कहे पार्वतीजी हैं काहे ते पयान समय सहित प्रेम पेखि कहे देखिकै चलिये तो सब प्रकार को जो शोच है ताको विमोचन कहे छोड़ावनहारी क्षेमकरी है १७४ ॥

मङ्गलकी राशि परमारथकी खानि जानि विरंचि बनाई विधि केशव बसाई है । प्रलयहू काल राखी शूलपाणि शूलपर मीचवश नीच सोऊ चहत खसाई है ॥ छाँड़ि

क्षितिपाल जो परीक्षित भये कृपाल भलो कियो खलको निकाई सो नशाई है । पाहि हनुमान करुणानिधान राम पाहि काशी कामधेनु कलि कुहत कसाई है १७५ ॥

मंगल जो लोकउत्सव ताकी रासि ढेरी है औ परमार्थ जो परलोक मुक्ति ताकी खानि कहे उत्पत्ति की भूमिहै ऐसा जानि ब्रह्माने विशेषि रचिकै बनाई पुरी प्रसिद्ध करी ताको केशव भगवान्‌ने बसाय पालन कीन्हो ताको प्रलयहू काल में शूलपाणि शङ्करजी ने त्रिशूल पर राखी भाव रक्षा कीन्हीं भाव त्रिदेव पालित पुरी को नीच कलिकाल मृत्यु वशते खसाई चाहत भाव काशीजी को गिरावा चाहत स्वधर्महीन करो चाहत ताते दण्ड देबे योग्य है क्योंकि नीच डाट विना नहीं मानत है देखिये क्षितिपाल परीक्षित् ने कलिकाल को मारतते छांड़ि दियो कृपाल ह्वै खल कहे दुष्ट को भलो कियो तेहि निकाई को कलिकाल ने नशाइ दई भाव ऐसा प्रबन्ध बाँधि दियो कि ऋषिशापते मृत्यु वश भये ऐसा कलिकाल कसाई सम काशीरूप कामधेनु को वध करत ताते कुहत कहे कहरत है ताको हे श्रीरघुनाथजी करुणानिधान ! हे श्रीहनुमान्‌जी ! पाहि कहे आपुकी शरण हैं रक्षा कीजिये १७५ ॥

विरची विरञ्चिकी बसति विश्वनाथकी जो प्राणहूं ते प्यारीपुरी केशवकृपालकी । ज्योतिरूप लिङ्गमयी अगणित लिङ्गमयी मोक्ष बितरनि बिदरनि जगजाल की ॥ देवी देव देवसरि सिद्ध मुनिवर वास लोपति विलोकत कुलिपि भोंड़े भालकी । हा हा करै तुलसी दयानिधान रामऐसी काशीकीकदर्थना करालकलिकालकी १७६ ॥

विरञ्चि की विरची कहे बनाई विश्वनाथ महादेवकी पुरी बसी है वा विश्वनाथ को वासस्थान है औ केशव जो भगवान् कृपाल हैं तिनको प्राणहूंते अधिक प्यारी है पुनः पञ्चकोशान्तर्गत जो क्षेत्र है सो सूक्ष्म रूप ते ज्योतिर्लिंगमयी है स्थूलरूप ते विश्वेश्वरादि अनेकन लिंगमयी है भाव सब भूमि लिंगन सों पूर्ण है अरु मोक्ष बितरनि कहे मुक्ति देनहारी है औ जगजाल जो मोहादि जगत् प्रपञ्च ताकी बिदरनि कहे नाश करनहारी है । जहां अनेकन देवी अनेकन देवता देवसरि श्रीगंगाजी सिद्ध मुनि ऐसे वर कहे श्रेष्ठन को वासहै जाके विलोकत कहे दर्शनमात्र ते भोंड़े जे मैले जनन के भाल में कुलिपि कहे कुभाग्य की पाँति के अक्षरन को लोप करत भाव कुभाग्य मिटाय सुभाग्य लिखि देत ऐसी काशीपुरी की कदर्थना कहे दुर्दशा कराल कलिकाल ने कीन्ही है हे दयानिधान श्रीरघुनाथजी ! तुलसी हा हा कहे विनती करत है कि काशीजी की रक्षा कीजिये १७६ ॥

आश्रम बरण कलि विवश विकल भये निज निज मरयाद मोटरी सि डारदी । शङ्कर सरोष महामारि ही ते जानियत साहिब सरोष दुनी दिन दिन दारदी ॥ नारि नर आरत पुकारत सुनै न कोऊ काहू देवतनि मिलि मोटी मूठी मारदी । तुलसी सभीत पाल सुमिरे कृपाल राम समय सकरुणा सराहि सनकारदी १७७ ॥

आश्रम जो ब्रह्मचर्य गृहस्थ वानप्रस्थ संन्यास वर्ण जो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र ते सब कलियुग के विवश कामादि की प्रबलताते विकल है आपनी आपनी जो लोक वेद मर्यादा ताकी मोटरी शीश कैसो भार लोग सब डारि देते भये भाव आपने धर्म

कर्म की श्रद्धारहित भये ऐसा जानि परत कि लोगन की कुमारग चालते शंकरौजी सरोष हैं काहेते जानियत है कि महामारी प्रचण्ड परी ताते जो साहब शंकरहू सरोष भये तो दुनी कहे दुनियां दिन दिन प्रति दारदी कहे दरदबंदी काहे न होइ नर नारी सब आरत कहे दुखित ह्वै पुकार करत ताको कोऊ नहीं सुनत कि लोगन को दुख मिटावै का समुझि परत कि कोऊ देवतन मिलिकै मोटी मूठी कहे कराल जादू मारि दीन्ही है जब कोऊ सहायक न भयो तब सभीतन को पालनेवाले जो श्रीरघुनाथजी तिनको तुलसी सुमिरे तब कृपाल श्रीरघुनाथजी समय बिचारिनि कि अब कोऊ सहायक नहीं है तब आपनी करुणाकी सराहना करिकै भाव गाढ़े समयको सहायक हमारी करुणै है ऐसा कहि करुणाको सनकारि दीन्हीं भाव करुणा करि सबके कलेश हरे यहि कवित्त को अभिप्राय यह है कि श्रीरघुनाथजी के समान करुणानिधान दूसरो नहीं है १७७ ॥

कवित्त ॥ मेदुराभ्रभात्मश्याम पीतचैल विद्दुदाम मूर्ध्नि रत्नक्रीट कर्णिकारकेसभालहे । शर्दपूर्णचन्द्रमास्यबंकभ्रूवाम्बुजक्षग्रीववृषभांसपानिपानशायकोरखल्दहे ॥ गूढ़यत्रुन्यायतोरनाभित्रैतदुर्द्धरेखरोमराजिमुक्तदाम भानुजाप्रिया वहे । मध्यलपजानुजंघकोमलांघ्रचपारसिन्धुरूप कोशलेश बैजनाथ तं नमामहे १ पूर्व लखनऊ बंकी जीले ग्राम मानपुर पितुको धाम । अवध जन्मभू पास वास गुरु करुणासिंधु फकीरे राम ॥ उनइससै अड़तिस शुभ संवत भाद्रशुक्लपूर्ण व गुरुवार । कवितरत्नदीपिका यथामति गुरु करुणासों भई तयार २ ॥

इति श्रीरसिकलताश्रितकल्पद्रुमसियवल्लभपदशरणागत-
बैजनाथविरचिता कवितावलीरत्नदीपिका समाप्ता ।